Institute of Open and Distance Education

Faculty of Arts

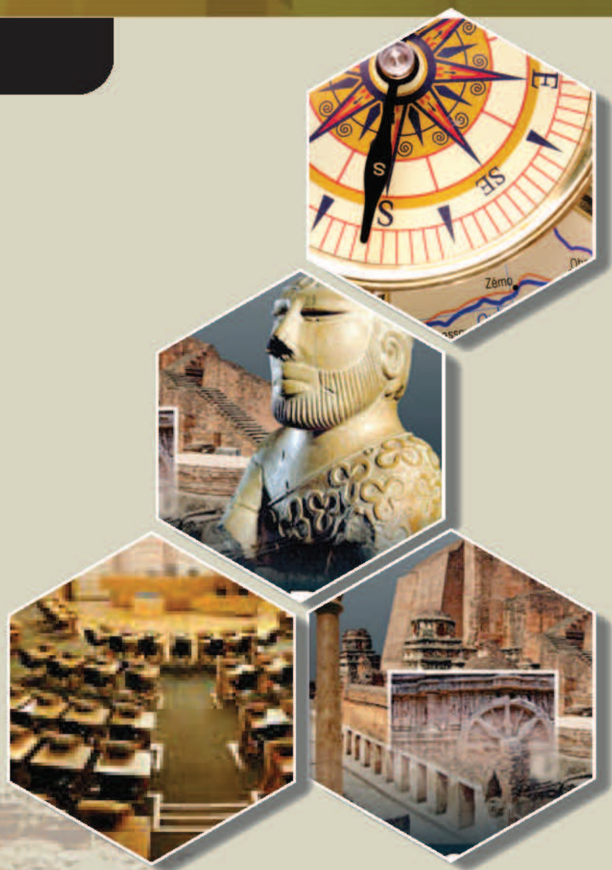

अनुवाद विज्ञान

2MAHIN4

DR. C.V. RAMAN UNIVERSITY

Chhattisgarh, Bilaspur

A STATUTORY UNIVERSITY UNDER SECTION 2(F) OF THE UGC ACT

अनुवाद विज्ञान

Dr. C.V. Raman University
Kargi Road, Kota, BILASPUR, (C. G.),
Ph. : +07753-253801, +07753-253872
E-mail : info@cvru.ac.in | Website : www.cvru.ac.in

2MAHIN4

अनुवाद विज्ञान

2MAHIN4, अनुवाद विज्ञान

Edition: March 2024

Compiled, reviewed and edited by Subject Expert team of University

1. Dr. Snehlata Nirmalkar

(Associate Professor, Dr. C. V. Raman University)

2. Dr. Radha Sharma

(Assistant Professor, Dr. C. V. Raman University)

3. Pragya Sharma (Net Qualify)

(Assistant Professor, Dr. C. V. Raman University)

Warning:

All rights reserved, No part of this publication may be reproduced or transmitted or utilized or stored in any form or by any means now known or hereinafter invented, electronic, digital or mechanical, including photocopying, scanning, recording or by any information storage or retrieval system, without prior written permission from the publisher.

Published by:

Dr. C.V. Raman University

Kargi Road, Kota, Bilaspur, (C. G.),

Ph. +07753-253801, 07753-253872

E-mail: info@cvru.ac.in

Website: www.cvru.ac.in

इकाई-एक

अनुवाद वस्तुत: जटिल भाषिक प्रक्रिया का परिणाम अथवा उसकी परिणति है। यह स्वयं मं प्रक्रिया न होकर, उस प्रक्रिया का फल है। अनुवाद की प्रक्रिया बहुस्तरीय है। उसका एक स्तर विज्ञान की तरह विश्लेषणात्मक है जो क्रमबद्ध विवेचन की अपेक्षा रखता है। उसका दूसरा स्तर संक्रमण का स्तर है जो शिल्प के अंतर्गत आता है तथा तीसरा स्तर पुनर्गठन अथवा अभिव्यक्ति का स्तर है जो कला के अंतर्गत परिगणित किया जा सकता है।

प्रयोजनमूलक हिन्दी के साथ-साथ वर्तमान में एक अत्यंत प्रभावशाली माध्यम के रूप में अनुवाद की महत्वपूर्ण भूमिका है। विश्वफलक पर तेजी से अविर्भूत होते ज्ञान विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के अनेकविध क्षेत्रों का फैलाव समस्त जगत में तीव्र गति से हो रहा है। ज्ञान-विज्ञान के उक्त सभी क्षेत्रों, देश-विदेशों की संस्कृति एवं देश के प्रशासन आदि को यथाशीघ्र समुचित ढंग से अभिव्यक्त देने में एक सहायक अनिवार्य तत्व के रूप में अनुवाद का महत्व स्वयंसिद्ध है। अनुवाद के माध्यम से ही प्रयोजनमूलक हिन्दी में विभिन्न देशी-विदेशी प्रगत भाषाओं का ज्ञान, देश-विदेश की संस्कृति, विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्रों से संबंधित ज्ञान, विश्व में प्रचलित विभिन्न भाषाओं की पारिभाषिक शब्दावली का आगमन एवं प्रचलन संभव हुआ है। इस तरह, प्रयोजनमूलक हिन्दी के रूप, ज्ञान-क्षेत्र, पारिभाषिक शब्द भंडार एवं भाषिक संरचना की विशिष्टता आदि की श्रीवृद्धि में अनुवाद की अहम् और अनिवार्य भूमिका बनी हुई है।

अनुवाद का शाब्दिक अर्थ है किसी के कहने के बाद कहना। किसी कथन का अनुवर्ती कथन, पुन: कथन या पुनरुक्ति। वर्तमान में एक भाषा में कही हुई बात को दूसरी भाषा में कहना अथवा बतलाना अनुवाद कहलाता है। अनुवाद एक ऐसी तकनीक है जिसका आविष्कार मनुष्य ने बहुभाषिक स्थिति की विडम्बनाओं से बचने हेतु किया था। अनुवाद का लक्ष्य भाषा के भाव-वैभव को ही नहीं वरन् उसकी उसकी तरह की व्यंजना को भी दूसरी भाषा में यथावत् रूपांतरित करना अनुवाद का लक्ष्य होता है। अनुवाद को 'सांस्कृतिक सेतु' की संज्ञा दी जाती है। अनुवाद में मुख्य रूप से निम्न बिन्दुओं को आधार बनाया जाता है-

1. अनुवाद में मूल-कृति के विचारों का पूर्ण अंतरण होना चाहिए।
2. लेखन शैली तथा विधि लगभग वही होना चाहिए जो मूल-कृति की हो।
3. अनुवाद में मूल-कृति के समस्त गुण तथा सहजता होनी चाहिए।

'अनुवाद प्राय: उतना ही प्राचीन है जितना मूल लेखन तथा इसका इतिहास भी उतना ही भव्य एवं जटिल है, जितना साहित्य की किसी दूसरी भाषा का।'

अनुवाद से अभिप्राय एक भाषा की सामग्री को दूसरी भाषा में पेश करना है। अनुवाद एक प्रकार का रिक्रियेशन अर्थात् अनुरचना है जिसके द्वारा एक भाषा की पाठ-सामग्री दूसरी भाषा में प्रतिस्थापित की जाती है।

आजकल अनुवाद शब्द अंग्रेजी के ट्रांसलेशन के पर्याय के रूप में प्रतिष्ठित है। अंग्रेजी कोश के अनुसार ट्रांसलेशन का सीधा अर्थ है-एक भाषा के पाठ को दूसरी भाषा में व्यक्त करना। इस संदर्भ में अंग्रेजी के प्रसिद्ध भाषाविद् जे.सी. केटफर्ड के अनुसार "अनुवाद एक भाषा (स्रोत भाषा) की मूल पाठ-सामग्री का दूसरी भाषा (लक्ष्य भाषा) में समानार्थक (इक्विवेलेंट) मूल पाठ सामग्री का स्थानापन्न है।"

इस तरह अनुवाद में तीन बातों का ध्यान रखना जरूरी है-

1. पाठ-सामग्री, 2. समतुल्य/समानार्थक, 3. पुनर्स्थापना

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर अनुवाद को निम्नवत् तीन रूपों के अंतर्गत रखा जा सकता है– 1. शाब्दिक अनुवाद, 2. भावानुवाद, 3. पर्याय के आधार पर अनुवाद

अनुवाद के उद्देश्य

अनुवाद के मुख्यत: तीन उद्देश्य हैं-

1. *दूसरी भाषा के साहित्य से अपनी भाषा के साहित्य को समृद्ध करना।*
2. *दूसरी भाषाओं की शैलियों, मुहावरों, दार्शनिक तथ्यों, वैज्ञानिक तथा तकनीकी ज्ञान की प्राप्ति।*
3. *विचार-विनिमय*

स्रोत भाषा तथा लक्ष्य भाषा- वह भाषा जिसमें कथित बात को दूसरी भाषा में अनूदित किया जाता है-स्रोत भाषा कहलाती है एवं वह भाषा जिसमें अनुवाद किया जाता है, वह लक्ष्य भाषा कही जाती है।

अनुवादक

अनुवाद करने वाले को 'अनुवादक' कहा जाता है। अनुवादक के लिए स्रोत भाषा तथा लक्ष्य भाषा का अच्छा ज्ञान होना अनिवार्य है। प्रत्येक भाषा की अपनी संरचना होती है। इन संरचनाओं के प्रयोग के विशेष परिवेश तथा अपने मुहावरे होते हैं। अत: अनुवाद को स्रोत भाषा एवं लक्ष्य भाषा से इनकी संरचना, परिवेश तथा मुहावरों के साथ परिचित होना जरूरी है।

कोई भी अनुवादक किसी पाठ को पूरी तरह समझे बगैर उसका अनुवाद नहीं कर सकता। कोश देखकर एक भाषा के शब्दों के स्थान पर दूसरी भाषा के शब्द रख देना अनुवाद नहीं है। अनुवाद करने में कोश एक महत्वपूर्ण सहायक उपादान है पर विषय की समझ तथा चिंतन की तर्कशक्ति के अभाव में कोश भी सहायक नहीं हो सकता।

वस्तुत: अनुवाद में स्रोत भाषा के ऐसे कई संदर्भों को भी पहचानने तथा लक्ष्य भाषा में रूपांतरित करने की जरूरत होती है जो लक्ष्य भाषा में नहीं होते। यह देखा गया है कि कभी-कभी अनुवादक स्रोत भाषा के कथन को लक्ष्य भाषा में पेश करते हुए, मूल कथ्य तथा अनुवाद में समानता लाने के अति उत्साह में ऐसे प्रयोग भी कर देता है जो लक्ष्य भाषा की प्रकृति एवं सांस्कृतिक परंपरा से मेल नहीं खाते। ऐसे अनुवाद अस्वाभाविक लगते हैं, हास्यास्पद भी प्रतीत होते हैं।

अत: अनुवादक को-

1. *स्रोत तथा लक्ष्य भाषा की प्रकृति एवं परिवेश और*
2. *उनकी सांस्कृतिक-ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से पूर्णत: परिचित होना चाहिए।*

अच्छे अनुवाद की विशेषताएं तथा अनुवाद प्रक्रिया

अच्छे अनुवाद में अभिव्यक्ति सुबोध प्रांजल एवं प्रवाहमय होती है। साथ ही प्रामाणिकता के लिए शाब्दिक तथा वास्तविक परिशुद्धता भी होना जरूरी है। जिस अनुवाद में स्रोत भाषा में कथित अभिव्यक्ति ज्यों की त्यों लक्ष्य भाषा में आ जाये, वह उत्तम कोटि का अनुवाद होता है।

अच्छे अनुवाद में यह भी प्रयास किया जाना चाहिए कि मूल रचना की शैली सुरक्षित रहे। मूल रचना की शैली सुरक्षित रखने का अभिप्राय यह नहीं है कि सिर्फ शाब्दिक अनुवाद कर दिया

जाये। अनुवाद की भाषा स्रोत भाषा की प्रकृति के अनुरूप हो। अगर स्रोत भाषा में कोई मुहावरा तो उस मुहावरे की प्रकृति से मिलता हुआ मुहावरा लक्ष्य भाषा अनुवाद में भी प्रयुक्त किया जाना चाहिए। इससे स्वाभाविक प्रवाह बना रहता है।

अच्छे अनुवाद की भाषा समझ में आने योग्य तथा सुबोध हो। भाषा के सौंदर्य का निर्वाह करते हुए ही अनुवाद सामग्री के विचार तथा भावों को सुरक्षित रखना अपेक्षित है।

अत: अच्छे अनुवाद हेतु जरूरी है कि अनुवादक को-

1. *अनुवाद की जाने वाली सामग्री की विषय वस्तु का अच्छा ज्ञान हो, सामग्री की ज्ञानात्मक चेतना हो,*
2. *स्रोत भाषा तथा लक्ष्य भाषा पर पूरा अधिकार हो, दोनों भाषाओं की संरचनात्मक बुनावट, पदबंध प्रयोग, वाक्य गठन आदि की पूरी समझ हो।*

ऐसा होने पर वह स्रोत भाषा से लक्ष्य भाषा में सहज तथा प्रवाहमय अनुवाद कर सकेगा।

प्रारंभ में विज्ञान तथा वाणिज्य की अंग्रेजी पुस्तकों के जो अनुवाद किये गये थे वे स्रोत भाषा अंग्रेजी में लिखी गई सामग्री से भी कठिन थे। अनुवादकों ने हिन्दी भाषा की प्रकृति का ध्यान नहीं रखा तथा वाक्य विन्यास इतना जटिल हो गया कि अंग्रेजी में लिखी सामग्री एक बार भले ही समझ में आ जाये लेकिन हिन्दी में अनूदित सामग्री को समझना कठिन था। अनुवाद प्रक्रिया की मूलभूत समस्या लक्ष्य भाषा में अनुवाद के लिए समानार्थी खोजने की है। अत: स्रोत भाषा की पाठ-सामग्री को पूरी तरह समझे बगैर अनुवादक लक्ष्य भाषा के समानार्थी शब्दों के द्वारा उसे प्रतिस्थापित नहीं कर सकता। साथ ही लक्ष्य भाषा के वाक्यों एवं संरचनात्मक तत्वों को भी अत्यंत सावधानीपूर्वक प्रयुक्त करना चाहिए। एक शब्द कई संदर्भों में प्रयुक्त होकर अनेक अर्थ देता है। अत: मूल पाठ के संदर्भ तथा प्रयोग परिवेश को समझकर ही समानार्थी शब्दों का चयन किया जाना चाहिए। हर भाषा की अभिव्यक्ति का अपना एक विशेष मुहावरा होता है। इसका लक्ष्य भाषा में अनुवाद कठिन होता है। इसलिए इसका अनुवाद लक्ष्य भाषा की प्रकृति को ध्यान में रखकर करना चाहिए। अनुवाद करते समय सांस्कृतिक परंपराओं का ध्यान भी रखा जाना चाहिए। वाक्य में पदों का अनुक्रम भी लक्ष्य भाषा की अनुक्रम-व्यवस्था के अनुरूप होना चाहिए। लक्ष्य भाषा में स्रोत भाषा से अनुवाद करते समय शब्दों के लिंग, वचन तथा व्याकरणिक रूपों की संगति को ध्यान में रखना चाहिए। वाक्यांश तथा लोकोक्तियों के अनुवाद से लक्ष्य भाषा को अस्पष्ट और अव्यवस्थित नहीं बनाना चाहिए।

अनुवाद ऐसा होना चाहिए कि वह यांत्रिक अथवा निर्जीव न लगे। अनुवाद प्रक्रिया के अंतर्गत व्यावहारिक ज्ञान का होना भी जरूरी है।

उदाहरण

(अ) स्रोत भाषा अंग्रेजी

The central core of Gandhiji's teaching was meant not for his country or his people alone but for all mankind and is valid not only for today but for all time. He wanted all men to be free so that they could grow unhampered into full self realisation. He wanted to abolish the exploitation and submission to it are a sin not only against society but against the moral law, the law of out being. The means, to be compatible with this end therefore, he said, have to be purely moral, namely,

unadulterated truth and non-violence. He had been invited by many foreigners to visit their countries and deliver his message to them directly but he declined to accept such invitations as, he said, he must make good what he claimed for Truth and Ahimsa in his own country before he could launch on the gigantic task of winning or rather converting the world. With the attainment of freedom by India, by following his method, though in a limited way and in spite of all the imperfections in its practice, the condition precedent for taking his message to other countries was to a certain extent fulfilled. And although the partition had caused wounds and raised problems which claimed all his time and energy, he might have been able to turn his attention to this larger question even in the midst of his distractions. But providence had ordained otherwise. May some individual or nation arise and carry forward the effort launched by him till the experiment is completed, the work finished and the objective achieved!

लक्ष्य-भाषा हिन्दी

गाँधीजी की शिक्षा का मर्म केवल उनके देश भारत या यहाँ की जनता के लिए ही सीमित नहीं था। वह सारी मानव-जाति के लिए था तथा वह सिर्फ वर्तमान काल के लिए ही नहीं, परंतु त्रिकाल के लिए सत्य है। वे चाहते थे कि सारे मानव स्वतंत्र हों जिससे वे अपना अबाधित मनुष्य द्वारा होने वाला सभी तरह का शोषण मिटा देना चाहते थे; क्योंकि शोषण करना तथा शोषण का शिकार होना दोनों ही पाप हैं-न सिर्फ समाज के प्रति वरन् नैतिक नियम के प्रति भी, हमारे जीवन के नियम के प्रति भी इसलिए उनका कहना था कि इस उद्देश्य के अनुरूप ही साधन भी सर्वथा नैतिक अर्थात् विशुद्ध सत्य तथा अहिंसा पर आधारित होने चाहिए। कई विदेशियों ने अपने देशों में गाँधीजी को बुलाया था, ताकि वे अपना संदेश उन्हें स्वयं दे सकें, लेकिन गाँधीजी ने ये निमंत्रण स्वीकार नहीं किये। उन्होंने कहा कि सत्य तथा अहिंसा के विषय में उनका जो दावा है उसे पहले उन्हें अपने ही देश में पूरा करना चाहिए; उसके बाद ही वे संसार का हृदय जीतने अथवा उसके विचार बदलने का भगीरथ कार्य हाथ में ले सकते हैं। सीमित रूप में ही सही तथा पालन में अनेक अपूर्णतायें रहने के बावजूद भी उनकी अहिंसक कार्य-पद्धति का अनुसरण करके जब भारत ने स्वतंत्रता प्राप्त कर ली, तब किसी हद तक दूसरे देशों में उनका संदेश ले जाने की वह पूर्व शर्त पूरी हो गई, तथा यद्यपि देश के विभाजन के कारण ऐसे आघात लगे एवं ऐसी समस्याएं पैदा हुईं जिन पर उन्हें अपना सारा समय और सारी शक्ति लगानी पड़ी, फिर भी वे अपनी व्यस्तताओं के बीच भी इस विशाल और व्यापक प्रश्न की ओर ध्यान देने की क्षमता रखते थे, परंतु विधाता को कुछ और ही स्वीकार था। भगवान करे कोई व्यक्ति या राष्ट्र ऐसा आगे आये, जो गाँधीजी के आरंभ किये हुए प्रयास को उस समय तक जारी रखे जब तक उनका प्रयोग पूरा न हो जाये, कार्य समाप्त न हो जाये तथा उद्देश्य सिद्ध न हो जाये।

(ब) स्रोत भाषा हिन्दी

आदर्शवादियों को आम तौर पर गगन-विहारी, अव्यावहारिक समझा जाता है। पर गाँधीजी का आदर्शवाद गगन-विहार करने जैसा नहीं था। उनका यह दावा था तथा उसे उन्होंने सिद्ध कर दिखाया था कि वे व्यावहारिक आदर्शवादी थे। उन्होंने दिखा दिया कि भलाई को परिणामकारी कैसे

बनाया जा सकता है। अपने सत्य के आग्रह तथा पूर्ण पालन से उन्हें वास्तविकता पर पूरा नियंत्रण प्राप्त हो गया था एवं मानव-स्वभाव का अद्वितीय ज्ञान प्राप्त हो गया था। उसकी शक्तियों तथा उसकी दुर्बलता को जानने के कारण वे अचूक अंतर्ज्ञान से अपने अस्त्र चुन सकते थे एवं मिट्टी से शूरवीरों को जन्म दे सकते थे। शायद हमारी जानकारी में अन्य कोई व्यक्ति गाँधी जी की तरह इतने विभिन्न तरह के मनुष्यों एवं प्रतिभाशाली व्यक्तियों को अपने चारों तरफ इकट्ठा करने या उन्हें एक साथ रखने में समर्थन नहीं हुआ। पंडित नेहरू ने अपनी अनोखी शैली में लिखा है, "हमारा एक-दूसरे से सर्वथा भिन्न लोगों का जमघट था। हमारी पृष्ठभूमियाँ, हमारी जीवन-प्रणालियाँ तथा हमारी विचारधारायें सब कुछ भिन्न थीं, लेकिन हमने एक सामान्य उद्देश्य की पूर्ति के लिए ऐसे नेता के साथ अपना विकास किया, जिसे (हम) अपने विभिन्न दृष्टिकोणों से एक महान् और भव्य विभूति समझते थे।"

लक्ष्य-भाषा अंग्रेजी

Idealists are generally classed as visionaries, impractical people. Gandhiji's idealism was not Utopian. Hewas no "ineffective angel beating his luminous wings in the void". He claimed and proved himself to be a practical idealist. He showed how goodness could be made effective. His insistence on truth and full practice thereof gave him a firm hold of reality and endowed him with an unrivalled knowledge of human nature-its potentialities as well as its weaknesses-which enabled him to choose his instruments with an unerring instinct and make heroes out of clay. Perhaps no other person we know, was able to draw round him men and talents of such diverse types as Gandhiji, or to hold them together as a team. "We were an odd assortment" Pandit Nehru has recorded in his inimitable style "very different from each other; different in our back ground, ways of life and ways of thinking but....we....free in the service of a common cause, with a leader to whom ....(we) looked up .... from our different viewpoints, as a great and magnificent personality."

अनुवाद के स्वरूप

भाषाविद् नायडा के अनुसार अनुवाद के तीन स्वरूप हैं—

(1) शाब्दिक अनुवाद, (2) भाषानुवाद, (3) पर्याय के आधार पर अनुवाद।

1. **शाब्दिक अनुवाद-** एक भाषा के शब्द को दूसरी भाषा के शब्द से बदल देना मात्र ही इसके अन्तर्गत नहीं आता वरन् स्रोत भाषा के व्याकरणिक रूप के स्थान पर दूसरी (लक्ष्य) भाषा के व्याकरणिक रूप को भी रख दिया जाता है। मूल स्रोत भाषा तथा लक्ष्य भाषा/भाषाओं में समानुपाती सम्बन्ध होता है। पारिभाषिक शब्दावली के क्षेत्र में तो 'शाब्दिक अनुवाद' का सिद्धान्त ही विशेषत: लागू होता है। अनुवाद की पहली आवश्यकता है : उचित शब्द-भण्डार का निर्माण और संग्रह। जिन देशों में वैज्ञानिक शब्द-भण्डार की परम्परा विद्यमान नहीं है और विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी दोनों का विकास दूसरी भाषा के माध्यम से हुआ है वहाँ तो मात्र यही कोशिश है कि विदेशी भाषा के शब्दों को ही यत्किंचित् परिवर्तन या संशोधन के साथ स्वीकार कर लिया जाए या उन्हें ज्यों का त्यों गृहीत कर लिया जाए। अन्तर्राष्ट्रीय शब्दावली को स्वीकार करना ज्ञान-क्षेत्र

की पहली आवश्यकता है। समस्या मात्र इस शब्दावली के लिप्यन्तरण की रह जाती है। विशुद्धतावादी प्रत्येक शब्द को अपनी भाषा में गढ़ लेना चाहते हैं। शब्द गढ़ने की भी विशेष प्रक्रिया है। अंग्रेजी शब्द 'प्रेशर' के लिए हिन्दी में 'निपीड' लिया जाए अथवा 'दाब'? बोधगम्यता की दृष्टि से दाब लेना ही उचित होगा। इसके ठीक विपरीत विशुद्धतावादी दृष्टिकोण से निर्मित शब्दावली से किया गया। विदेशी भाषा की सामग्री का अनुवाद क्लिष्ट, जटिल और अटपटा बन जाता है। शब्दानुवाद से भाषा का स्वरूप अटपटा तथा बोझिल हो जाता है।

शाब्दिक अनुवाद वाक्य/उपवाक्य/पदबन्ध/शब्द के अनुक्रम में होता है और कभी इसका विपर्यय सम्भव है। उदाहरणार्थ—

"As provided in the presidential order referred to in para I above".

(ऊपर अनुच्छेद-1 में निर्दिष्ट राष्ट्रपति के आदेश से किए गए प्रावधान के अनुसार) शाब्दिक अनुवाद करने से कभी-कभी हास्यास्पद स्थिति भी उत्पन्न हो जाती है-

वाक्य	**अनुवाद**	**होना चाहिए**
Prime Minister Rajiv Gandhi will release pigeons to mark the occasion	प्रधानमंत्री राजीव गाँधी इस अवसर पर कबूतरों का विमोचन करेंगे।	प्रधानमंत्री राजीव गाँधी कबूतर उड़ाकर उद्घाटन करेंगे

यहाँ इस प्रकार के कुछ और उदाहरण दिये जा रहे हैं-

शब्द	**अनूदित किया गया पद**	**सही/उपयुक्त पद**
Blind alley	अंधी गली	बन्द गली
Properly exploited	उचित शोषण	उचित दोहन
Gradual extinction	शनैः-शनैः पतन	धीरे-धीरे लोप
Lease of life	जीवन का पट्टा	जीवन
Provision of production	उत्पादन का उपबन्ध	उत्पादन की व्यवस्था
Traded abuses	गालियों का व्यापार करने लगा	गालियाँ बकने लगा
Two meals a day	एक दिन में दो भोजन	दो वक्त की रोटी

देखा गया है कि कुछ शब्दों के कालान्तर में 'अनुवाद' निश्चित हुए-

Railway train	कल की गाड़ी	रेलगाड़ी
Engine	धुँआकस इंजन	
Delta	त्रिकोणमण्डल	डेल्टा
Member	सभ्य	सदस्य
Critic	गुणदोष विवेचक	आलोचक

कुछ 'शब्दानुवाद' प्रारम्भ होकर चलते ही रहते हैं-

Debate	वाद-विवाद	(सन् 1870-77 के बीच)
Comedy	सुखान्त	(")
Urgent	जरूरी	(")
Column	स्तम्भ	(सन् 1900 के आसपास)
Exhibition	प्रदर्शनी	(")

ऐसा नहीं है कि इस प्रक्रिया को हिन्दी ही अपना रही है। यह सर्वमान्य सिद्धान्त है। इस प्रक्रिया से हजारों शब्द/पद अंग्रेजी में चल गये हैं। भारतीय भाषाओं के सांस्कृति/लौकिक शब्द सीधे अथवा अनुवाद के माध्यम से अंग्रेजी में चले गये हैं-

हिन्दी शब्द	**अंग्रेजी में अनुवाद**
द्विज	Twice born
पत्तल	Dining leaf
तिलक	Forehead mark
घुँघरू	Ankle bell
गोधूलि	Cowdust hour
रथ यात्रा	Car festival
यज्ञोपवीत	Sacred thread

जिस प्रकार से हिन्दी में संकर शब्दावली आई, उसी प्रकार अंग्रेजी में भी गई, जैसे-कुंकुम मार्क, लाठी-चार्ज, पुलिसवाला, अहिंसा-सोल्जर आदि।

(2) **भावानुवाद-** शब्द तो केवल भावों के वाहक होते हैं। वह तो किसी वस्तुविशेष या भावविशेष को स्पष्ट करने के लिए चिह्न मात्र हैं। ऐसी स्थिति में अनुवाद करते समय उस शब्द-विशेष के अस्तित्व से अधिक उसमें निहित भाव को ध्यान में रखना चाहिए। यह भी सोचना होगा कि मूल भाषा में कहने वाला अमुक शब्द के स्थान पर और कौनसा शब्द प्रयोग में ला सकता था? सतर्क रहना चाहिए कि भावानुवाद करते समय, अनुवाद करने के स्थान पर कहीं व्यक्तिगत दृष्टि से उस शब्द/वाक्य का विश्लेषण तो नहीं किया जा रहा है।

भावानुवाद करते समय चतुर तथा सुयोग्य अनुवादक दूसरी भाषा के शब्दों/अभिव्यंजनाओं को अपनी भाषा में जो रूप प्रदान करता है उससे लक्ष्य भाषा में निखार आता है और अभिव्यक्ति की क्षमता बढ़ती है। कभी मूल भाषा में प्रयुक्त मात्र एक शब्द की भिन्न-भिन्न अर्थ-व्यंजनाओं का लक्ष्य भाषा में भिन्न-भिन्न अनुवाद हो सकता है; जैसे-अंग्रेजी शब्द 'चार्ज' का निम्नलिखित अर्थच्छटाओं के अनुसार हिन्दी में अनुवाद इस प्रकार करना होगा-

भार, आरोप, प्रभार, भारसाधन, भरण, भार डालना, आरोपित करना, प्रभारित करना तथा (बैटरी) चार्ज करना।

भाव के अनुसार मूल भाषा की क्रिया लक्ष्य भाषा की क्रिया में बदलना; जैसे-

केन्सिल	-	रद्द करना, निरस्त करना,
रिपील	-	निरसन करना।

जब कोई नया शब्द/पद मूल भाषा से लक्ष्य भाषा में आता है तो समय-समय पर उसके रूप बदलते रहते हैं; जैसे-ऑफिसर ऑन स्पेशल ड्यूटी हिन्दी में कई रूपों में आया-कर्तव्यारूढ़ अधिकारी, विशेष कर्तव्यस्थ अधिकारी। इन अटपटे शब्दानुवादों के स्थान पर भावानुवाद विशेष कार्य अधिकारी स्थिर हो गया।

भावानुवाद करते समय अनुवादक अपनी मौलिकता का सदुपयोग करे तो अनूदित कृति में मूल जैसा आनन्द आ जाता है और रोचकता भी बनी रहती है। बाबू श्यामसुन्दरदास, आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी तथा आचार्य रामचन्द्र शुक्ल द्वारा किये गये अनुवाद इस प्रवृत्ति के अच्छे उदाहरण हैं। कभी-कभी अनुवादक अपनी विचार पद्धति तथा भाव सम्पदा से पाठक को अधिक प्रभावित करने के चक्कर में मूल से हट जाता है। भावानुवाद छायानुवाद नहीं है, इस बात को हमेशा याद रखना चाहिए। कार्यालयीन अनुवाद के अतिरिक्त साहित्यिक रचनाओं के अनुवाद में यह प्रक्रिया काफी उपयोगी है।

शब्द केवल भाव के वाहक होते हैं। वे किसी वस्तुविशेष या भावविशेष को स्पष्ट करने के लिए संकेत मात्र हैं। अनुवाद करते समय उस शब्द के अस्तित्व से अधिक उस भाव का ध्यान रखना चाहिए जो उसमें निहित है। भावानुवाद करते समय अनुवाद के स्थान पर अनुवादक व्यक्तिगत दृष्टि से उसका विश्लेषण न करने लगे। ऐसा करने से शब्द का अस्तित्व ही समूल नष्ट हो जायेगा। अतएव भावानुवाद करते समय भी अनुवादक को मूल के निकटतम ही रहना चाहिए। अंग्रेजी के किसी शब्द का हिन्दी में अनुवाद करते समय यह सोचना होगा कि उस भाषा में कहने/लिखने वाले व्यक्ति ने उस शब्द के माध्यम से कौनसा भाव व्यक्त किया है?

'ब्लैक' का शाब्दिक अनुवाद 'काला' है, पर भावानुसार तथा प्रसंग का ध्यान रखते हुए निम्नलिखित स्थानों पर उचित अनुवाद भिन्न-भिन्न रूप में होगा-

Black-board	=	श्यामपट्ट
Black market	=	चोर बाजार
Black out	=	अंधेरा

अंग्रेजी शब्द 'गोल्डेन' का भावानुसार अनुवाद भिन्न-भिन्न होगा-

Golden chance	=	सुनहरा अवसर
Golden period	=	स्वर्णयुग/सतयुग
Golden jublee	=	स्वर्ण जयन्ती
Golden success	=	शानदार सफलता

'ट्यूब' जो एक प्रकार की रेलगाड़ी है, उसका भावानुवाद 'भूमिगत गाड़ी' होगा। विधान-सभा/परिषद् आदि के सन्दर्भ में 'सेकण्ड' का अनुवाद 'अनुमोदन' किया जायेगा। 'एक्टिव' के लिए 'सक्रिय' या 'फुर्तीला' ठीक रहेगा, पर विशेषण का प्रयोग भावानुसार होगा-

Active debt	=	चालू ऋण
Active habit	=	कर्मण्य स्वभाव

Active help	=	सक्रिय सहायता
Active step	=	क्रियात्मक पग

'ब्रेकिंग द आइस' का अनुवाद भारत की प्रकृति के अनुकूल 'मौन भंग करना' किया जाना चाहिए। 'किलिंग टू बर्डस विद वन स्टोन' से इंग्लैण्ड की हिंसात्मक प्रवृत्ति दृष्टिगत होती है। भारत जैसे देश में उसके स्थान पर 'एक पंथ दो काज' का प्रयोग करना उचित होगा।

यहाँ 'शब्दानुवाद' और 'भावानुवाद' के परस्पर भेद को कुछ उदाहरणों से स्पष्ट किया जा रहा है-

	शब्दानुवाद	भावानुवाद
Precious stone	कीमती पत्थर	जवाहरात
Oilseeds	तेल के बीज	तिलहन
House breaker	मकान तोड़ने वाला	सेंध लगाने वाला
Hunger strike	भूख हड़ताल	अनशन
White ant	सफेद चींटी	दीमक

इस प्रकार हम देखते हैं कि 'अनुवाद' में भावानुसार अनुवाद का विशेष महत्त्व है।

पर्याय के आधार पर अनुवाद- जिस प्रकार वाक्य किसी अनुच्छेद का सहज अंग होता है, उसी प्रकार वाक्य में भी प्रत्येक 'शब्द' का महत्त्व उसमें निहित अर्थ से है। मूल लेखक के पास पर्याप्त पर्याय होते हैं जिनमें से छाँटकर वह उपयुक्त शब्द रखने का प्रयास करता है। अनुवादक के पास भी अपनी भाषा में पर्याय हो सकते हैं जिनमें से उसे चुनाव करना होता है। प्रत्येक भाषा में अनेक ऐसे शब्द होते हैं जिनको प्राय: पर्याय समझ लिया जाता है, फिर भारत में तो कोश बनाने की कला की पृष्ठभूमि में ढूँढ़-ढूँढ़ कर पर्याय रखने की परम्परा रही है जो मध्यकाल में 'नाममाला' के रूप में विकसित हुई। कृति में प्रयुक्त शब्द की मूल आत्मा को समझकर अनुवादक को उपयुक्त शब्द चुनना चाहिए। मूलकृति में प्रयुक्त शब्द के भाव को दूसरी भाषा में सम्प्रेषित करने की भरपूर कला अनुवादक में होनी चाहिए और उस भाषा में प्राप्त शब्दकोषों में सूक्ष्मातिसूक्ष्म अर्थच्छटाओं का विवेचन होना चाहिए। प्रयोग में सूक्ष्मभेदों का ज्ञान प्रयोगकर्त्ता को होना चाहिए, क्योंकि शब्द की वास्तविक शक्ति प्रयोग में ही निहित होती है।

पर्यायों में निकटता तो होती है पर अर्थ की समानता कम होती है; जैसे-कोमल, मृदु, मृदुल, मुलायम, नाजुक, नर्म (नरम), सुकुमार सभी का भाव एक समान होते हुए भी प्रयोग के अर्थ में भिन्नता आ जायेगी। प्रखर, तीक्ष्ण तथा कुशाग्र बुद्धि के भिन्न-भिन्न भावों में जो प्रयोग हिन्दी में मिलते हैं, वे आवश्यक नहीं कि अन्य भाषा में हों। 'भय' अर्थ के विचार से बहुत विस्तृत आयाम लिए हुए होता है। किसी अनिष्टकारी बात या संकट की सम्भावना होने से मन में जो विकलता होती है और उसके फलस्वरूप उस अनिष्ट/संकट से बच निकलने की इच्छा होती है वही 'भय' है। साहस छूट जाता है और संकट का सामना कैसे करें? यह प्रबल इच्छा होती है। 'भीति' स्त्रीलिंग में प्रयोग में आता है। पर हिन्दी में इसका प्रयोग कम है। 'डर' भय का पर्याय होते हुए भी हल्कापन लिये हुए है। चलती सहज भाषा में इसके प्रयोग में गम्भीरता नहीं झलकती। जरा-सी बात से डर जाना अच्छा नहीं समझा जाता। 'भीषिका' विशेषण रूप में स्त्रीलिंग का प्रयोग है जिसमें और अधिक तीव्रता

लाने के लिए 'विभीषिका' बना लिया जाता है। आजकल इन शब्दों को भी पीछे छोड़ गया है-'आतंक', जिससे अचानक भारी संकट प्रतिभासित होता है। इतना अधिक भय कि कुछ करते-धरते नहीं सूझता।

'आतंक' का प्रभाव हमारी शारीरिक तथा मानसिक दोनों प्रकार की शक्तियों पर पड़ता है।

प्रयोग तथा सन्दर्भ के अर्थ निश्चित होते हैं। 'अर्थ संकेत' पर भारतीय परम्परा में पर्याप्त विवेचन मिलता है। अर्थतत्त्व में शब्द-शक्तियों-अभिधा, लक्षणा, व्यंजना का विशेष महत्त्व है। स्थानभेद, प्रसंग, स्रोत, देशकाल, प्रकरण आदि से अर्थ बदलते हैं। साहचर्य अर्थ को सुनिश्चित करने में सहायक सिद्ध होता है। एक ही धातु से निर्मित अनेक शब्दों का अर्थभेद निश्चित करने में व्युत्पत्ति-शास्त्र सहायक सिद्ध होता है; जैसे-'ताप' से निर्मित 'परिताप', 'अनुताप', 'पश्चात्ताप', 'मनस्ताप', 'संताप' आदि। अर्थों के सूक्ष्म भेद पर आचार्य रामचन्द्र वर्मा तथा डॉ. बदरीनाथ कपूर ने शोधपरक कार्य सम्पन्न किये हैं। डॉ. ब्रजमोहन की कृति 'शब्द-चर्चा' इस दृष्टि से उल्लेखनीय है। हिन्दी क्रियाओं के अर्थपरक अध्ययन की ओर डॉ. कालीचरण बहल तथा डॉ. रस्तोगी का ध्यान सर्वप्रथम गया। मिलते-जुलते शब्दों की मालाएं लेकर प्रयोग और अर्थ निश्चित करने चाहिए। प्रशासन और विधि में उसकी महती आवश्यकता है। यहाँ एक माला-Act, Deed, Function, Operation, Performance, React, work लेकर अभिप्राय स्पष्ट किया गया है–

Act:	कार्य करना	क्रिया, प्रक्रिया, अनुकरण, सम्पादन आदि करना, जैसे-Act in performance-अनुसरण में कार्य करना।
		Act in good faith-सद्भावपूर्वक कार्य।
Deed:		
	1. कर्म	वस्तुत: वह व्यक्ति विशेष की 'करनी' है।
	2. विलेख	कचहरी में प्रस्तुत किया लिखित वैध दस्तावेज।
		Deed of trust-न्यास विलेख।
		Deed of agreement-समझौता विलेख।
Function:		
	1. कर्त्तव्य पालन	पद पर जरूरी कर्त्तव्य निवाहने के नाते किये गये कार्य।
	2. कृत्य	किया गया कार्य
		Administrative function-प्रशासकीय कृत्य।
		Judicial function-न्यायिक कृत्य।
Operation:		
	प्रवर्तन प्रचालन	कुशलतापूर्वक किसी कार्य या अभियान को चलाना।
	क्रिया	इस क्रिया शब्द की कई अर्थच्छटाएं हैं-
		1. Condition being in force-प्रवर्तन।

	2. Act of process-प्रचालन।
	3. Action-संक्रिया।
	4. Working-क्रिया।

Performance:

पालन	The action of performing
काम करना	Doing
कार्य-सम्पादन	To execute

React:

प्रतिक्रिया,	किसी के जवाब में कोई प्रतिक्रिया/अनुक्रिया करना
अनुक्रिया	Reaction-प्रतिक्रिया।
	Reactionary-प्रतिक्रियावादी।

Work:

1. कार्य/कर्म/	शारीरिक क्रिया द्वारा कोई कार्य करना। कभी-कभी
काम	मानसिक कार्य भी इस कोटि में आता है।
	इसके दो क्षेत्र हैं-
	1. Something that is done-काम, कर्म, कार्य
	Manual work-शारीरिक काम।
2. कृति	2. Any production of art-कृति
	Work of art-कलाकृति

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि इस प्रकार के गहन विश्लेषण की आज और अधिक आवश्यकता है क्योंकि हम 'कम्प्यूटर युग' में प्रवेश कर चुके हैं। अगर निश्चित अर्थों में शब्द प्रयोगों को स्थिर नहीं किया गया तो अराजकता की स्थिति का सामना करना पड़ेगा।

'अनुवाद' के कुछ अन्य स्वरूप भी सम्भव हैं; जैसे-सारानुवाद, टीकानुवाद आदि।

सारानुवाद- सारानुवाद में मूलकृति के 'सार' का अनुवाद मात्र होता है। यह सामान्यत: समाचार-पत्रों के लिए विभिन्न एजेन्सियों द्वारा किया जाता है। किसी बड़ी सरकारी रिपोर्ट या न्यायालय के भारी भरकम निर्णय का सारानुवाद सम्भव है। यह दो पद्धतियों से सम्भव होता है-

(1) *मूलकृति/रिपोर्ट का सार पहले से भिन्न भाषा में उपलब्ध है।*

(2) *मूलकृति/रिपोर्ट का सार तैयार करते हुए किसी अन्य भाषा में भी तैयार करना है।*

स्रोत भाषा में लिखी गई मूल सामग्री के किसी भी आवश्यक अथवा उपयोगी अंश को न छोड़ते हुए किसी अन्य भाषा में उसको देना 'सारानुवाद' है। यह प्रक्रिया कठिन है। विधि के क्षेत्र में और भी कठिन है। राजनीतिक वक्तव्यों तथा भाषण में यही पद्धति अपनाई जाती है। ऐसे वक्तव्यों तथा भाषणों का सम्पूर्णत: अनुवाद तो दूर मूल रूप में स्रोत भाषा में प्रस्तुत करना भी कठिन कार्य है जब तक यान्त्रिक सुविधाएं प्राप्त न हों। आजकल यह प्रक्रिया टेप-पद्धति से सहज तथा सुगम हो गई है। टेपित व्याख्यान को मूल भाषा में लिखकर व्याख्याता से अवश्य सम्पादित करवा

लेना चाहिए। स्रोत भाषा में प्राप्त मूल भाषण से 'चयन' की प्रक्रिया में भी निष्णात होना आवश्यक है।

टीकानुवाद- यह तो भारत की बड़ी प्राचीन पद्धति है। संस्कृत, पालि, प्राकृत में लिखे हुए ग्रन्थों की टीकाओं की भरमार है। इसको लक्ष्यभाषा में दिया गया 'भाष्य' भी कहते हैं। यह पद्धति भारत की सभी भाषाओं में पर्याप्त विकसित है। आजकल भी भाष्य लिखने का प्रचलन है। 'गीता' पर जितने भाष्य लिखे गये हैं, सम्भवत: विश्व में किसी अन्य ग्रन्थ पर नहीं होंगे। बाल गंगाधर तिलक तथा विनोबा जी के 'गीता भाष्य' सुप्रसिद्ध हैं।

अनुवाद का काम जितना उपयोगी है, उतना ही कष्टसाध्य भी। शब्दों की शक्ति असीम होती है, भाषा की निजता उसका वैशिष्ट्य होती है जिसका निर्वाह करना अनुवादक का पूरा-पूरा दायित्व है। अनुवाद के माध्यम से हम विभिन्न प्रकार के विचारों से परिचित होते हैं और उनसे यथावश्यक लाभ उठाते हैं।

अनुवाद के दो महत्त्वपूर्ण पक्ष हैं-

(क) *भाषिक संरचना-मूल स्रोत तथा लक्ष्य भाषा की पूरी-पूरी जानकारी।*

(ख) *विषय-वस्तु-विषय-वस्तु की जितनी अच्छी जानकारी होगी अनुवाद उतना ही अच्छा होगा।*

अनुवाद में स्रोत भाषा के मूल स्वरूप को सुरक्षित रखने के लिए अनुवादक को अनेक समस्याओं-भाषिक, सन्दर्भात्मक तथा सांस्कृतिक-से जूझना पड़ता है। सांस्कृतिक पक्ष महत्त्वपूर्ण है। भौगोलिक तथा ऐतिहासिक कारणों से सांस्कृतिक अन्तर होता है। ग्रीष्म ऋतु एक है पर यूरोप की गर्मी और भारत की गर्मी में अन्तर है। यूरोप में 'वार्म रिसेप्शन' होता है जबकि भारत में गर्मजोशी से स्वागत होता है। शब्द और अर्थ संयुक्त होते हैं, "गिरा अर्थ जल वीचि सम"। भारतीय परम्परा में स्वीकृत श्राद्ध, सप्तपदी, आरती, हवन आदि शब्दों को समझना सरल नहीं। चातक, चकोर, मालती, तमाल, होली आदि सहस्रों सांस्कृतिक शब्दों को व्याख्या से भी स्पष्ट करना कठिन है। यही बात अन्य संस्कृतियों पर भी लागू होती हैं। रूसी में 'वारे' एक प्रकार की दही है, 'क्वास' एक प्रकार का रूसी पेय है जो गर्मी के दिनों में पिया जाता है जिसको काली रोटी से बनाया जाता है। 'गोरोद्की' एक खेल है जिसमें चौकोर घेरे में खड़े रखे लकड़ी के बेलनदार टुकड़ों को दूर से डंडा मारकर घेरे में से बाहर निकाला जाता है। 'डिब्स' बच्चों का एक खेल है जो भेड़ की हड्डियों से खेला जाता है।

मूल के सत्य को सुन्दरता से सुरक्षित रखना अनुवादक का कर्तव्य है। यह असम्भव नहीं तो कम से कम कष्टकर अवश्य है। यही कारण है कि यह कहा जाता है कि अनुवादक उस पत्नी की तरह होता है जो अगर वफादार है तो खूबसूरत नहीं हो सकती और खूबसूरत है तो वफादार नहीं हो सकती।

अज्ञेय के अनुसार, "समस्त अभिव्यक्ति ही अनुवाद है क्योंकि वह अव्यक्त (य: अदृश्य आदि) की भाषा (या रेखा या रंग) में प्रस्तुत करती है, तो यह सिद्धान्त भी प्रतिपादित किया जा सकता है कि अन्तत: मौन ही साहित्यिक कला है।" ऐसी स्थिति में अनुवाद किसी व्यक्ति का साहसिक अनुष्ठान ही कहा जायेगा। अनुवाद का ठीक होना और शक्तिशाली होना दोनों ही बातों में सामंजस्य स्थापित करना आवश्यक है। "अच्छा अनुवाद एक पुनर्जन्म ही है" (विलियमोवित्ज)

अनुवाद के विविध रूप-भाषान्तरण- जब दो विविध भाषा-भाषी परस्पर बातचीत के लिए उपस्थित हों और एक-दूसरे की भाषा की जानकारी न हो तो उन्हें अपनी बात एक-दूसरे को समझने के लिए भाषान्तरकार (दुभाषिया) का सहारा लेना पड़ता है। यह व्यक्ति दोनों भाषाओं का अच्छा

जानकार होता है। राजनीतिक वार्ताओं, अनेक देशों के प्रतिनिधियों के बीच बातचीत के मध्य इस प्रकार के भाषान्तरकार की आवश्यकता पड़ती है। भाषान्तरकार को तत्काल अन्य भाषा में रूपान्तर करना होता है। अतएव तात्कालिकता के भाव के कारण से 'आशु भाषान्तरण' कहना उपयुक्त रहेगा। यह कार्य अनुवाद से कुछ-कुछ भिन्न है, क्योंकि इस प्रक्रिया में 'आशय' लक्ष्य होता है। डॉ. सतीश कुमार रोहरा ने इसके लिए 'अनुव्याख्या' शब्द का प्रयोग किया है और इसे अनुवाद से भिन्न स्वीकार किया है। भारत में 'द्विभाषी' स्थिति के कारण अधिकाधिक दुभाषियों की आवश्यकता पड़ेगी। अंग्रेजी में 'इन्टरप्रेटर' का प्रयोग भी मिलता है। यही शब्द इस प्रक्रिया के लिए कम्प्यूटर में भी व्यवहृत होता है।

भाषान्तरकार के गुणों की चर्चा करते हुए श्री धर्मपाल पाण्डेय ने लिखा है-इसमें सन्देह नहीं कि दोनों भाषाओं का ज्ञान अनिवार्य है लेकिन भाषान्तरकार के लिए इतना ही काफी नहीं है। जिस प्रकार मुक्केबाज को दो हाथों की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार भाषान्तरकार को दो-दो भाषाओं का ज्ञान होना चाहिए। लेकिन केवल दो हाथ होने से ही जैसे कोई व्यक्ति मुक्केबाज नहीं बनता, उसी प्रकार दो भाषाओं का ज्ञान ही किसी को भाषान्तरकार बनाने के लिए काफी नहीं है।

भाषान्तरकार को स्थितिप्रज्ञ की स्थिति में रहना पड़ता है जिससे वह मूल वक्ता के भाषण को समझे, समझकर भाषान्तरकार करे और जो मन में सोचा है, उसे तत्काल बोल दे। मूल भाषा में कहे गये भाव को लक्ष्य भाषा में मौखिक अभिव्यक्ति देने की प्रक्रिया को 'भाषान्तरण' कहा जा सकता है। अनुवाद में उचित शब्दों के चयन की सुविधा रहती है जबकि इसमें बार-बार संशोधन करने की कोई गुंजाइश नहीं रहती। अधिक से अधिक जो उपयुक्त है उसे कह/बोल देना चाहिए। संसदीय भाषान्तरकार श्री समनमाला ठाकुर के अनुसार, "तत्काल भाषान्तर में भाषान्तरकार को अपनी क्षमता तीन प्रकार से विकसित करनी चाहिए-वक्ता के भाषण की व्यापक समझ, पूर्वानुमान के साथ मन में ही अनुवाद करना और उसे दूसरी भाषा में अभिव्यक्त करना (अनुवाद 57)।"

साथ-ही-साथ अनुवाद की व्यवस्था भी दो तरह से की जाती है-क्रमिक यानी बारी-बारी से और एक साथ। क्रमिक अनुवाद में वक्ता तीन-चार मिनट तक बोलता रहता है, फिर रुकता है। उसके रुकते ही भाषान्तरकार अपना बोलना प्रारम्भ कर देता है।

अनुकूलन- अनुकूलन की प्रक्रिया अनुवाद से भिन्न है। 'अनुवाद' में मूल को हू-ब-हू दूसरी भाषा में सुरक्षित रखने की स्थिति रहती है जबकि 'अनुकूलता' में या तो मूल भाव को सुरक्षित रखा जाता है अथवा मूल शब्द को हू-ब-हू न लेकर अनुकूल कर लिया जाता है।

(क) **ध्वन्यात्मक परिवर्तन के साथ अनुकूलन-** किसी भाषा की प्रकृति के अनुकूल विदेशी ध्वनियों में परिवर्तन कर गृहीत भाषा की निकटतम ध्वनियों में बदल लेना; जैसे-हिन्दी में अकादमी, अन्तरिम रसीद, तकनीक, पल्टन, पिस्तौल आदि बना लिये गये।

(ख) **व्याकरणिक रूपों में परिवर्तन के साथ अनुकूलन-** किसी मूल विदेशी शब्द को ग्रहण कर हिन्दी के व्याकरणिक रूप-उपसर्ग, प्रत्यय, अन्य शब्द के संयोग से परिवर्तित कर हिन्दीकरण कर लिया जाता है; जैसे-कलेक्टरी, कांसुली, एम्पायरी, रजिस्ट्री, डिबेंचरधारी, फिल्टरित, चार्टरवादी, क्लोनीय, फेजकरण आदि। आगत शब्द जो स्वत: तद्भव रूप में अपनाया जाता है, उसे 'पाचित' कहते हैं, पर कुछ भाषा की प्रकृति के अनुकूल बना लिये जाते हैं; जैसे-

Unstamped	अस्टांपित
Unregistered	अरजिस्ट्रीकृत

अनुकूलन की यह प्रवृत्ति विश्व की सभी भाषाओं में देखी जाती है।

वैज्ञानिक युग के साथ ज्ञान का क्षेत्र काफी बढ़ा है। अब हम ज्ञान और विकास के क्षेत्र में पूरे विश्व से जुड़ गए हैं अत: जो कुछ भी अन्य देशों में हो रहा है, इसकी जानकारी हमारे लिए जरूरी है। हर देश और हर भाषा में, ज्ञान या विकास की अभिव्यक्ति, कृतियों के रूप में हमारे सामने उपस्थित होते हैं। उस ज्ञान को जानने हेतु या तो हम उस कृति की भाषा को जाने या फिर उस कृति का अपनी भाषा में अनुवाद कराकर उससे जानकारी लें। हर भाषा हर व्यक्ति जानें, यह बहुत कठिन या असंभव-सा है, यही कारण है कि वर्तमान समय में अनुवाद की आवश्यकता काफी बढ़ गयी है।

'अनुवाद' शब्द का अर्थ

'अनुवाद'शब्द का अर्थ है पुनः कथन, अर्थात् एक बार कही बात को फिर से कहना। इसमें अर्थ की पुनरावृत्ति होती है, शब्द की नहीं। इसे हम अर्थ का भाषांतरण भी कहते हैं।

'अनुवाद' की परिभाषा और स्वरूप

एक भाषा में कही गयी बात को दूसरी भाषा में इस प्रकार कहना कि वह बात दूसरी भाषा में समग्रत: प्रस्तुत हो, अनुवाद कहलाता है। श्री पटनायक के शब्दों में "अनुवाद वह प्रक्रिया है, जिसके द्वारा सार्थक अनुभव या संदेश को एक भाषा समुदाय से दूसरे भाषा समुदाय में संप्रेषित किया जाता है।"

अनुवाद एक कला है

जब हम किसी कार्य को विशेष पद्धति अथवा कौशल के साथ करते हैं तो उसे कला की संज्ञा दी जाती है। अनुवाद कार्य भी एक कौशल है, उसकी भी अपनी एक व्यवस्था है-कुछ नियम हैं जिनसे अनुवाद को सार्थकता मिलती है तथा अनुवाद कार्य उत्कृष्ट बनता है।

जब हम अनुवाद का एक कला के रूप में विवेचन करते हैं तो अनुवाद की पद्धति, उसकी व्यवस्था, श्रेष्ठ अनुवाद की विशेषताएं और अनुवाद की प्रक्रिया-इन सभी पर विचार करना जरूरी हो जाता है।

अनुवाद के उदाहरण

निम्नलिखित शब्दों का हिन्दी अनुवाद कीजिए-

Bogus	*फर्जी*	*Client*	*मुवक्किल,*
Documentry	*मौसम विज्ञानी*	*Inforce*	*लागू करना*
Episode	*उपाख्यान*	*Geologist*	*भू-गर्भ शास्त्री*
Null and void	*निरर्थक*	*Officiate*	*स्थानापन्न*
Ommission	*भूलचूक*	*Parasite*	*परजीवी*
Patronage	*संरक्षण*	*Pedagogy*	*शिक्षण विज्ञान*
Persuade	*प्रेरित करना*	*Prospectus*	*विवरण-पत्रिका*

निम्नलिखित गद्यांश का हिन्दी अनुवाद कीजिए-

So many letters have been sent from this office but necessary information regarding reemployment of class III staff is still awaited. The government desires to make statement in the Vidhan Sabha on next Monday if the information is not given to the minister he may be grilled by the MLA's. Kindly look into the metter and submit the necessary information by per messenger within two days.

Ans. इस कार्यालय द्वारा काफी पत्र भेजे गए हैं पर आज तक तृतीय वर्ग के सेवकों से संबंधित जरूरी जानकारी की प्रतीक्षा है। सरकार विधान सभा में अगले सोमवार को अपना वक्तव्य देना चाहती है और यदि मंत्री महोदय को जानकारी न दी गई तो उनकी विधायकों द्वारा खिंचाई की जा सकती है। अत: प्रकरण पर व्यक्तिगत ध्यान दें और जरूरी जानकारी वाहक के हस्ते दो दिन में प्रेषित करें।

अनुवाद

भाषा विचार विनिमय का माध्यम है। विश्व में अनेक भाषाएं प्रचलित हैं। हमें एक दूसरे के विचारों और भावों को समझना भी जरूरी है। ये विभिन्न भाषाएं इसमें बाधा उत्पन्न करती हैं। इस बाधा को दूर करने का कार्य अनुवाद द्वारा होता है। अनुवाद के द्वारा एक भाषा बोलने और जानने वाले व्यक्ति, दूसरी भाषा बोलने और जानने वालों तक अपने विचार और भावों का संप्रेषण सरलता से करते हैं।

एक भाषा में कथित बात को दूसरी भाषा में व्यक्त करना ही अनुवाद कहलाता है। इसमें दो भाषाओं का होना जरूरी है। वह भाषा जिसके कथन का अनुवाद करना है उसे स्रोत भाषा कहते हैं। जिसका भाषा में अनुवाद किया जाना है उसे लक्ष्य भाषा कहते हैं। अर्थ यह है कि स्रोत भाषा कि किसी पाठ्य सामग्री को लक्ष्य भाषा में समग्रत: प्रस्तुत करना ही अनुवाद कहलाता है। अंग्रेजी में इसे ट्रांसलेशन कहते हैं।

अच्छे अनुवाद की विशेषताएं

(1) अनुवाद में कम से कम दो भाषाओं का होना जरूरी है।

(2) स्रोत भाषा की सामग्री को लक्ष्य भाषा में सावधानी पूर्वक प्रस्तुत करना चाहिए।

(3) अच्छे अनुवाद में अभिव्यक्ति सुबोध और प्रवाहमयी होती है।

(4) अनुवाद मूलत: भावानुवाद होना चाहिए। मात्र शाब्दिक रूपांतरण न हो।

(5) अच्छे अनुवाद में मूल रचना की भाषा शैली सुरक्षित रहे।

(6) एक भाषा के भाव व विचार का कथ्य दूसरी भाषा में यथावत व्यक्त होना चाहिए।

(7) अनुवाद की भाषा स्रोत भाषा की प्रकृति के अनुसार हो।

(8) अनुवाद की प्रक्रिया में स्रोत भाषा की प्रतीक व्यवस्था को लक्ष्य भाषा के अनुरूप बदलना चाहिए अत: स्रोत भाषा के समानार्थी प्रतीक लक्ष्य भाषा में खोजना चाहिए।

(9) लक्ष्य भाषा के वाक्यों व संरचनात्मक तत्वों को स्रोत भाषा की प्रकृति के अनुसार रूपांतरित करना चाहिए।

(10) अनुवाद ऐसा होना चाहिए कि वह जीवंत लगे।

(11) भाषा में प्रवाहमयता हो।

(12) अनुवाद का वाक्य विन्यास भाषा की प्रकृति के अनुसार हो।

इस प्रकार एक अच्छा अनुवाद भावों व विचारों को समग्र रूप से व्यक्त करता है।

अनुवाद की प्रक्रिया

(1) जिस पाठ-सामग्री का अनुवाद किया जाना है उसे दो-तीन बार पढ़ें।

(2) उस सामग्री में प्रयुक्त शब्दों के संदर्भ के अनुकूल लक्ष्य भाषा में निकटस्थ समानार्थी शब्द ढूंढ़ना चाहिए।

(3) स्रोत भाषा से लक्ष्य भाषा में रूपांतरित वाक्यों की प्रकृति लक्ष्य भाषानुसार हो।

(4) शब्दकोश के अर्थों की अपेक्षा व्यावहारिक ज्ञान भी जरूरी है।

(5) लक्ष्य भाषा के अनुरूप लिंग, वचन, कारक व व्याकरणगत संरचना का निर्माण होना चाहिए।

(6) वाक्यों का अनुक्रम लक्ष्य भाषा की व्याकरणिक व्यवस्था द्वारा अनुशासित हो।

(7) मुहावरों के स्थान पर लक्ष्य भाषा से भी मुहावरों को ही रखना चाहिए।

(8) कथ्य के भावों के अनुसार ही अनुवाद करना चाहिए।

स्रोत भाषा व लक्ष्य भाषा व अनुवादक

अनुवादक के गुण- अनुवाद करने वाला अनुवादक कहलाता है। उसे स्रोत भाषा की सामग्री को लक्ष्य भाषा में सावधानी पूर्वक पुन: प्रस्तुत करना होता है। अत: अनुवादक के लिए स्रोत भाषा व लक्ष्य भाषा का ज्ञान होना जरूरी है।

स्रोत भाषा- वह भाषा जिसकी पाठ्य सामग्री का अनुवाद होना है उसे स्रोत भाषा कहते हैं।

लक्ष्य भाषा- वह भाषा जिसमें अनुवाद होना है उसे लक्ष्य भाषा कहते हैं।

चूंकि बिना स्रोत भाषा व लक्ष्य भाषा के अनुवाद नहीं हो सकता। अत: अनुवादक को इनका अच्छा ज्ञान होना चाहिए।

अनुवादक को इन दोनों भाषाओं की संरचना और उसके परिवेश का ज्ञान होना चाहिए।

अनुवादक को यथोचित शब्दकोश का सहारा लेना चाहिए। प्रत्येक शब्द के कई संदर्भ हो सकते हैं। उपयुक्त संदर्भ में प्रयोग करना चाहिए।

अनुवादक को स्रोत व लक्ष्य भाषा की प्रकृति और परिवेश तथा उसकी सांस्कृतिक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से पूरी तरह परिचित होना चाहिए।

अनुवादक को दोनों भाषाओं के मुहावरों का भी ज्ञान आवश्यक है। मुहावरों के स्थान पर मुहावरों का ही प्रयोग किया जाना चाहिए।

अनुवादक की भाषा संयत होनी चाहिए, अनुवादक तटस्थ रूप से यथावत अनुवाद करे।

अनुवादक को अनुवाद में मूल अवतरण की आत्मा या भाव को सुरक्षित रखना चाहिए।

अनुवादक को सिर्फ शाब्दिक रुपांतरण नहीं करके भावानुवाद करना चाहिए।

अनुवाद के प्रकार

अनुवाद मुख्यत: तीन प्रकार के होते हैं।

(1) **शब्दानुवाद-** शब्दानुवाद में स्रोत से लक्ष्य भाषा में अनुवाद करने पर शब्दों का यथावत अनुवाद कर देते हैं। शब्दानुवाद में भावना इत्यादि को कोई महत्व नहीं दिया जाता। शब्द के स्थान पर समानार्थी शब्द का प्रयोग कर दिया जाता है।

(2) **भावानुवाद-** भावानुवाद में स्रोत भाषा व लक्ष्य भाषा की परंपरा का ध्यान रखकर कथ्य या विषय-वस्तु के भावों का अनुवाद होता है। इसमें लक्ष्य भाषा की भाषिक संरचना का ध्यान रखते हुए वाक्यों में निहित मूल भाव पर विशेष ध्यान देते हैं।

(3) **रूपांतरण-** इसमें स्रोत भाषा के कथ्य को लक्ष्य भाषा में रूपांतरण करते वक्त अनुवादक कथ्य को रूपांतरित कर देता है। अर्थात् आवश्यकतानुसार उसमें परिवर्तन करता है। इसमें वैयक्तिकता की संभावना बढ़ जाती है। अनुवाद मूल रूप में न होकर कुछ परिवर्तित रूप में होता है।

अनुवाद का महत्व

मानवीय विभिन्नता के अनुरूप, मानवीय भाव, विचार, अभिव्यक्ति व मुख्यत: भाषा के भी अनेक रूप हैं, संसार में कई भाषाएं हैं प्रत्येक का बोलने-लिखने का अलग-अलग तरीका है। इतनी विविधताओं के रहने पर भी सामाजिक व्यवहार एवं अभिव्यक्ति के स्तर पर उनमें समानताएं भी हैं। प्रत्येक में ज्ञान कला-संस्कृति की अभिव्यक्ति है। सभी भाषा को सीखा नहीं जा सकता है, पर उनके भाव रूपांतरण एवं अनुवाद के माध्यम से प्रत्येक भाषा में निहित ज्ञान-विज्ञान, सभ्यता, संस्कृति, विज्ञान, शिक्षा एवं कला की विशेषताओं को राष्ट्र तथा समाज के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है। इसी से अनुवाद की आवश्यकता तथा महत्व दोनों ही बहुत है। अनुवाद एक ऐसा सेतु है जो संसार की सभी भाषाओं को मानव के विचारों को जोड़ने का कार्य करता है।अत: अनुवाद मानव के ज्ञान-विज्ञान के आदान-प्रदान व विकास का प्रदायक है।

1. **बातचीत का क्षेत्र-** बातचीत में जब हम अपनी मातृभाषा से भिन्न भाषा में बोलते हैं, तब हम स्वयं अनजाने अनुवाद करते रहते हैं। हम पहले मातृभाषा में सोचते हैं, फिर उसे मन में ही अन्य भाषा में अनुदित करते हैं। यही अनुदित रूप हमारे मुंह से निकलता है। यही कारण है कि हम कोई भी अन्य भाषा बोलें, उस पर हमारी मातृभाषा का कुछ-न-कुछ प्रभाव नजर आता है। औसत भारतीय की अंग्रेजी भी इसका अपवाद नहीं है।

2. **पत्राचार-** पत्राचार का क्षेत्र अनुवाद मांगता है। पत्राचार व्यापार में, कार्यालय में, न्यायालय में सर्वत्र होता है। जहां पत्राचार अपने प्रदेश की भाषा में करने से काम चलता है वहां अनुवाद की जरूरत नहीं पड़ती। पर एक ही प्रदेश में कई भाषाएं बोलने वाले पीढ़ियों से रहते हैं। उनके लिये प्रादेशिक भाषा भी परायी रहती है। जैसे-केरल में तमिल-भाषी तथा कन्नड़-भाषी काफी संख्या में हैं। उनके लिये केरल की प्रादेशिक भाषा मलयालम का पत्राचार अनुवाद को आवश्यक बना देता है। जो व्यापारी बड़ी कंपनियों से माल मंगाते या उन्हें माल बेचते हैं उन्हें उन कंपनियों से पत्राचार कंपनी की भाषा में करना पड़ता है।

3. **धार्मिक क्षेत्र-** धर्म के क्षेत्र में प्राय: सभी देश किसी विशिष्ट भाषा या व्यवहार करते हैं। जैसे-भारत में संस्कृत हिन्दू धर्म की भाषा रही है। बौद्धों के धर्म-ग्रंथ पालि भाषा में हैं। ईसाई लैटिन या सिरियक का उपयोग करते हैं, मुसलमान अरबी का। आम लोग इन धर्म-भाषाओं में कुशल नहीं हो सकते। बहुत कम लोग इनके जानकार होते हैं। अतएव, ऐसी धर्म-भाषाओं के पंडित सामान्य लोगों में प्रचार हेतु ग्रंथों का अनुवाद करते हैं। इसी तरह पुजारी आम लोगों की प्रार्थना

आदि का अनुवाद धर्म की भाषा में करते हैं। दोनों ओर की यह अनुवाद-प्रक्रिया हर धर्म के पूजा-स्थलों पर देखी जा सकती है।

4. **न्यायालय-** न्यायालयों में अनुवाद अनिवार्य हो जाता है। इसके कई कारण हैं। न्यायालय के कर्मचारी, वकील और प्रार्थी लोग अदालत के अंग होते हैं। अदालतों की भाषा प्राय: अंग्रेजी होती है। इनमें मुकदमों के लिये जरूरी कागजात अक्सर प्रादेशिक भाषा में होते हैं लेकिन पैरवी अंग्रेजी में होती है।

5. **कार्यालयों में-** हमारे देश के अधिकांश कार्यालयों की भाषा अंग्रेजी है। मुश्किल से पंचायत व गांवों के स्तर पर प्रादेशिक भाषा का व्यवहार किया जाता है। आम लोगों को अपनी अर्जियां तक अंग्रेजी में लिखनी पड़ती हैं। यहां से अनुवाद की प्रक्रिया शुरू होती है। पुलिस, मजिस्ट्रेट जैसे अधिकारियों के कार्यालयों में अनुवाद का जोर रहता है। देवस्वम, रजिस्ट्रेशन जैसे विभागों में निचले स्तर पर प्रादेशिक भाषा काम देती है तथा ऊपरी स्तर पर अंग्रेजी। चर्चित विषय प्रांत का रहता है। इसलिये अनुवाद का प्रसंग बराबर उठता है।

6. **शिक्षा का क्षेत्र-** शिक्षा का क्षेत्र अनुवाद के बिना आगे नहीं बढ़ पाता। आधुनिक युग में विज्ञान, समाज-विज्ञान, अर्थशास्त्र, गणित आदि बीसियों विषय सीखे तथा सिखाये जाते हैं। इनके उत्तम ग्रंथ अंग्रेजी ही नहीं, अन्य विदेशी भाषाओं में भी लिखे हुए हैं। इनका अनुवाद किये बिना ज्ञान की वृद्धि नहीं हो पाती।

7. **सांस्कृतिक संबंध-** इस दृष्टि से सांस्कृतिक संबंधों के लिये अनुवाद परम जरूरी है। किसी भी देश की संस्कृति और कला का परिचय अन्य देश के निवासियों को उन्हीं की भाषा में देना पड़ता है। यह संभव नहीं है कि हर देशवासी पड़ोसी व दूर के देशों की भाषायें समझे। ऐसी समस्या को सुलझाने का उपाय अनुवाद ही है।

अनुवाद के लिए विषय का ज्ञान-बहुत जरूरी है। ऐसा न होने से प्राय: भयंकर भूलें हो जाती हैं। इसका कारण यह है कि बगैर विषय के ज्ञान के मूल सामग्री को भली-भाँति समझना कठिन होता है तथा ऐसे में अनुवादक शब्दानुवाद का सहारा लेने को बाध्य हो जाता है। वस्तुत: जो विषय जितना ही असामान्य अथवा तकनीकी होता है, उसके अनुवाद में इस तरह की भूलों के होने की सम्भावना उतनी ही ज्यादा होती है। अत: विज्ञान के अनुवादों में भयंकर भूलें प्राय: होती हैं। 'पिग आइरन' (pig iron) के शूकर लौह तथा मिर्गी पिग (geinea pig) के 'गिनी शूकर' जैसे अनुवाद विषय के अज्ञान के ही परिणाम हैं। तत्वत: 'पिंग आइरन' 'कच्चे लोहे' को कहते हैं एवं 'गिनी पिग' शूकर न होकर एक ही तरह का सफेद चूहा होता है, जिसे हिन्दी में भी 'गिनीपिग' ही कहा जाता है। ऐसे ही 'जेली फिश' (jelly fish), 'सिल्वर फिश' (silver fish) एवं 'कटल फिश' (cuttel fish) मछली नहीं होतीं, प्राणिविज्ञान से अपरिचित अनुवादक हिन्दी अनुवाद में इन्हें 'जेली मछली', 'रजत मत्स्य' एवं 'कटल मछली' कहने की भूल कर सकता है। इसीलिए अगर कोई अनुवादक जिस विषय का अनुवाद कर रहा हो, उससे अपरिचित हो तो विषय के जानकार से भली-भाँति पूरा अनुवाद दिखवा लेना चाहिए अथवा जहाँ-जहाँ सन्देह हो या गलती की सम्भावना हो उसे उससे भली-भांति समझ लेना चाहिए। वस्तुत: इसीलिए ऐसी स्थिति में जहाँ अनुवादक या तो ठीक से सिर्फ विषय का जानकार हो अथवा सिर्फ सम्बद्ध भाषाओं का जानकार हो, वहाँ सहयोगित अनुवाद जरूरी हो जाता है। विषय के जानकार को भाषाओं का जानकार सहयोग दे सकता है तो भाषाओं के जानकार को विषय का जानकार। इस तरह के सहयोग से न तो विषय से सम्बद्ध भूल होने की सम्भावना रहती है एवं न स्त्रोत अथवा लक्ष्य-भाषा से सम्बद्ध भूल की।

विषय ज्ञान हेतु विभिन्न विषयों के मानक ग्रन्थों, विश्वकोशों एवं परिभाषा-कोशों की मदद ली जा सकती है। इनमें कुछ का उल्लेख आगे किया जा रहा है।

(अ) **सन्दर्भ ग्रन्थ-** अनुवादक हेतु तीन चीजों का ज्ञान जरूरी है : स्त्रोत-भाषा का, लक्ष्य-भाषा का तथा विषय का। अत: इन तीनों के सन्दर्भ ग्रन्थ भी उसके लिए अनिवार्यत: जरूरी हैं।

जहाँ तक स्त्रोत भाषा के सन्दर्भ-ग्रन्थों का प्रश्न है, अनुवादक के पास दो तरह के कोश होने चाहिए : स्त्रोत भाषा के अच्छे कोश, जिनमें स्त्रोत भाषा के शब्दों को (स्त्रोत भाषा में) समझाया गया हो, एवं स्त्रोत भाषा से लक्ष्य भाषा के अच्छे कोश, उदाहरण के लिए अंग्रेजी-हिन्दी अनुवाद की बात लें तो स्त्रोत भाषा अंग्रेजी है। इस तरह तो अंग्रेजी में कोशों की संख्या बहुत ज्यादा है, पर अंग्रेजी-हिन्दी अनुवाद हेतु प्रमुखत: अग्रांकित कोश हैं :

Webster's Third New International Dictionary- यह अंग्रेजी (प्रमुखत: अमरीकी) का अच्छा कोश है, जिसमें सभी तरह के शब्दों को अंग्रेजी में अच्छी प्रकार स्पष्ट किया गया है। इसकी एक बहुत बड़ी विशेषता यह है कि यह अंग्रेजी का एकमात्र बड़ा कोश है जिसमें अंग्रेजी भाषा के सामान्य शब्दों को लेने के साथ काफी सारे पारिभाषिक शब्दों को भी ले लिया गया है। इस तरह यह अकेला कोश भी अनुवादक हेतु पर्याप्त है। इसके छोटे-बड़े कई संस्करण हैं, जो अपने-अपने स्तर पर अच्छे हैं।

The Universal Dictionary of the English Language-पारिभाषिक शब्दों की बात छोड़ दें, तो अंग्रेजी भाषाओं का यह एक तरह से सर्वोत्तम कोश है, जिसमें अंग्रेजी शब्दों के विभिन्न अर्थ बहुत अच्छी प्रकार समझाये गये हैं। अनुवाद हेतु यह कोश भी बड़े काम का है।

Chamber's Twentieth Century Dictionary- छोटे कोशों में यह कोश काफी अच्छा है। ऊपर संकेतित दोनों कोश काफी महँगे हैं, इसलिए सभी अनुवादक उन्हें खरीद नहीं सकते। इसे सभी खरीद सकते हैं। इसका नया संस्करण अपेक्षाकृत ज्यादा उपयोगी है।

The Concise Oxford Dictionary- छोटे कोशों में यह भी अच्छा है पर 'चैम्बर्स' जितना नहीं। इसके छोटे-बड़े कई संस्करण हैं। मूलत: यह कोश ऐतिहासिक सिद्धान्तों पर बना था, इसलिए वर्णनात्मक दृष्टि से इसका बहुत मूल्य नहीं है। हाँ, अगर अंग्रेजी के प्राचीन साहित्य से अनुवाद किया जा रहा हो तथा यह देखना हो कि किसी शब्द का किसी विशेष सदी में क्या अर्थ था तो इसका बड़ा संस्करण (The Oxford Dictionary) जो कई भागों में है, अनुवादकों के बड़े काम का है एवं अंग्रेजी का इस तरह का अकेला कोश है।

Webster's Dictionary of Synonyms- अंग्रेजी भाषा पर्यायों की दृष्टि से बड़ी सम्पन्न है। अनुवादक के सामने कभी-कभी यह समस्या आती है कि स्त्रोत पाठ में प्रयुक्त पर्याय शब्दों में सूक्ष्म अन्तर क्या है? ऐसे अन्तरों को समझे बगैर मूल पाठ को वास्तविक रूप में न तो समझा जा सकता है तथा न अनुवाद किया जा सकता है। प्रस्तुत कोश में पर्यायों का अन्तर बहुत अच्छी तरह समझाया गया है। इस प्रकार अनुवाद हेतु यह कोश भी बड़े काम का है।

जिस भाषा से भी अनुवाद करना हो, उसके इस तरह के कोशों से अनुवादक को मदद लेनी चाहिए। रूसी, जर्मन, फ्रेंच आदि में भी इस तरह कोश हैं। हाँ, अन्य भाषाओं में इस श्रेणी के कोश प्राय: नहीं हैं, इसलिए उनसे अनुवाद करने में कठिनाई होती है।

स्त्रोत भाषा के दूसरे तरह के कोश 'स्त्रोत भाषा से लक्ष्य भाषा' के होते हैं। उदाहरण के लिए अंग्रेजी-हिन्दी। यह बात ध्यान देने की है कि ऐसे द्विभाषी कोश (स्त्रोत भाषा से लक्ष्य भाषा) अनुवादक के बहुत काम के नहीं होते जिनमें शब्दों की व्याख्या मात्र दे दी गई हो, क्योंकि अनुवादक

को शब्द चाहिए। उदाहरण के लिए, किसी अंग्रेजी-हिन्दी कोश में अगर BEAUTIFUL का अर्थ 'जो देखने में अच्छा हो' दिया गया हो तो अनुवादक इससे शब्द का अर्थ तो समझ जायेगा, पर यह नहीं जान पायेगा कि वह अपने अनुवाद में किस शब्द का प्रयोग करे। अत: अनुवादक को ऐसा द्विभाषी कोश देखना चाहिए जिसमें प्रतिशब्द (जैसे इस प्रसंग में सुन्दर, खूबसूरत) दिये गये हों। अंग्रेजी-हिन्दी के बहुत अच्छे कोश उपलब्ध नहीं हैं। जो हैं, उनमें निम्न का नाम उल्लेख्य है :

अंग्रेजी-हिन्दी कोश- डॉ. बुल्के। उपलब्ध कोशों में यह सबसे अच्छा है। इसकी कमी यह है कि इसमें बहुत थोड़े शब्द तथा बहुत ही कम मुहावरे लिए गये हैं। अत: अनुवादक इसमें उन सभी शब्दों-मुहावरों को नहीं पाता, जिनकी उसे जरूरत होती है। हाँ, अपने आकार की दृष्टि में यह कोश अच्छा है। इसकी एक कमजोरी यह भी है कि इसमें हिन्दी के साहित्यिक शब्द ही ज्यादा हैं। हिन्दी बोलियों के ऐसे शब्द प्राय: नहीं लिये जा सके हैं, जिनके लिए मानक हिन्दी में शब्द नहीं हैं।

वृहद् अंग्रेजी-हिन्दी कोश-डॉ. बाहरी। यह कोश काफी बड़ा है तथा इसमें पारिभाषिक एवं सामान्य सभी तरह के काफी सारे शब्द मिल जाते हैं। इस दृष्टि से अनुवादक हेतु यह काम का है। इसकी सबसे बड़ी कमी यह है कि इसमें अंग्रेजी शब्दों के अधिक-से-अधिक हिन्दी पर्यायों को बटोरने का यत्न किया गया है जिनमें बहुत-से तो ठीक समानार्थी ही नहीं हैं तथा जो हैं, वे भी इतने ज्यादा एवं अव्यवस्थित रूप से दिये गये हैं कि अनुवादक उस भीड़ में से अपने लिए उपयुक्त शब्द खोजने में काफी कठिनाई का अनुभव करता है। वस्तुत: डॉ. बुल्के के कोश जैसी यथार्थता एवं व्यवस्था इस कोश में नहीं है। कहने का तात्पर्य यह है कि अनुवादक को इस कोश का उपयोग करते समय बहुत सतर्कता से काम लेना चाहिए।

मानक अंग्रेजी-हिन्दी कोश- सम्मेलन द्वारा प्रकाशित यह कोश भी लगभग डॉ. बाहरी के कोश जैसा ही है।

अंग्रेजी-उर्दू डिक्शनरी-अब्दुल हक। यह कोश भी बहुत अच्छा है। कोशकार ने उर्दू के कठिन शब्द देने के साथ-साथ मानक हिन्दी एवं उसकी ब्रज, खड़ी बोली आदि बोलियों में प्रयुक्त शब्द भी काफी दिये हैं। जो अनुवादक अरबी लिपि से परिचित हैं, वे इसे हिन्दी अनुवाद हेतु बहुत उपयोगी पा सकते हैं। उर्दू हेतु तो यह एक मात्र प्रामाणिक कोश है ही।

कभी-कभी अर्थ तथा प्रयोग के निश्चयन हेतु लक्ष्य भाषा के कोश की भी जरूरत पड़ती है। हिन्दी के निम्न कोश अनुवादक हेतु उपयोगी हो सकते हैं-

हिन्दी शब्दसागर- नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

मानक हिन्दी कोश- साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।

बृहद हिन्दी कोश- ज्ञानमण्डल, वाराणसी।

अनुवाद में कभी-कभी स्रोत भाषा से लक्ष्य भाषा के कोश भी उपयोगी सिद्ध होते हैं। उदाहरण हेतु, अंग्रेजी-हिन्दी अनुवाद हेतु इस दृष्टि से व्यावहारिक हिन्दी-अंग्रेजी कोश (चतुर्वेदी-तिवारी) देखा सकता है।

प्राकृतिक विज्ञान, समाज विज्ञान, साहित्यशास्त्र एवं विधि आदि से सम्बद्ध अनुवादों में एक प्रमुख समस्या पारिभाषिक शब्दों की होती है। अंग्रेजी-हिन्दी पारिभाषिक शब्दों हेतु हिन्दी में किन शब्दों का प्रयोग करें? इस दिशा में कुछ काम हुआ है जिनसे मदद ली जा सकती है। कुछ प्रमुख पारिभाषिक कोश निम्न हैं-

1. बृहत पारिभाषिक शब्द-संग्रह (मानविकी)।

2. बृहत पारिभाषिक शब्द-संग्रह (विज्ञान)।

केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा प्रकाशित ये दोनों कोश दो-दो खण्डों में हैं, जिनमें अंग्रेजी के पारिभाषिक शब्दों के हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषाओं के प्रतिशब्द दिये गये हैं। विधि तथा आयुर्विज्ञान को छोड़कर अन्य प्रायः काफी विषयों के काफी सारे पारिभाषिक शब्द इसमें आ गये हैं। ये कोश तकनीकी विषयों के अनुवादों हेतु बहुत उपयोगी हैं। विधि के लिए विधि मन्त्रालय की विधि शब्दावली एवं आयुर्विज्ञान के लिए-बृहद् पारिभाषिक शब्द-संग्रह (आयुर्विज्ञान, भेषजविज्ञान, शारीरिक नृविज्ञान) उपयोगी हैं। डॉ. रघुवीर की Comprehensive Hindi-English Dictionary भी पारिभाषिक शब्दों की दृष्टि से कभी-कभी उपयोगी हो सकती है।

अनुवादक हेतु विषय की जानकारी भी अपेक्षित होती है तथा इस दृष्टि से पारिभाषिक शब्दों को समझना जरूरी है। इसके लिए विभिन्न विषयों के पारिभाषिक कोशों से मदद ली जा सकती है। कुछ प्रमुख पारिभाषिक कोश अग्र हैं-

1. A Dictionary of Statistical Terms – *Kendall and Buckland.*
2. The International Dictionary of Applied Mathematics – *Freiberger.*
3. Mathematics Dictionary – *James and James.*
4. A Dictionary of Literary Terms – *Shipley.*

केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय से हिन्दी में भी प्राणिविज्ञान, भूविज्ञान, भूगोल, रसायन, गणित एवं आधुनिक भौतिकी के परिभाषा कोश प्रकाशित हो चुके हैं और भाषा विज्ञान तथा कई अन्य विषयों के तैयार हो रहे हैं, जो शीघ्र ही प्रकाशित होंगे। इनसे मदद ली जा सकती है।

अब तक स्रोत भाषा तथा लक्ष्य भाषा के शब्दों एवं अभिव्यक्तियों की समुचित और तुलनात्मक जानकारी हेतु एकभाषिक और द्विभाषिक कोशों, विषय कोशों की चर्चा की गई है। अनुवाद हेतु व्यक्तिवाचक संज्ञाओं के ठीक उच्चारण का ज्ञान भी जरूरी होता है। ऐसा प्रायः होता है कि स्रोत सामग्री में प्राप्त व्यक्तियों तथा स्थानों के नाम की वर्तनी कुछ और होती है एवं उनका वास्तविक उच्चारण कुछ और होता है। इन उदाहरणों की प्रामाणिक जानकारी हेतु दो कोश बहुत उपयोगी हैं-

1. Webster's Biographical Dictionary,
2. Webster's Geographical Dictionary.

(ख) कम्प्यूटर- वर्तमान में अनुवाद के क्षेत्र में कम्प्यूटर का भी प्रयोग किया जाने लगा है। कम्प्यूटर में कई कम्पनियों के ऐसे सॉफ्टवेयर आ गये हैं जो विविध भाषाओं का अन्य भाषाओं में अनुवाद कर देते हैं। इनकी गति बहुत तीव्र होती है।

अनुवाद के पुनरीक्षण अथवा समीक्षा की प्रवृत्ति

अनुवाद की संमीक्षा की प्रकृति- अनुवाद समीक्षा, अनुवाद-सिद्धान्त का अनुप्रयोगात्मक पक्ष है। अनुवाद समीक्षा का अभिप्राय है, मूलभाषा पाठ की तुलना में अनूदित पाठ के गुण-दोष का विवेचन। यह विवेचन समीक्षक के स्वेच्छाचार से नहीं, वरन् अनुवाद-सिद्धान्त की मान्यताओं से अनुशासित होता है। यह अनुवाद-कार्य के स्थितिशील आगम को विज्ञापित करता है-अनुवाद कार्य की निष्पत्ति से संबंधित है। अनुवाद समीक्षा ही वह स्थिति है जिसमें 'अनुवाद एक संबंध है' इस मान्यता का अनुप्रयोग होता है। अनुवाद उस संबंध का नाम है जो दो सममूल्य पाठों (समभाषिक

अथवा द्विभाषिक) के बीच होता है। दूसरे शब्दों में, दो सममूल्य पाठों के मध्य समानता के संबंध को 'अनुवाद' कहते हैं। इस संबंध के उद्घाटन से अनुवाद प्रक्रिया के स्पष्टीकरण में मदद मिलती है। यह अनुवाद कार्य का वैकल्पिक पक्ष है-अनुवाद कार्य एक कौशल है जिसकी निष्पत्ति का अध्ययन, अनुवाद समीक्षा, एक ज्ञानात्मक विधा है तथा ये दोनों अनुवाद प्रक्रिया के दो समस्तरीय पहलू हैं। इन दोनों में अन्योन्यात्मकता का संबंध है-कार्य से समीक्षा की स्थिति का अस्तित्व बनता है तथा समीक्षा से कार्य की गुणवत्ता में वृद्धि के संकेत प्राप्त होते हैं।

अपनी प्रकृति एवं महत्व के कारण अनुवाद समीक्षा का अपेक्षाकृत स्वतंत्र स्थान है। जिस तरह साहित्य हेतु साहित्य सर्जक होना अनिवार्य नहीं, उसी तरह अनुवाद समीक्षक अनुवादक होना अनिवार्य नहीं। ये दोनों 'रोल' परिपूरक वितरण में हैं, इसलिए प्राय: अनुवादक एवं अनुवाद समीक्षक, अलग-अलग व्यक्ति होते हैं। अगर ये दोनों 'रोल' एक ही व्यक्ति को करने हों तो दोनों स्थितियों के बीच का समय इतना व्यवधान जरूर हो कि एक का दूसरे पर विपरीत प्रभाव न पड़े।

अनुवाद समीक्षा जहाँ एक तरफ अनुवाद के कौशल का मूल्यांकन है वहाँ लक्ष्यभाषा के अभिव्यक्त संसाधनों का भी उस सीमा तक मूल्यांकन है जिस सीमा तक उनके द्वारा मूल भाषा पाठ के विभिन्न पक्षों की लक्ष्यभाषा में शुद्ध एवं उपयुक्त रीति से आवृत्ति हुई है। इस तरह अनुवाद समीक्षा में अनुवाद के व्यक्तिपरक तथा निर्वैयक्तिक (भाषापरक) पक्षों के मध्य सन्तुलन रहता है।

अनुवाद समीक्षा के उद्देश्य- अनुवाद समीक्षा से निम्न उद्देश्यों की पूर्ति होती है-

(1) इससे अनुवाद कार्य के स्तर को ऊंचा उठाने में मदद मिलती है। अनूदित पाठ के गुण-दोष विवेचन से अनुवाद कार्य की त्रुटियों का ज्ञान होता है जिन्हें दूर करने का प्रयास किया जाता है। इसके कारण अनुवाद कार्य के स्तर में सुधार होता है।

(2) इससे अनुवादकों के सामने श्रेष्ठ अनुवाद का मानक उपस्थित होता है। गुण-दोष विवेचन के बाद सुधरे हुए अनुवाद को अनुवादक अपना आदर्श मानकर अपने कार्य में प्रवृत्त होता है।

(3) अनुवाद समीक्षा से विशिष्ट कालखण्ड में तथा विशिष्ट ज्ञान क्षेत्र में अनुवाद संबंधी विचारों पर प्रकाश पड़ता है। उदाहरण हेतु, बीसवीं शताब्दी के प्रथम चरण में जगन्नाथदास 'रत्नाकर' ने एलेक्जेण्डर पोप की पद्यबन्द रचना 'ऐसे ऑन क्रिटिसिज्म' का 'समालोचनादर्श' (1919) शीर्षक से रोला छन्द में पद्यबद्ध अनुवाद किया। उसकी आज हम समीक्षा करें तो हमें अनुवाद चिन्तन संबंधी तत्कालीन प्रवृत्तियों का ज्ञान होगा। इस उदाहरण के आधार पर कहा जा सकता है कि बीसवीं शताब्दी के आरम्भिक चरण में साहित्य-समीक्षा संबंधी लेखन के पद्यबद्ध अनुवाद भी स्वीकार्य होते थे, हालांकि समीक्षा जैसे विषय की प्रकृति को देखते हुए मूल पाठ के पद्यात्मक होते हुए भी, उसका गद्यानुवाद उपयुक्त रहता है। यह भी कहा जा सकता है कि उस समय अनुवाद के सन्दर्भ में मूल पाठ की विधा के अनुरक्षण को ज्यादा महत्व मिलता था, प्रतिपाद्य की प्रवृत्ति को कम। प्रतिपाद्य की प्रकृति के अनुसार लक्ष्यभाषा में विधा का निर्माण करने की प्रवृत्ति तत्कालीन अनुवादकों में नही थी। दूसरी बात यह कही जा सकती है कि पद्यात्मक होने से तत्कालीन रूढ़ि के अनुसार साहित्य-समीक्षा जैसे विषय हेतु भी ब्रजभाषा (जो विशेषतया काव्य-सर्जना हेतु विशेष उपयुक्त मानी जाती थी) का प्रयोग होता था, मानक हिन्दी का नहीं, हालांकि महावीरप्रसाद द्विवेदी के प्रभाव से उस समय ज्ञान के साहित्य हेतु मानक हिन्दी का व्यवहार स्थिर हो गया था। इसके अलावा शाब्दिकता एवं प्रकार्यात्मकता के आधार पर भी समीक्षा के कुछ बिन्दु निर्धारित होंगे।

(4) अनुवाद समीक्षा के द्वारा हमें महत्वपूर्ण लेखकों की रचनाओं एवं महत्वपूर्ण अनुवादकों के अनुवाद-कार्य के विवेचन तथा मूल्यांकन में मदद मिलती है। 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' के राजा

लक्ष्मणसिंह कृत अनुवाद 'शकुन्तला नाटक' (1863) की समीक्षा से मूलकृति के विषय में हमारी समझ में वृद्धि होती है। इसी के साथ राजा लक्ष्मणसिंह का एक प्रतिष्ठित अनुवादक के रूप में मूल्यांकन कर सकते हैं, जिससे आनुषंगिक रूप में तत्कालीन अनुवाद-कार्य संबंधी आदर्शों का भी हमें ज्ञान होता है।

(5) अनुवाद समीक्षा के द्वारा हम मूलभाषा तथा लक्ष्यभाषा के शब्दकोश एवं व्याकरण का और भाषा-शैली एवं पाठ-प्ररूप संबंधी असमानताओं का समीक्षात्मक विवेचन कर सकते हैं एवं इस तरह दोनों भाषाओं के व्यतिरेकात्मक संबंध के विषय में अपनी जानकारी बढ़ा सकते हैं।

(6) अनुवाद समीक्षा का शिक्षणात्मक आयाम भी है। अनुवाद समीक्षा को सिखाकर हम अनुवाद-शिक्षार्थी की अनुवाद-सिद्धान्त संबंधी चेतना को व्यावहारिक स्तर पर पुष्ट करते हैं।

अनुवाद समीक्षा की प्रविधि तथा प्रारूप-अनुवाद समीक्षा के निम्न सोपान होते हैं-

(1) अनुवाद समीक्षा हेतु पाठयुगल-मूलभाषा एवं उसके अनुवाद का चयन।

(2) निम्न पक्षों की दृष्टि से मूलभाषा पाठ का विश्लेषण-मूल अभिप्राय, प्रमुखतम भाषा प्रकार्य, अर्थ-व्यंजना, प्रतिपाद्य, प्रयुक्ति अथवा भाषा शैली (वाक्य रचना एवं शब्दकोश पर आधारित), साहित्यिक गुण, सांस्कृतिक विशेषताएँ, उद्दिष्ट पाठक वर्ग और सामान्य परिवेश।

(3) उपर्युक्त पक्षों की दृष्टि से मूलपाठ एवं अनुवाद की विस्तृत तुलना- असमान बिन्दुओं पर विशेष बल देते हुए।

(4)(क) दोनों पाठों के समग्र प्रभावों के मध्य का अन्तर का आकलन, एवं (ख) अनुवादक द्वारा प्रयुक्त अनुवाद-प्रणाली का संकेत तथा अनुवाद का मूल्यांकन। अन्तर का आकलन करते हुए अनुवाद के दोषों का भी विवेचन किया जायेगा।

अनुवाद समीक्षा हेतु समीक्षक में प्रतिभा तथा कल्पना के गुण जरूरी हैं जिससे वह अनुवाद-सिद्धान्त के प्रासंगिक पक्षों का अनुवाद समीक्षा हेतु उचित अनुप्रयोग कर सके। यह दृष्टव्य है कि इसमें समीक्षक की व्यक्तिनिष्ठता की प्रधानता रहना स्वाभाविक है। तथापि अनुवाद-सिद्धान्त से अनुशासित होने से समीक्षक की व्यक्तिनिष्ठता नियंत्रित रहती है तथा इसी दृष्टि से अनुवाद समीक्षा में वस्तुनिष्ठता का अवकाश है।

अनुवाद समीक्षा के दो आयाम हैं-वर्णनात्मक तथा तुलनात्मक। वर्णनात्मक आयाम में मूलपाठ के एक अनुवाद की समीक्षा की जाती है, यह द्विपक्षीय प्रक्रिया है। तुलनात्मक आयाम में मूलपाठ के न्यूनतम दो अनुवादों की समीक्षा होती है, यह त्रिपक्षीय प्रक्रिया है-एक तरफ मूलपाठ से तुलना एवं दूसरी तरफ अनुवाद से तुलना।

अनुवाद समीक्षा हेतु यथोचित रूप से अनुवाद-परीक्षण की विधियों का उपयोग किया जाता है। अनुवाद की सफलता की जाँच करना एवं उसे मापना अनुवाद समीक्षा के अन्तर्गत आता है जिसका उपयोग अनुवाद समीक्षा की गुणवत्ता के मूल्यांकन में होता है।

अनुवाद समीक्षा के नमूने- इस अनुवाद समीक्षा के दो नमूने पेश कर रहे हैं जिनमें अनुवाद समीक्षा की प्रविधि तथा प्रारूप का व्यावहारिक रूप प्रदर्शित किया गया है। पहले पाठ की विशेषताएँ हैं-शास्त्रीय प्रयुक्ति, सूचनात्मक प्रकार्य की प्रधानता, निर्वैयक्तिकता, औपचारिक अतएव संयत एवं गम्भीर लेखन। दूसरे पाठ की विशेषताएँ हैं-पत्रकारिता की प्रयुक्ति, प्रभावपरक-अभिव्यंजक प्रकार्य की प्रधानता, व्यक्तिनिष्ठता, अर्ध-औपचारिक अतएव शीघ्रता में प्रस्तुत हल्का-फुल्का लेखन। उपर्युक्त व्यतिरेक के अलावा अन्य व्यतिरेक गुणवत्ता के स्तर पर है जो आनुषंगिक न होकर सोद्देश्य चयन का परिणाम है। वह यह कि पहला अनुवाद सफल अनुवाद का उदाहरण है, दूसरा सदोष अनुवाद

का। हम यह भी दिखाना चाहते हैं कि सफल अनुवाद की सफलता का विशदीकरण कैसे किया जाता है एवं सदोष अनुवाद के दोष को कैसे स्पष्ट किया जाता है? इससे मूल्यांकन के स्तर पर अनुवाद समीक्षा का स्वरूप स्पष्ट हो जायेगा।

1. Linguists sometime talk of the 'double articulation' (or 'double structure') of language; and this phrase is frequently understood, mistakenly, to refer to the correlation of the two planes of expression and content. What is meant is that the units on the 'lower' level of phonology (the sounds of a language) have no function other than that of combining with one another to form the 'higher' units of grammer (words). It is by virtue of the double structure of the expression-plane the languages are able to represent economically many thousands of different words" (John Lyons : 'Introduction to Theoretical Linguistics', 1971, P. 54)

"भाषाविद् बहुधा भाषा के द्विगुण संधान या उसकी 'दोहरी संरचना' की चर्चा करते हैं। प्राय: भ्रमवशात इस संज्ञा का अर्थ अभिव्यक्ति तथा वस्तु के दो धरातलों के सहसंबंध से लिया जाता है। पर इसका अभिप्राय यह है कि ध्वनि प्रक्रिया के निम्न स्तर की इकाइयों, भाषा की ध्वनियों का इसके अतिरिक्त अन्य कोई कार्य नहीं है कि वे एक-दूसरे से संयुक्त होकर व्याकरण की उच्चतर कोटि की इकाइयों (शब्दों) का निर्माण करें। अभिव्यक्ति के तल की इस दोहरी संरचना के कारण ही यह सम्भव हो पाता है कि भाषाएँ बड़ी मितव्ययिता से ही सहस्त्रों भिन्न-भिन्न शब्दों के निर्माण में समर्थ हो पाती हैं।" (जोन लियोन्स : सैद्धान्तिक भाषाविज्ञान, 1972, पृष्ठ 57)।

मूलपाठ, विचारात्मक पाठ प्रारूप में शास्त्रीय प्रयुक्ति का पाठ है जिसकी विषयवस्तु आधुनिक भाषाविज्ञान से संबंधित है। इसमें सूचनात्मक भाषा प्रकार्य की प्रधानता है। यह वाच्यार्थ प्रधान पाठ है जिसमें भाषा की दोहरी संरचना के विषय में एक भ्रान्ति का निवारण करते हुए वस्तुस्थिति को स्पष्ट किया गया है। विषय-वस्तु के अनुरूप पारिभाषिक शब्दों articulation, structure, phonology, grammer का एवं इस तरह के लेखन के उपयुक्त, संयुक्त तथा जटिल वाक्यों का प्रयोग किया गया है। इसके उद्दिष्ट पाठक आधुनिक भाषाविज्ञान के प्रगत स्तर के छात्र एवं विशेषज्ञ हैं। इसका परिवेश औपचारिक है एवं यह पाश्चात्य शास्त्रीय चिन्तन की बौद्धिक संस्कृति की परम्परा के अन्तर्गत है।

अनूदित पाठ में असमानता के बिन्दु सिर्फ व्याकरण एवं शब्दकोश के स्तरों पर मिलते हैं और वे काफी सीमित संख्या में हैं। शेष पक्षों की दृष्टि से दोनों पाठ समान हैं। पाठों की अन्तर्वाक्ययोजक अभिव्यक्तियाँ "What is meant is...." = पर इसका अभिप्राय यह है' विप्रतिषेधक प्रकार्य की दृष्टि से समान हैं। दूसरी अभिव्यक्ति 'It is....' की बलात्मकता की तुल्यबल अभिव्यक्ति 'ही' अनूदित पाठ के वाक्य के आरम्भ में न आकर कुछ पीछे आई है, जो हिन्दी वाक्यरचना के नियम के अनुसार है। दोनों ही सन्दर्भों में अन्तर्वाक्ययोजकों के प्रकार्य-क्रमश: विप्रतिषेधकता एवं बलात्मकता सुरक्षित हैं। शब्दकोष के खण्ड में पारिभाषिक शब्दों के मानक अनुवाद पर्याय दिये गये हैं, 'represent' = 'निर्माण' की पर्यायता सन्दर्भनिष्ठ है। 'वस्तु' के स्थान पर कष्टसाध्य का चयन बेहतर होता है, क्योंकि 'वस्तु' के स्थान पर हिन्दी में 'कथ्य' अधिक प्रचलित है। दोनों पाठको के विराम चिह्न योजना का अन्तर सिर्फ सतही है।

समग्र प्रभाव की दृष्टि से दोनों पाठों में समानता है। अनुवादक ने शाब्दिकता प्रधान तथा अर्थकेन्द्रित अनुवाद प्रणाली का सहारा लिया है। यही कारण है कि वाक्यरचना कभी-कभी असहज

प्रतीत होती है एवं अनुवादाभास का-सा प्रसंग उपस्थित करती है। मूल उद्धरण एवं प्रस्तावित संशोधन क्रमशः इस तरह हैं-(1) 'अभिव्यक्ति तथा वस्तु के दो धरातलों के सहसंबंध' = 'अभिव्यक्ति' एवं वस्तु, इन दो धरातलों के बीच सहसंबंध।' (2) 'इसके अतिरिक्त...निर्माण करें' = 'केवल एक ही कार्य है वे एक-दूसरे के साथ इस तरह संयुक्त हों कि उनसे व्याकरण की उच्चतर कोटि की इकाइयों शब्दों का निर्माण हो।' इसी सन्दर्भ में यह स्पष्टकीरण अपेक्षित है कि 'निम्नतर', 'उच्चतर' आदि शब्दानुगामी अनुवाद-पर्याय इस तथ्य के द्योतक हैं कि यह आधुनिक भाषा विज्ञान से संबंधित लेखन है, जिसमें ऐसी नवीन संकल्पनाओं का होना स्वाभाविक है जिनके लिए सममूल्य शब्दों का स्वदेशी परम्परा में अभाव है।

इस समीक्षा के आधार पर कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि अनुवाद सफल है एवं विषयवस्तु की अपेक्षाकृत नवीनता को ध्यान में रखते हुए सम्प्रेषणीय और स्वीकार्य कहा जा सकता है। मूलपाठ का सुगठन अनूदित पाठ में भी संक्रान्त हो गया है।

2. A couple of years ago a very dear friend was operated upon for a slipped disc and had to spend several weeks at the All India Institute of Medical Science, I went to see her every afternoon for the five or six weeks that she was in hospital. For the first few days she was alone in a private room which overlooked other wards. The atmosphere was most gloomy. Then she was shifted to the general ward and shared a room with six other ladies. It did not take them long to become friends and share the fruits and other delicacies their relatives and friends brought them. What appeared to me to be the most interesting part of their otherwise drab routine of bedpans, visits by nurses and doctors was the unending stream of monkeys scampering along the ledge and flattening their faces against glass panes to beg for bananas and 'laddoos' from the patients. I was told that at times they got so excited at the sight of food that they hammered at the glass and broke it. There was some talk of exterminating them. I am glad this was not done becuase I felt that their presence contributed to the spendid recovery of patients (Khushwant Singh : With malice towards one and all : The Hindustan times' 25 August 1984).

"कुछ वर्ष पूर्व बहुत प्रिय मित्र का आल इण्डिया इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइंसेज में कूल्हा उतर जाने के लिए आपरेशन हुआ था। वह पाँच-छह सप्ताह जब तक अस्पताल में रही, प्रत्येक दोपहर मैं उसे देखने जाता था। पहले कुछ दिनों वह एक प्राइवेट कमरे में अकेली थी जहाँ से दूसरे वार्ड नहीं दिखते थे। वातावरण बहुत ज्यादा अवसादपूर्ण था। फिर उसे जनरल वार्ड में भेजा गया जहाँ कमरे में 6 अन्य महिलाएँ भी थीं। उन्हें आपस में मित्र बनने में देर नहीं लगी तथा अपने संबंधियों एवं मित्रों द्वारा लाये गये फल और खाने-पीने की चीजें आपस में बाँटने लगीं। मुझे वहाँ और दैनिक बातों के अतिरिक्त जो सबसे अधिक दिलचस्प बात लगी, वह थी खिड़की के ऊपर शीशे से अपना मुँह रगड़ते बन्दरों की लम्बी कतार जो मरीजों से केले तथा लड्डू माँगते थे। मुझे बताया गया कि कभी-कभी वे खाने को देखकर इतने उत्तेजित हो जाते थे कि शीशे से टकराकर उसे तोड़ देते थे। उन्हें भगा देने की बात भी सुनने में आई। मुझे खुशी है कि ऐसा नहीं किया गया क्योंकि मैंने सोचा कि उनकी उपस्थिति का मरीजों के जल्दी अच्छा होने में योगदान है।" (खुशवन्त सिंह : न काहू से दोस्ती न काहू से बैर., अमर उजाला, 25 अगस्त, 1984)।

इस वर्णनात्मक-विवरणात्मक पाठप्ररूप में पत्रकारिता की प्रयुक्ति का पाठ है जिसकी विषय-वस्तु जीवन का एक सामान्य अनुभव है जिसे लेखक ने एक संस्मरण के रूप में पेश किया है। इसमें अभिव्यंजक-प्रभावपरक भाषाप्रकार्य की प्रधानता है। यह एक व्यावसायिक स्तम्भ लेखक का वाच्यार्थ-प्रधान पाठ है जिसमें उसने अस्पताल के चारों तरफ बन्दरों की उपस्थिति को रोगियों के स्वस्थ होने में मददगार बताया है। विषयवस्तु के अनुरूप सामान्य शब्दों का ही इसमें प्रयोग है लेकिन यह लेखक की शैली की विशेषता है कि वह जटिल एवं संयुक्त वाक्यों का प्रधानता से प्रयोग करता है। इसके उद्दिष्ट पाठक हैं विभिन्न व्यवसायों में लगे शिक्षित लोग जो समाचार-पत्रों में प्रकाशित विशिष्ट लेखकों के स्तम्भों को रुचि से पढ़ते हों। इसका परिवेश अर्थ-औपचारिक है एवं समाचार-पत्रों के माध्यम से व्यक्त जनसम्पर्कीय संस्कृति की परम्परा के अन्तर्गत है।

अनूदित पाठ को पढ़कर पहला प्रभाव जो पाठक के मन पर पड़ता है वह अनुपयुक्तता का है। पाठ का समग्र प्रभाव बिखरा हुआ एवं शिथिल है। जनसम्पर्क माध्यम का लेखन-होने के नाते पाठक यह आशा करता है कि उसे अनुवाद में स्वाभाविक हिन्दी पढ़ने को मिलेगी। इसके अनुसार इस पाठ का अनुवाद सम्प्रेषण केन्द्रित प्रणाली द्वारा होना उपयुक्त था जिससे वह स्वतंत्र अनुवाद का उदाहरण बनता। लेकिन यह शाब्दिक अनुवाद हो गया है जो अनावश्यक रूप से कहीं-कहीं दुर्बोध एवं प्रायः समग्र रूप से असहज प्रतीत होने से अनुवादाभास का उदाहरण बन गया है। जनसम्पर्कीय प्रकृति के कारण अनुवाद में लेखकीय शैली का सर्वांश में संरक्षण जरूरी नहीं। इसमें लक्ष्यभाषा की प्रयुक्ति विशेष से सम्बद्ध प्रकृति का संरक्षण होना ज्यादा वांछनीय है। हिन्दी के पाठ के लिए लेखक की विशिष्टता का महत्व इसलिए नहीं है क्योंकि वह हिन्दी का लेखक नहीं है (इस दृष्टि से 'सुनो भई साधो' स्तम्भ के लेखक हरिशंकर परसाई से तुलना वांछनीय है जो हिन्दी के लेखक हैं)। वे सिर्फ स्तम्भ को प्रधान रूप से विषय-वस्तु के चयन की मनोरंजकता की दृष्टि से पढ़ते हैं।

कुल मिलाकर इसकी समीक्षा नकारात्मक है जिसके प्रमुख बिन्दु हैं-शब्दानुगामिता, कुछ अंशों का गलत एवं अपर्याप्त अनुवाद और प्रभाव में समग्रता का अभाव। शब्दानुगामिता के उदाहरण एवं प्रस्तावित न्यूनतम संशोधन निम्न तरह हैं-

(क) 'कुछ वर्ष पूर्व एक बहुत प्रिय मित्र का'...=मेरी बहुत प्रिय मित्र हैं जिनका कुछ वर्ष पूर्व...।' (ख) वह पाँच-छह सप्ताह जब तक अस्पताल में रहीं प्रत्येक दोपहर मै उसे देखने जाता था'='वह पाँच-छह सप्ताह अस्पताल में रहीं तथा प्रतिदिन दोपहर बाद मैं उन्हें देखने जाता था।' (ग) 'उन्हें आपस में मित्र बनने में देर नहीं लगी'= 'वे जल्दी ही मित्र बन गईं।' (घ) 'मुझे बताया गया'='लोगों ने बताया'। (ड) 'मैंने सोचा कि...योगदान है'='मेरा विचार है कि उनके वहाँ होने से मरीजों को जल्दी अच्छा होने में मदद मिलती है।'

जिन अंशों का अनुवाद गलत एवं अपर्याप्त हुआ है वे निम्न हैं (इन्हें इस क्रम में रखा गया है-मूल अंश, उपलब्ध अनुवाद, प्रस्तावित अनुवाद)।

(क) for a slipped disc = 'कूल्हा उतर जाने के लिए' = 'कूल्हा उतर जाने के कारण।'

(ख) otherwise drab routine of bed-pans, visits by nurses and doctors ='और दैनिक बातों के अलावा'='(मुझे वहाँ)' की ढर्रेदार जिन्दगी में।'

(ग) exterminating = 'भगा देना' = 'खत्म कर देना (मार देना)।'

प्रभाव में समग्रता के अभाव का प्रमुख कारण है-हिन्दी की प्रकृति के अनुरूप अन्तर्वाक्ययोजकों के प्रयोग का अभाव। मूल पाठ में उनका न होना लेखक की शैली का वैशिष्ट्य है, लेकिन जैसा कि पहले भी संकेत किया जा चुका है, हिन्दी अनुवाद में लेखक की शैली के वैशिष्ट्य का सर्वांश में संरक्षण आवश्यक नहीं। उदाहरण के लिए, 'वातावरण बहुत ज्यादा अवसादपूर्ण था' के आरम्भ में 'इसलिए कमरे का' यह अंश जोड़ देने से वाक्यों का पूर्वापर संबंध विशद हो जाता है एवं हिन्दी पाठ स्वाभाविक प्रतीत होता है। हिन्दी का पाठक पत्रकारिता के सन्दर्भ में स्वाभाविक हिन्दी के प्रयोग की आशा करता है, उसके लिए मूलभाषा के स्तम्भ-लेखक का व्यक्तिवैशिष्ट्य प्रासंगिक नहीं।

शिक्षक और विद्यार्थी से- अनुवाद समीक्षा के ये नमूने सिर्फ उदाहरण के तौर पर हैं एवं समीक्षा का एकमात्र प्रारूप नहीं। विद्यार्थी का स्तर, अनूदित पाठों की प्रकृति, अनुवाद समीक्षा का विशिष्ट उद्देश्य आदि के आधार पर अनुवाद समीक्षा के इससे भिन्न प्रारूप भी निश्चित किये जा सकते हैं। वांछनीय शर्त यह है कि जिन प्रारूपों को भी व्यवहार किया जाए उनमें अनुवाद-सिद्धान्त से संगति का गुण हो। इससे समीक्षक की व्यक्तिनिष्ठता यथासम्भव सीमा तक नियंत्रित हो सकेगी।

अनुवाद की सार्थकता, प्रासंगिकता तथा व्यावसायिक परिदृश्य

आज विश्व-भर में अनुवाद की जरूरत को तीव्रता से महसूस किया जा रहा है। विज्ञान, टेक्नोलॉजी, कला-साहित्य-संस्कृति, दर्शन, राजनीति, समाजशास्त्र, वनस्पति-विज्ञान आदि ज्ञान की तमाम शाखाओं-प्रशाखाओं में हो रहे एक देश के कार्य को दूसरे देश तक पहुँचाने में अनुवाद की महत्वपूर्ण भूमिका है। अनुवाद के द्वारा एक देश अन्य देशों के विचारों, कार्यों, सांस्कृतिक-राजनीतिक, सामाजिक-आर्थिक हलचलों, अनुभवों, प्रयोगों तथा अनुसन्धानों से तो गहन से गहनतर सम्पर्क स्थापित करता ही है, साथ ही साथ सांस्कृतिक संबंधों को निकट लाने एवं बढ़ाने में भी सेतु का काम करता है। मानव की समस्त सांस्कृतिक प्रगति, ज्ञान-माध्यमों में प्राचुर्य तथा संचार-साधनों में द्रुतगति के कारण आज विचारों, तकनीकों तथा महत्वपूर्ण समाचारों, अनुबन्धों के परस्पर विनिमय की गति भी तीव्र से तीव्रतर होती जा रही है। प्रतिदिन मानव नये से नये ज्ञान-क्षेत्रों के कपाट खोल रहा है। ऐसी स्थिति में अनुवाद-कार्य की आवश्यकता तथा महत्ता असंदिग्ध है।

प्रत्येक देश तथा जाति की अपनी निजी सांस्कृतिक विरासत और जीवन-दृष्टि होती है। संघर्षों से जूझकर कमाये गये जीवन-मूल्य होते हैं। सांस्कृतिक-ऐतिहासिक, सामाजिक-आर्थिक, राजनीतिक-धार्मिक, नैतिक विकास की विशिष्ट ढंग की विशिष्टताएँ होती हैं। प्रायः इन विशिष्टताओं में ही जाति की सम्पूर्ण अन्तर्मानसिकता निहित होती है। यह अन्तर्मानसिकता ऐतिहासिक पीठिका की अनवरतता तथा कालचक्र से जुड़ी होती है। विभिन्न देशों के तथा कालों के भावों, विचारों, संकल्पनाओं, प्रत्ययों एवं कृत्यों में मानव का सम्पूर्ण बौद्धिक एवं कार्यात्मक-ज्ञानात्मक भण्डार अनुवाद के माध्यम से मुक्त विचार-विनिमय व्यापार में प्रवृत्त होता है।

मानव के पास आयु, समय तथा साधन की एक सीमा रहती है। हर व्यक्ति संसार की हर भाषा नहीं सीख सकता। ऐसी स्थिति में अनुवादक ही वह माध्यम है, जिसके द्वारा हम सभी भाषाओं से सम्पर्क स्थापित कर सकते हैं। युगों से अनुवादक अपना यह विशिष्ट ढंग का कार्य करता चला आ रहा है। इस तरह सभ्यता के विकास में वह सृजनात्मक योगदान देता रहा है। अनुवादक के इस उदात्त तथा निष्ठापूर्वक कार्य के अभाव में विभिन्न देश एवं संस्कृतियाँ किसी द्वीप से अधिक न रही होतीं, जो अपने आपमें तो शायद बहुत सुन्दर होतीं, क्योंकि अलग-अलग इकाइयों के रूप

में पड़ी रही होतीं लेकिन उनके निवासी सम्पूर्ण विश्व से अलग-थलग पड़ गये होते तथा विस्तृत ज्ञान-क्षेत्र से उनका जीवन्त सम्पर्क कट गया होता। इसके साथ ही विस्तृत ज्ञान से वंचित हो जाने से वे हमेशा हेतु अपनी मानसिक तथा भौतिक सीमाओं में जकड़े रहकर कूपमण्डूक बन गये होते। संसार की तमाम ज्ञान-वायु फेंकने वाली खिड़कियाँ उन तक खुल ही नहीं पातीं। मानव का यह अपूर्ण विकास बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण हुआ होता।

आज विश्व-भर में ज्ञान का पुराना समाजशास्त्र बड़ी तेजी से बदलाव ले रहा है। पुरानी दुनिया के स्थान पर एक नया चेहरा जन्म लेने की कोशिश कर रहा है। विज्ञान के नये अनुसंधानों तथा आविष्कारों के क्षेत्र में इस ढंग के परिवर्तन इस शताब्दी में बहुत हुए हैं। कुछ देश तो विज्ञान के क्षेत्र में बहुत आगे बढ़ गये हैं तथा शेष पिछड़ रहे हैं। इन पिछड़े देशों में विकसित देशों के ज्ञान-विषय को फौरन पहुँचाने की जरूरत है एवं यह काम अनुवादक ही सही ढंग से पूरा कर सकता है अथवा ज्ञान-विज्ञान की सम्पूर्ण जानकारी उन तक पहुँचा सकता है।

गहराई से विचार करने पर यह बात स्पष्ट होने लगती है कि अनुवाद अर्जित-उपार्जित ज्ञान की निरन्तरता बनाये रखने वाला भाषा-दर्शन है। यह प्राचीन ज्ञान को भाषाश्रम से नये युग में ढोकर लाता है। इस तरह हम अपनी परम्परा से सीधे साक्षात्कार करते हैं तथा परम्परा के संग्रह-त्याग की विवेक-भावना को भी विकसित-परिष्कृत करते हैं। इस दृष्टि से अनुवाद परम्परा का नवीनीकरण है जिसे परम्परा की आधुनिकता का कार्य भी कहा जा सकता है।

अनुवाद-प्रक्रिया में देश तथा जाति की आत्मसजगता, स्वचेतनता और आत्मविस्तार का भाव निहित रहता है। एक तरफ तो जो हमारे पास नहीं है, उसे ग्रहण करने की बलवती इच्छा रहती है एवं दूसरी तरफ जो हमारे पास अपनी भाषा एवं संस्कृति में मौजूद है, उसे ज्यादा-से-ज्यादा दूर तक फैलाने तथा प्रसारित करने की आकांक्षा। उदाहरणस्वरूप यूरोप के नवजागरण काल को देखा जा सकता है। नवजागरण काल में इटली के विद्वान ग्रीक भाषा तथा संस्कृति की विपुल ज्ञान-राशि को श्रम से अपनी भाषा में अनूदित करके लाये। जिसके कारण सम्पूर्ण यूरोप में ज्ञान के प्रति उत्कट लालसा की लहर फैल गई एवं यूरोप के हर देश में इटली ज्ञान को लाने-पाने की धूम मच गई। सम्पूर्ण यूरोप मध्यकालीन अन्धकार तथा अज्ञानता से उबरकर नये ज्ञान के प्रकाश में दीप्त हो उठा। यूरोप में नवजागरण काल के भीतर भी अनुवाद की बड़ी भूमिका रही है। इस तरह आने वाली पीढ़ियों के लाभार्थ पुनर्जागरण काल में सम्पूर्ण ग्रीक-साहित्य तथा ज्ञानविज्ञान लैटिन भाषा में अनूदित किया गया है।

हमारे आसपास जो घटित हो चुका है, अथवा घटित हो रहा है, उसके प्रति जागरुकता का परिणाम है-अनुवाद कार्य। हिन्दी-साहित्य का आधुनिक युग आधुनिकता का प्रवेश-द्वार इसलिए कहा जाता है कि भारतेन्दु बाबू ने अपने ऐतिहासिक बोध को सही दिशा-द्वार दिया तथा युगीन आवश्यकताओं को समझते हुए पाश्चात्य-साहित्य से सीधा सम्पर्क स्थापित किया। एक तरफ तो वे संस्कृत नाटकों के हिन्दी रूपान्तर पेश कर रहे थे, दूसरी तरफ महान् कलाकार शेक्सपियर के नाटकों के हिन्दी अनुवाद में सक्रिय रहे। परिणामस्वरूप त्रासदी-कामदी आदि नये नाट्य-रूपों से हिन्दी-साहित्य को परिचित कराया। पुराने हिन्दी काव्य-शास्त्र को झटका देकर नवीनीकरण की तरफ प्रवृत्त किया। ऐसा करते हुए उन्होंने जिस जागरुकता का परिचय दिया, उसका नितान्त अभाव अपने परिवेश के प्रति उदासीन रीतिकालीन कवियों में देखा जा सकता है। भारतेन्दु के इस प्रयत्न से तत्कालीन लेखकों को नवीन दिशा तथा दृष्टि मिली है। पं. जगन्नाथदास रत्नाकर ने पोप के निबन्ध

का 'समालोचनादर्श' नाम से बरवै छन्द में अनुवाद किया। इस तरह अनुवाद कार्य की इस युग में धूम मच गयी। इस तथ्य से आज कौन प्रबुद्ध व्यक्ति असहमति व्यक्त कर सकता है कि इन जागरुक कलाकारों ने नया युग ही ला दिया।

इस तरह अनुवादक की स्वभाषा एवं स्वसंस्कृति के प्रति निष्ठा उसे बहुत गुरु-गम्भीर दायित्व में डाल देती है। जो अन्य भाषाओं में है, उसे अपनी भाषा में ले आने एवं जो अपनी भाषा में है उसे अन्य भाषाओं को मुक्तहस्त से देने तथा प्रसारित करने की लालसा अनुवादक की आत्म-सजगता का प्रतीक है, आत्म-विस्तार का प्रतीक है, परतन्त्रता से मुक्ति की कामना का प्रतीक है। स्वभाषा-विस्तार तथा स्वभाषा में चिन्तन की आकांक्षा का प्रतीक है।

जहाँ एक तरफ अनुवाद से भाषा का विस्तार होता है वहाँ दूसरी तरफ उसका स्रोत-भाषा (Source language) की अनुगामिनी बन जाने का खतरा भी रहता है। यह खतरा हिन्दी में महसूस भी किया जा रहा है, पर यह खतरा अपने आप में आत्यन्तिक नहीं है। इसकी सम्भावना तभी होती है, जब हम अपनी भाषा में सोचना बन्द कर देते हैं तथा दूसरी भाषा के समानार्थक शब्दों को खोजने एवं गढ़ने में ही अपनी शक्ति लगा देते हैं। समकक्ष शब्द न मिल पाने पर यह मान लेते हैं कि भाषा में उस भाव को व्यक्त करने की क्षमता ही नहीं है। पर कोई भी भाषा इतनी दरिद्र नहीं होती कि अपने बोलने-सोचने वाले के भावों-विचारों, भंगिमाओं तथा अभिव्यक्तियों को वहन करने में अक्षम हो। प्रश्न तो यह उठता है कि हम भाषा से कितना माँगते हैं। हम जिस भाव से भाषा से जितना माँगते हैं, वह उतना ही देती है। संस्कृत में इसीलिए वाणी को 'कामधेनु' कहा गया है तथा कवि अज्ञेय उसे 'कल्पवृक्ष' कहते हैं।

सच तो यह है कि अनुवाद के माध्यम से भाषा समृद्ध होती है। नये भावों, नये विषयों, नये विचारों तथा नयी अभिव्यक्ति-पद्धतियों को व्यक्त करने के प्रयास से भाषा की अभिव्यक्ति-क्षमता का विस्तार होता है, उसका शब्द-भण्डार विस्तृत होता है। नये-नये विषयों का समावेश होने पर उनके समकक्ष खोजे जाते हैं, नये शब्द निर्मित (Coin) किये जाते हैं एवं अन्य भाषाओं के शब्द ज्यों के त्यों या थोड़े-बहुत हेर-फेर अथवा परिवर्तन के साथ ग्रहण कर लिये जाते हैं; जैसे-अंग्रेजी 'Hour' के लिए हिन्दी में 'घण्टा' हमारे पास मौजूद था, तथा 'Minute' को हमने 'मिनट' के रूप में ज्यों का त्यों ले लिया। 'Tragedy' तथा 'Comedy' के लिए हमने क्रमशः 'त्रासदी' एवं 'कामदी' रखा।

तकनीकी प्रगति एक दुधारी तलवार है। परमाणु-ऊर्जा, रॉकेट, दूरदर्शन आदि विश्व-शान्ति तथा कल्याण के माध्यम भी हो सकते हैं एवं युद्ध के अस्त्र भी। यह इस बात पर निर्भर करता है कि कौन नियन्ता है तथा कौन नियंत्रित? शक्ति से पूर्ण कठोर व्यक्ति अथवा मानवीय विचारों एवं कार्यों में संलग्न व्यक्ति अनुवादक को उन लोगों की श्रेणी में रखते हैं जो विचारों को भाषा के रूप में पुनःप्रस्तुतीकरण देते हैं। साहित्यकारों, राजनीतिज्ञों, विचारकों, दार्शनिकों, वैज्ञानिकों के कार्यों-विचारों को अपने देश की भाषा में अन्तरित करते हैं। विश्व साहित्य के सृजन में योगदान देते हैं तथा किसी हद तक अनुवाद की भूमिका से विचारों को जगाते हैं।

अनुवादक का स्थान साहित्य के सर्जक की भाँति है, जिसकी मदद के बगैर व्यापक मानवीय संस्कृति की परिकल्पना ही सम्भव नहीं होती है। इस बात पर जोर देने की अपेक्षा नहीं है कि वैज्ञानिक तथा पाण्डित्यपूर्ण कृतियों के अनुवादक, आख्याता, कोशकार एवं भाषाविद् सभी साहित्यिक अनुवादों के सहयोगी हैं। विभिन्न ज्ञान-क्षेत्रों के माध्यम से हमारे उद्देश्यों को प्राप्त करने में मदद करते हैं। क्योंकि हम सभी का एक ही निर्दिष्ट लक्ष्य है।

आज वैज्ञानिक जानकारी ही सम्पूर्ण वैज्ञानिक प्रयोगों का आदि तथा अन्त है। उसका तुरन्त प्रचार ही ठोस अनुसन्धान का पूरक है। दोनों ही प्रभावपूर्ण अनुसन्धान के अनिवार्य अवयव हैं। इस तरह अनुवादक सम्पूर्ण अनुसन्धान प्रक्रिया के दुर्निवार अंग हैं। उन्हें व्यक्तिगत तौर पर लगातार अपने-अपने व्यवसाय-संबंधी प्रत्ययों के विस्तार हेतु प्रयत्नशील रहना चाहिए ताकि वे आधुनिक विज्ञान तथा टेक्नोलॉजी की आवश्यकताओं की गति के साथ-साथ आगे बढ़ सकें एवं उसका पूरा साथ दे सकें।

दिन-प्रतिदिन आधुनिक संसार में एक बड़ी जरूरत यह भी दृष्टिगत होने लगी है कि हमें दुनिया की क्लासिक पद्धतियों-प्रविधियों की प्रामाणिक जानकारी हो। शुरू में तो कुछ लोग क्लासिकों की जानकारी से डरते थे कि वे हमारे ऊपर 'हावी' न हो जाएँ तथा ऐसी स्थिति में उनके अनुकरण से हमारी मौलिकता ही खतरे में न पड़ जाये। पर आज इस 'मिथ' का खण्डन हो गया है तथा क्लासिकों एवं क्लासिक चीजों की जानकारी का महत्व बढ़ रहा है। यह भी ध्यान से सोचें तो अनुवाद के द्वारा ही ज्यादा बेहतर हो सकता है।

अनुवाद के प्रति सजगता बौद्धिक जागारुकता का प्रतीक है। हमारे यहाँ तो बड़ा दुर्भाग्य यह भी रहा है कि हमने अनुवाद तथा अनुवादक को ठीक से महत्व नहीं दिया। उसके महत्वपूर्ण कार्य को समझने में भी प्राय: भूल होती रही है। अनुवाद-कार्य को हमेशा दूसरी श्रेणी का कार्य समझा-समझाया गया। जिसका सर्वाधिक बुरा परिणाम तो यही हुआ है कि अनुवादक का मनोबल गिरा है। विषय के जानकारों में इस कार्य के प्रति थोड़ी-बहुत हिचक रही है तथा श्रेष्ठ प्रतिभाओं के संस्पर्श से अनुवाद-कला काफी समय तक वंचित रही है। विचार-आन्दोलनों, ज्ञान की प्रवृत्तियों में आज विश्वभर में अन्तर्विद्याश्रयी संबंधों को लाने की जरूरत एवं समस्या है जिसके लिए अनुवाद से समर्थ माध्यम अभी मानव के पास शायद दूसरा नहीं है।

आधुनिक संसार में तुलनात्मक अध्ययन हेतु अनुवाद की जरूरत से कौन इन्कार कर सकता है। दो भाषाओं के साहित्य, विचारों एवं भाषाशास्त्र संबंधी तुलना से मानव-मनोविज्ञान के कई अज्ञात तथ्यों का रहस्योद्घाटन किया जा सकता है। क्योंकि अलग-अलग अनुशासनों में कार्य करता हुआ भी मानव-मन एक है।

किसी भी विदेशी भाषा का अध्ययन तो हम अनुवाद के माध्यम से ही कर सकते हैं। अगर यह माध्यम न हो तो मानव-सेतु ही टूटने की प्रक्रिया में दृष्टिगत हो। इस तरह विदेशी भाषा की बुनियादी शिक्षा शुरू में अनुवाद के माध्यम से ही दी जाती है तथा उसी के द्वारा हम फ्रेंच, चीनी, रूसी, जर्मन आदि भाषाओं को सीखते हैं, उन भाषाओं के भाषा-विज्ञान, भाषाशास्त्र तथा साहित्य से परिचय स्थापित कर पाते हैं।

इस तरह आज के विश्व में अनुवाद की केन्द्रीय स्थिति है। विश्वविद्यालयों में विदेशी भाषा-विज्ञान खुल जाने से इस स्थिति में और भी शक्ति पैदा हुई है।

आज यह कहना सम्भव है कि ज्ञान के गणतन्त्र के नागरिकों के मध्य अनुवादक विश्व नागरिक की हैसियत रखते हैं। उनकी अनुपस्थिति अथवा अत्यधिक सीमित उपस्थिति का तात्पर्य होगा-विज्ञान परम्परा एक स्वनिर्मित कठघरे में घिर जायेगी। उसे इस कठघरे से बाहर निकालने से वंचित रखने पर सम्पूर्ण ज्ञान-विज्ञान परम्परा एक धीमी श्रान्ति अथवा अपनी ही ऊब के कारण समाप्त हो जायेगी। विशेष रूप से आधुनिक युग में जहाँ विश्व-साहित्य अनुवादकों की गुणवत्ता के माध्यम से पुनर्जीवन या नवीन जीवन की शक्ति को प्रदर्शित करता है। कभी-कभार तो यह सिर्फ उन्हीं के प्रयासों के कारण जीवित रह पाता है। हम सभी भली-भाँति जानते हैं कि कोई भी संस्कृति तब तक जीवित रहती है जब तक वह परिवर्तन की चुनौती को भली-भाँति स्वीकार करती है।

इकाई-दो

अनुवाद विज्ञान है या कला

आज यह स्वीकार किया जा सकता है कि आधुनिक संसार में अनुवादकों ने मध्य युग के अनुवादकों की तुलना में चाहे बहुत अच्छे अनुवाद न पेश किये हों, पर यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि उन्होंने अपने कार्य की जटिलता तथा निहितार्थ को खूब भीतर से समझ लिया है। आधुनिक अनुवादकों के अनुवाद इस तथ्य की पुष्टि का बेहतर उदाहरण पेश करते हैं। अनुवाद कार्य की जरूरत को समझते हुए एक आत्म-सजग अनुवाद-शैली पैदा हुई है, जिसमें कला तथा विज्ञान दोनों के तत्व समाविष्ट हैं। अनुवाद की नयी-नयी तकनीकों को अपनाने से भी अनुवाद एक नयी तकनीक का रूप ग्रहण कर रहा है।

मूलत: अनुवादक एक विशिष्ट तरह का व्याख्याता होता है। यह व्याख्याता शब्द तथा शब्द के संदर्भ को विश्लेषित करते हुए अपनी दृष्टि निर्मित करता है। निरीक्षण-परीक्षण एवं शब्द की अनुसन्धानात्मक कला में प्रवृत्त होता हुआ यह निर्णय लेता है कि उसे किस दिशा-विशेष में प्रवृत्त होना है। 'अनु' का अर्थ है-'पीछे' तथा 'वाद' का अर्थ है-'कथन', अर्थात् पश्चाद्गमन अथवा किसी तथ्य की प्राप्ति हेतु परिपृच्छा अथवा परीक्षण करना। इस तरह तीन तथ्य हमारे सामने उपस्थित होते हैं-

(1) *स्रोत-भाषा में उपलब्ध सामग्री में पेश कथ्य का संदर्भ-विश्लेषण एवं वाक्य-विश्लेषण।*

(2) *सम्प्रेष्य कथ्य का लक्ष्य-भाषा में पुनर्गठन।*

(3) *पुनर्गठित रूप का शैलीकरण।*

इस तरह अनुवाद स्रोत-भाषा के पाठ के सम्प्रेष्य कथ्य का लक्ष्य-भाषा के पाठ में पुनर्गठन तथा शैलीकरण करते हुए अन्तरण है। अर्थ को लक्ष्य-भाषा में अन्तरित करते समय विज्ञान, कला एवं शिल्प तीनों की अपेक्षा रहती है। अत: अनुवाद, कला, शिल्प तथा विज्ञान तीनों की मिली-जुली प्रक्रिया है।

सामान्य ज्ञान एवं विशिष्ट ज्ञान में गहरा पार्थक्य है। ज्ञान साधारण जानकारी है तथा उस साधारण जानकारी का विशेष ज्ञान होने पर ज्ञान का यह विकास विज्ञान हो जाता है। लेकिन जब यह विशेष ज्ञान पुन: सामान्य ज्ञान की वस्तु बन जाता है तो उसे विज्ञान नहीं कहा जा सकता। विज्ञान वह पुन: उसी स्थिति में बनता है जब उस विद्या का सामान्य ज्ञान नवीन कार्य-कारण संबंध से पुन: विशिष्ट ज्ञान में बदल जाता है। इस तरह सामान्य ज्ञान से विशिष्ट ज्ञान बनने की यह प्रक्रिया निरंतर चलती रहती है। इसी अर्थ में विज्ञान किसी भी विषय का तर्काश्रित कार्य-कारणमय व्यवस्थित तथा विशिष्ट ज्ञान होता है। विशुद्ध विज्ञान में नियमों के अपवाद नहीं मिलते क्योंकि उसमें विकल्प के लिए कोई स्थान नहीं होता। एक तरह से विज्ञान के नियम सार्वकालिक एवं सार्वभौमिक होते हैं पर इस तरह के नियम अनुवाद पर लागू नहीं हो सकते। वे देशकाल तथा स्थिति के अनुसार अपवादों को जगह देते हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि अनुवाद सिर्फ विज्ञान नहीं है और कुछ भी है।

इस प्रसंग में एक महत्वपूर्ण प्रश्न यह भी उठता है कि अनुवाद को विज्ञान कहना कहाँ तक उचित है? वस्तुत: अनुवाद उस अर्थ में विज्ञान नहीं है जिस अर्थ में भौतिकी, जैविकी अथवा गणित

को विज्ञान कहा जाता है। यह भी सत्य है कि आज विज्ञान शब्द के प्रयोग में ढील अथवा शिथिलता के लक्षण पाये जाते हैं। उसके ज्ञान का उन शाखाओं हेतु भी प्रयोग किया जा रहा है जो वास्तविक अर्थ में विज्ञान नहीं है। ऐसा कहने का मुख्य कारण यही है कि विज्ञान का सबसे बड़ा आधार है-कार्य-कारण भाव की नित्यता। इस दृष्टि से ज्ञान की कई शाखाएँ ऐसी हैं जिनमें कार्य-कारण की नित्यता नहीं पाई जाती तथा फिर भी उन्हें चलते अर्थों में विज्ञान कह दिया जाता है; जैसे-समाज-विज्ञान, राजनीति-विज्ञान आदि।

आधुनिक विद्वान विज्ञान के क्षेत्रों को तीन वर्गों में विभाजित करते हैं-

(1) भौतिक विज्ञान, (2) समाज-विज्ञान, (3) मानविकी।

भौतिक विज्ञान का संबंध उन वस्तुओं से है जो मानवकृत नहीं हैं? समाज-विज्ञान मानव के सामाजिक क्रियाकलाप का कार्य-कारण संबंध से तार्किक अध्ययन है। मानविकी में वैयक्तिक तथा सृजनात्मक ज्ञान का अध्ययन-विश्लेषण होता है। यह भी मानना होगा कि ज्ञान के यह तीनों वर्ग परस्पर निरपेक्ष नहीं हैं। एक विज्ञान दूसरे विज्ञान की सीमा में अनुप्रवेश करता है। ऐसी स्थिति में अनुवाद-कार्य इन तीनों सीमाओं के अंदर आता है। एक तरफ उसका संबंध भाषा-विज्ञान, ध्वनि-विज्ञान, अर्थ-विज्ञान आदि से है, दूसरी तरफ वैयक्तिक एवं सृजनात्मक साहित्य रूपों से सम्बद्ध होने से आज वह मानविकी का मुख्य अंग है। इसलिए अनुवाद उस अर्थ में विज्ञान नहीं है जिस अर्थ में हम भौतिक विज्ञान अथवा समाज विज्ञान को विज्ञान कहते हैं। वह तो सिर्फ विज्ञान इसलिए है कि उसके नियम कार्य-कारण संबंधों पर आश्रित हैं। क्योंकि इन नियमों में प्रायः अपवाद भी हैं अतः अनुवाद विशुद्ध विज्ञान की सीमा में नहीं आता। लेकिन अनुवाद में कोई सिद्धान्त अथवा नियम है ही नहीं, यह भी नहीं कहा जा सकता। नियम तथा अनुभव दोनों का योग होने के कारण यह अपनी प्रवृत्ति से विज्ञान की तरफ झुकता है। अनुवाद के नियम अनुवादक हेतु साधना भी हैं एवं साध्य भी अर्थात् अनुवादक स्त्रोत-भाषा के ज्ञान को लक्ष्य-भाषा में अन्तरित करते समय अपने व्यक्तिगत विवेक तथा ज्ञान की वैज्ञानिकता का पूरा उपयोग करता है।

अनुवाद के अध्ययन की प्रक्रिया विज्ञान के अध्ययन की प्रक्रिया से निकटता रखती है, जिस तरह विज्ञान संबंधी अनुशीलन में तथ्य संकलन, तुलना, निरीक्षण, वर्गीकरण, विश्लेषण, नियम निर्धारित आदि कार्य करते हैं। इसी तरह की स्थितियाँ अनुवाद कार्य में भी आती रहती हैं। वैज्ञानिक के समान अनुवादक को भी तटस्थ रहना पड़ता है तथा अनुवाद के माध्यम से एक भाषा के कथ्य को दूसरी भाषा के कथ्य में सही ढंग से लाना पड़ता है। इस तरह वह सांस्कृतिक भाषा का एक ऐसा सम्पर्क-सूत्र खड़ा करता है जिसकी उपयोगिता सामाजिक जीवन में बहुत है। वैज्ञानिक अनुसंधानशाला में बैठकर मानव-कल्याण की तरफ प्रवृत्त होता है एवं अनुवादक स्त्रोत-भाषा की सामग्री से जूझकर मानव-कल्याण की तरफ अथवा विचार के आदान-प्रदान सुविधा की तरफ समानार्थक शब्दों अथवा नये शब्दों को खोजकर आगे बढ़ता है, दो देशों के भाषा-साहित्य तथा संस्कृतिपरक ज्ञान की सरलता, सुबोधगम्यता एवं दृष्टि की वैज्ञानिकता में पेश करता है। इस तरह अनुवादक कुछ अपवादों को छोड़कर निश्चित नियमों का अनुसरण करता है। यह प्रक्रिया पूरी तरह से वैज्ञानिक है एवं अगर इसमें वैज्ञानिक नियम न होते तो मशीनी अनुवाद सम्भव ही नहीं हो सकता था। दो भाषाओं के वैज्ञानिक अध्ययन विश्लेषण के आधार पर सुनिश्चित वैज्ञानिक नियमों ने ही इस प्रक्रिया को सम्भव बनाया है। इस तरह अनुवाद की सम्पूर्ण मानसिकता वैज्ञानिक प्रक्रिया की मानसिकता से जुड़ी है तथा अनुवादक की पूरी पृष्ठभूमि कार्य-कारण संबंध से रहित नहीं है। इसी अर्थ में अनुवाद विज्ञान कहा जा सकता है। पर अनुवाद मात्र विज्ञान ही नहीं है, वह कला एवं शिल्प भी है। कौशल का अंग्रेजी रूपान्तर है-क्राफ्ट (Craft) तथा कला का आर्ट (Art)। इस तरह से कला शब्द सभी तरह की लालित्यबोधीय अनुभूतियों, अनुभवों एवं अभिव्यक्तियों हेतु आता है।

कला को लेकर यह प्रश्न बराबर उठाये जात रहते हैं कि कला में सौन्दर्य की प्रकृति क्या है? कलाकृतियों में रूप तथा विषय-वस्तु के अन्तर्सम्बन्ध कैसे हैं? कला तथा सामाजिक जीवन के अभिव्यंजक रूप क्या-क्या हैं? समाज एवं समाज के विभिन्न वर्गों के बीच कला तथा सौन्दर्य के विषय में कौन-सी धारणाएँ हैं? वैयक्तिक तथा सामूहिक जीवन में कला का क्या स्थान है? इतिहास के विशेष बिन्दु पर सामान्य-जन हेतु कला का अर्थ एवं सार्थकता क्या है? इस बात का उत्तर यह हो सकता है कि समाज दर्शन तथा सौन्दर्यबोधशास्त्र का जो आमना-सामना है वही कला एवं जीवन का तादात्म्य है। इस तरह जीवनयुक्त कला एक क्रान्तिकारी प्रत्यय है। इसमें अनुभव-संसार तथा अभिव्यक्ति प्रणालियों एवं हमारी सौन्दर्य-रुचियों का रूपान्तरण होता है। कला बिम्बों, प्रतीकों, अभिप्रायों तथा अभिव्यंजनाओं के आयामों में उथल-पुथल मचाने की प्रक्रिया है। अभिव्यंजना की जटिल अभिव्यक्तियों, अनुभूतियों, प्रतीकों के आदिम रूपों, फन्तासियों (Fantacies) सुख-दुखात्मक भाव-प्रत्ययों को विलक्षण ढंग से प्रस्तुतीकरण देने में कला सबसे आगे है।

अनुवादक कला के इस स्वभाव में घुल-मिल जाता है। साहित्यिक अनुवादक कलाकार की भाँति कृति के रेशे-रेशे, संरचना (Structure) एवं बनावट (texture) रूप और विषय-वस्तु में गहरे से गहरे अवगाहन करता है। ऐसी दशा में उसे सौन्दर्य-तत्व ग्राह्य होता है अर्थात् वह सौन्दर्यानुभव करता है। कृति के साथ उसका यह अन्तरंग साक्षात्कार उसे निर्वैयक्तिक अनुभूति में बाँधता है तथा कलाकार की भाँति अनुवादक अपने वैयक्तिक आलोचनात्मक निर्णय को स्थगित कर देता है। कहना न होगा कि वह अनिवार्यत: कला के सौन्दर्य-वास्तविक पथों से सम्बद्ध हो जाता है। कृति के सम्पूर्ण सांस्कृतिक सन्दर्भ में वह धँसता है एवं अमूर्त सौन्दर्य-बिन्दुओं को व्यवस्थित करने में शक्ति लगाता है। इस तरह अनुवादक कला से संबंधित दूसरा व्यक्ति नहीं है। वह मात्र उल्थाकार अथवा तर्जुमाकार या भाषान्तरकार नहीं है, वह समर्थ शक्तियों से पूर्ण आख्याता तथा कलाकृति के स्वभाव के अनुकूल शैलियों को बारीकी से खोजने वाला पुन: सर्जक है, क्योंकि वह कृति का रिश्ता सम्पूर्ण सांस्कृतिक सन्दर्भ से जोड़कर देखता है तथा ऐसा करने में ही उसकी प्रतिभा सन्तुष्ट होती है। वह लाक्षणिक, आलंकारिक, संलक्षी-वक्रोक्तिपूर्ण अर्थच्छायाओं से तादात्म्यीकृत होता है एवं रूपकों और सादृश्यों की भाषा में अन्तर करता हुआ सन्दर्भ के सही आशयों को हृदयंगम करके अनुवाद करता है। इस तरह से वह एक प्रकार की रचनात्मक प्रक्रिया से जुड़ता है एवं इस रचनात्मक प्रक्रिया से सम्बद्ध होने के कारण ही अनुवाद एक कला है।

अनुवादक को अन्य भाषाओं में छपे हुए विधि-विज्ञान आदि के लेख को अभिप्रेत अर्थ समझना जरूरी है। यह अनुवाद सूचनार्थ होता है एवं इस अनुवाद में सिर्फ विषय की जानकारी ही पर्याप्त है। व्याकरणिक शुद्धता, कला-सौष्ठव, काव्य-विन्यास पर पूर्ण ध्यान अपेक्षित होता है। भाषा के कलात्मक गठन, सौन्दर्यपरक अन्तर्योजना तथा अन्तर्ग्रन्थिन, बारीक अर्थच्छाया के आदि पर दृष्टि केन्द्रित करने की अपेक्षा यहाँ नहीं होती है। साहित्यिक रचना के अनुवाद में कृति के मूल सौन्दर्य निर्वाह की अपेक्षा रहती है। वहाँ लक्ष्य-भाषा में सृजन की क्षमता बहुत जरूरी है।

अनुवाद को कला मानने का कारण मात्र साहित्यिकता नहीं है। कलाकार के बिम्बों-प्रतीकों तथा अभिप्रायों को कलापूर्ण ढंग से लाने में ही अनुवादक की मौलिकता है।

कला तथा शिल्प को अलग नहीं किया जा सकता। अलग-अलग दिखाई देने पर भी वस्तुत: यह एक-दूसरे से भिन्न नहीं होते। इस प्रकार शिल्प, कला की ही एक अवधारणा है। कला नैसर्गिक प्रतिभा का सहज विस्फोट है, अत: तमाम ललित कलाएँ अर्जन तथा शिक्षण को महत्व देने पर भी यही नारा लगाती हैं कि कलाकार पैदा होते हैं, वे बनाये नहीं जाते। अनुवादक कलाकार की भाँति सृजनकर्ता नहीं है क्योंकि सृजन आत्म-साक्षात्कार के क्षणों की अनिवार्य प्रक्रिया है, जिसका परिणाम है-आत्माभिव्यक्ति। लेकिन अनुवादक इस अर्थ में कलाकार है कि वह कलाकार की

आत्माभिव्यक्ति को अपने में उतारता है, उससे पुन: आत्म-साक्षात्कार करता है तथा तटस्थ भाव से उसको पुन: अभिव्यक्त कर देता है। इस अर्थ में अनुवादक का व्यक्तित्व पुनरुत्पादक कलाकार का व्यक्तित्व है। कला सृजन है तथा अनुवाद पुनर्सृजन। यह एक तरह का प्रविधि एवं प्रक्रियागत पार्थक्य है।

अनुवाद में कला एवं विज्ञान दोनों के तत्व निहित होते हैं। शिल्प भी कला के अन्तर्गत समाया हुआ है। ऐसी स्थिति में यह कहना सही होगा कि अनुवाद न तो विज्ञान है, न कला है, न शिल्प है। सच्चे अर्थों में वह कला का विज्ञान है। उसमें पुनराख्यान, मौलिकता, प्रातिभ शक्ति तथा प्रतिपादन सौष्ठव का योग होने से ऐसा कहना सर्वथा उचित है।

अनुवाद तथा शब्द में संबंध

अनुवाद में शब्दों के माध्यम से अर्थगत अभिव्यंजना को अधिकाधिक स्पष्ट किया जाता है। अनुवादक को यह सावधानी अनिवार्य रूप से रखनी पड़ती है कि जिन शब्दों को स्थानान्तरित किया जाता है उनके साथ भाषान्तर अर्थव्यजंना ज्यों की त्यों अन्तरित हो रही है अथवा नहीं। अर्थात् स्त्रोत-भाषा में व्यक्त किया गया अर्थ लक्ष्य-भाषा में ठीक वैसा का वैसा अभिव्यक्त हो रहा है या नहीं। इस तरह भाषा का अर्थ-तत्व अर्थ-विज्ञान से संबंधित हो जाता है। अनुवाद की समस्त सम्प्रेषण क्रियाएँ जितनी भाषा तथा उसके अभिव्यंजना पक्ष से सम्बद्ध होती हैं उतनी ही अथवा उनसे ज्यादा मूल पाठ-सामग्री के विचार या लक्ष्य से भी। मूल कथ्य सामग्री जिस या जिन विषयों की है उन विषयों के सैद्धान्तिक, व्यावहारिक तथा प्रायोगिक अर्थ-तत्व का ज्ञान अनुवादक हेतु अपेक्षित है।

अर्थ-विज्ञान का प्रमुख अभिप्रेत शब्द के वास्तविक अर्थ-व्यापार पर विचार करना है। एक तरफ यह भाषा के मनोवैज्ञानिक पक्ष का अध्ययन है, दूसरी तरफ अर्थमूलक परिवर्तनों की परीक्षा का वैज्ञानिक कार्य। फ्रांसीसी विद्वानों ने ऐतिहासिक अर्थ विज्ञान की अध्ययन-पद्धति का विकास किया तथा इसी से रचनात्मक अर्थ-विज्ञान की उद्भावना हुई। शब्द मनुष्य की धारणाओं से सम्बद्ध होते हैं तथा इन्हीं धारणाओं से अर्थ-विधान का संबंध होता है। अगर कालान्तर में धारणाएँ बदलती हैं तो शब्दों के अर्थों में अन्तर आ जाता है। अत: अनुवादक एवं अर्थ-विज्ञान के अध्येता दोनों को ही भाषा की संरचनात्मक प्रवृत्ति पर अपना ध्यान केन्द्रित करना पड़ता है। भाषा-विज्ञान में यांत्रिक अनुवाद पर भी बहस हुई है तथा यह प्रश्न उठाया गया है कि कोशगत एवं व्याकरणिक अर्थों में परस्पर क्या संबंध है? उदाहरणार्थ, संस्कृत का 'वान्' प्रत्यय हिन्दी में इसी अर्थ में ग्रहीत हुआ। एक तरफ यह हिन्दी में अधिकारी के अर्थ में चलता है; जैसे-धनवान, विद्यावान, बुद्धिवान एवं दूसरी तरफ यह प्रत्यय 'चालक' के अर्थ में प्रयुक्त होता है; यथा-पीलवान, गाड़ीवान, कोचवान आदि। इसलिए अनुवादक को इन प्रयोगों में अर्थ निश्चयन के लिए प्रसंग के महत्व की तरफ जाना पड़ता है। भाषागत प्रयोगों में प्रसंग का वही स्थान है जो समाजशास्त्र, इतिहास एवं भूगोल में परिवेश तथा परिस्थिति का होता है। प्रसंगों की विधिवत् समीक्षा से ही अनुवादक अनेकार्थता, समानता, सादृश्यतामूलक समस्याओं का समाधान कर सकता है।

अनुवादक को संरचनात्मक अर्थ-विज्ञान से बहुत मदद मिल सकती है। भाषा के बाह्य पक्ष में ध्वनि, रूप तथा वाक्य को स्थान मिलता है पर भाषा के आन्तरिक अर्थमूलक अध्ययन में संरचनात्मक अर्थ-विज्ञान अपनी व्यावहारिकता सिद्ध करता है। हर भाषा की अपनी आर्थी-संरचना होती है जिसे अध्ययन प्रक्रिया के तीन स्तरों से संकेतित किया जा सकता है-

(1) कोशीय शब्द,

(2) व्याकरणिक रूप,

(3) आर्थी अभिव्यंजना।

उदाहरण हेतु 'विद्यार्थी' शब्द का कोशगत अर्थ है-विद्याग्रहण में संलग्न, व्याकरणिक अर्थ है, कर्ता-कर्ममूलक, आर्थी व्यंजना है अन्वेषी, जिज्ञासु, होनहार आदि। आर्थी विशेषताओं से अनुवादक को भाषा की वाक् पद्धति को विशेष महत्व देना पड़ता है।

अनुवादक की प्रथम समस्या तो है अर्थप्रेषण हेतु दूसरी भाषा में प्रसंग, सन्दर्भ तथा प्रसंगानुकूल अर्थ-निर्धारण, दूसरी है अर्थ-निर्धारण में ध्वनि प्रतीकों का विशिष्टतावाची बोध एवं तीसरी है स्त्रोत-भाषा की पाठ-सामग्री को लक्ष्य भाषा में लाते समय उसके अर्थ-निर्धारण की समस्या।

इस अर्थ-निर्धारण की समस्या से निपटने हेतु अनुवादक को कई बातों का ध्यान रखना पड़ता है क्योंकि एक ही कृति अपने कई सहृदयों को अलग-अलग समय में अलग-अलग अर्थबोध कराती है अर्थात कृति में कई अर्थ स्तर निहित होते हैं, जिन्हें हर एक कोटि का सामाजिक अपनी-अपनी समझ के अनुसार ग्रहण करता है; जैसे-'रामचरितमानस' सामान्य पाठक हेतु मात्र भक्तिभाव एवं कथा का अभिधार्थ है पर विशिष्ट बौद्धिक स्तर वाले पाठकों हेतु उसके कई स्तर हैं जो प्रबुद्ध व्यक्ति हेतु आज भी चुनौती हैं। ऐसी स्थिति में इस कृति का अनुवाद अर्थ के स्तर पर बहुत जटिल प्रक्रिया है क्योकि यह 'भावभेद रसभेद अपारा' वाली कृति है। अत: इसी तरह अन्य कृतियों के अर्थ-निर्धारण में अनुवादक किन-किन बातों का ध्यान रखे, यह प्रश्न आज हल तो नहीं हो पाया है पर अर्थ-निर्धारण के लिए कुछ तथ्य प्रकाश में आये हैं-

(1) **अर्थ की सांकेतिक प्रक्रिया-** अनुवादक को अर्थ की सांकेतिक प्रक्रिया पर विशेष ध्यान देना पड़ता है। हर शब्द अर्थ का कोई चित्रात्मक अथवा बिम्बात्मक रूप छिपाये होता है। शब्द से चित्र मानसपटल पर आता है तथा वस्तु का अभिज्ञान होता है। बोलने तथा समझने में समर्थ बालक की भाषा इसी बिन्दु पर संकेतात्मक एवं प्रतीकात्मक हो जाती है; जैसे-'आनन्दभवन देश का पवित्र स्थान है', तो अनुवादक को इस वाक्य को पं. मोतीलाल नेहरू के भवन से जोड़ना होगा तथा इसे न जोड़ने पर अर्थ भ्रष्ट हो जाने की सम्भावना है।

(2) **शब्द-शक्तियाँ तथा अर्थ-तत्व-** अर्थ-निर्धारण की दृष्टि से शब्द-शक्तियाँ तीन हैं-अभिधा, लक्षणा एवं व्यंजना। इसी दृष्टि से शब्द के तीन तरह हैं-वाचक, लक्षक एवं व्यंजक। स्फोटगत ध्वनियों से शब्द-सृष्टि होती है तथा शब्द के उच्चारण से अर्थ का बोध होता है। शास्त्र में अभिधा को समझने के आठ साधन बताये गये हैं-व्याकरण, उपमान, कोश, आप्त-वाक्य, व्यवहार, वाक्य शेष, विवरण एवं सिद्ध पथ का सान्निध्य। पर इन सबमें व्यवहार ही मुख्य साधन कहा गया है। उदाहरणार्थ 'वह प्रवीण व्यक्ति है।'

(क) **अभिधा-** शब्द की अभिधामूलक भंगिमा परम्परानुमोदित तथा रूढ़ अर्थ से संबंधित होती है। इसके अनुवाद में शब्द के कोशार्थ का संरचनागत अर्थ ही चल जाता है जैसे एक वाक्य है-'वह बुद्धिमान व्यक्ति है', इसका अंग्रेजी में अनुवाद होगा-'He is a wise person' अनुवाद करने पर भी दोनों भाषाओं में इसका सामान्य अर्थ एक ही रहता है।

(ख) **लक्षणा-** अभिधेय अर्थ का योग होने पर भी लक्षणा में अर्थ बदलता है। अभिधा शब्दार्थ का वाच्यार्थ संबंध है पर लक्षणा का लक्षण है मुख्यार्थ का बाधित होना। अर्थात् जिस अर्थ के समझने में मुख्य अर्थ बीच में पड़ता है उसे लक्षणा कहते हैं। उदाहरणार्थ-

'गंगायांघोष:' अर्थात 'गंगा में कुटी है।' गंगा में कुटी कैसे हो सकती है? इसलिए इसके निवारणार्थ 'गंगा' शब्द में लक्षणा के द्वारा अर्थ लिया गया गंगा तट पर कुटी है? 'घोष' शब्द में लक्षणा के द्वारा यह अर्थ भी ठीक हो सकता है-'गंगा में मगर है' पर उससे वक्ता के तात्पर्य की

सिद्धि न होगी। अनुवादक को यह भी ध्यान रखना होगा कि लक्षणा रूढ़ि के आधार पर है अथवा प्रयोजन के आधार पर।

(ग) **व्यंजना-** प्रसिद्धार्थ को अभिधा तथा लक्षणा परम्परा सम्बन्ध से स्पष्ट करती हैं पर वे अप्रसिद्ध अर्थ का बोध कराने में समर्थ नहीं होती। इस स्थिति में व्यंजना का कार्य दोहरा होता है। यह दोनों तरह के अर्थों का बोध कराती है। अत: व्यंजना के द्वारा शब्द-अर्थ व्यंजक बनते हैं। व्यंजक ही ध्वनि है। व्यंजना का अनुभव शब्द, शब्दार्थ, पद, पद के एक भाग, वर्ण, रचना-स्वभाव आदि में सर्वत्र व्याप्त होता है। अत: बड़े से बड़े अनुवादक को उसे पकड़ने में चूकने का खतरा रहता है। उदाहरणार्थ, 'प्रसाद' की कविता की प्रसिद्ध पंक्तियाँ हैं-'बीती विभावरी जाग री ! अम्बर पनघट में डुबो रही ताराघाट उषा नागरी।' यहाँ कवि का वाच्यार्थ है कि तारों-भरी रात्रि समाप्त हो गई है, तू जाग जा। पर प्रतीयमान अर्थ इससे भिन्न है-'युगीन निराशा समाप्त होकर आशा का नवजागरण हो रहा है।' यह अर्थ यहाँ व्यंजित अर्थ है।

(3) **प्रसंगार्थ-** वाक्य में संरचनागत अर्थ से भिन्न एक अर्थ और होता है जिसे प्रसंगार्थ कहा जा सकता है। इस अर्थ में भौतिक योजक शब्द गौण होते हैं। वक्ता की मानसिकता पर देशकाल का प्रभाव छाया रहता है; उदाहरणार्थ-'मैंने धीरेन्द्र वर्मा को बोलते हुए सुना है।' इस वाक्य में 'बोलते हुए' पद का विशिष्ट अर्थबोध है क्योंकि यह अर्थ न तो कोशगत है तथा न ही व्याकरणिक। इसमें वक्ता धीरेन्द्र वर्मा का प्रभावशाली भाषणकर्ता-व्यक्तित्व ध्वनित होता है। इस वाक्य का तात्पर्य यह है कि धीरेन्द्र वर्मा बड़े ही सफल वक्ता थे। इस वाक्य का अनुवाद करते समय प्रसंगार्थ का तिरस्कार नहीं किया जा सकता। इस वाक्य का अंग्रेजी अनुवाद अगर किया जाए-'I have heard Dhirendra Verma speaking' तो अर्थ का अनर्थ हो जायेगा। अंग्रेजी में इसका अनुवाद किया जाना चाहिए-'I have heard Dhirendra Verma's lecture।'

(4) **स्थान-भेद-** स्थान-भेद से कभी-कभी अर्थ-भेद हो जाता है। अलग-अलग स्थानों पर एक ही शब्द को अलग-अलग अर्थों में प्रयोग किया जाता है: उदाहरणार्थ-'भोग' शब्द ब्रज प्रदेश में भगवान के प्रसाद हेतु प्रयुक्त होता है। 'बाल भोग' तथा 'चरणामृत' का नाम सभी ने सुना होगा। पर दिल्ली में 'भोग' शब्द 'श्राद्ध भोग' के सन्दर्भ में प्रयुक्त होता है। इसी तरह 'सड़ना' शब्द हिन्दी एवं पंजाबी में भिन्न-भिन्न अर्थों में प्रयुक्त होता है। हिन्दी के अर्थ के अनुसार ज्यादा पक जाने के बाद फल सड़ जाता है पर आग पर ज्यादा सेंक दी जाने के बाद जो चीज जल जाती है उसे पंजाबी में 'सड़ना' कहा जाता है। ऐसे स्थानिक प्रयोगों का ध्यान रखना अनुवादक हेतु जरूरी है।

(5) **पर्यायवाची शब्द-** पर्यायवाची शब्दों के अनुवाद में बहुत सावधानी अपेक्षित होती है, क्योंकि प्रत्येक प्रयोग के साथ अभिसूचक सदस्यों का योग होता है। उदाहरणार्थ- कमल, पंकज, जलज, नीरज, सरोज आदि शब्द स्थूल अर्थ में एक ही वस्तु का बोध कराते हैं। पर ये सभी शब्द सर्वथा समान अर्थ सूचित नहीं करते। इसी तरह अंग्रेजी के beautiful, handsome, pretty शब्द स्थूल अर्थ में तो एक से हैं पर इनमें सूक्ष्म अर्थ-भेद है जिसकी पकड़ अनुवादक को होना बहुत ही जरूरी है। इसलिए अनुवादक को समरूपतामूलक प्रतिक्रिया के सिद्धान्त के द्वारा पर्यायवाचिता का विरोध करना चाहिए क्योंकि एक शब्द दूसरे का शत-प्रतिशत पर्यायवाची नहीं हो सकता।

(6) **मिथ-** कवि तथा विद्वानों ने 'मिथ' में निहित सम्भावनाओं का प्रयोग अपने-अपने ढंग से किया है। यूरोपीय वाङ्मय के शब्द 'Myth' को अभिव्यक्त करने वाला कोई शब्द हिन्दी में नहीं है। कभी-कभार इसके लिए 'पुरावृत्त', 'पुराण कथा', 'देवकथा' आदि अर्थ-संकुचित अनुवादों से काम चलाया जाता है, हर देश का साहित्य अनगिनत मिथों से पूर्ण होता है। मिथ संस्कृति विशेष की विशेष देन होते हैं तथा उनमें किसी भी जाति का अवचेतन मन सुरक्षित रहता है। इसलिए मिथ

एक तरह से आदिम युगीन भाषा एवं साहित्य है। मिथ में कथा का अंश रहता है। बगैर कथा के उसकी कल्पना असम्भव है एवं उस कथा को सांस्कृतिक सन्दर्भों में जाने बगैर उसका अनुवाद सम्भव नहीं है। अत: साहित्य के अनुवादक को मिथकों का विशेष ज्ञान होना जरूरी है। फ्रेजर तथा टी.एस. एलियट ने यह बात बार-बार दोहराई है। कॉलरिज की कविता 'Rhyme of the Ancient Mariner' का अनुवाद कोई भी व्यक्ति तभी कर सकता है जब वह मिथ को भली-भाँति समझता हो भले ही वह भाषा का कितना ही बड़ा जानकार क्यों न हो। इसी तरह मीरा की कविता है-'मेरो तो गिरधर गोपाल दूसरो न कोई।' यहाँ 'गिरधर' कृष्ण का पर्याय मात्र नहीं है वह ब्रजवासियों का कष्ट-निवारक गिरधर है जिसके साथ इन्द्र-कृष्ण की कथा जुड़ी है। ऐसी स्थिति विशेष में मिथिकल शब्दों का अनुवाद न करके लिप्यंतरण करना ही बेहतर होगा।

(7) **सांस्कृतिक स्त्रोत-** भाषा तथा संस्कृति का संबंध अन्योन्याश्रित है। अत: भाषा का शब्दार्थ संस्कृति-सापेक्ष होता है। इस कारण विभिन्न भाषाओं के स्वरूप तथा संरचना स्वयंमेव अलग-अलग होते हैं। इसलिए किन्हीं दो भाषाओं में मिलते-जुलते शब्द तो मिल जाते हैं पर बिल्कुल समान अर्थों को व्यंजित करने वाले शब्दों का मिलना बड़ा ही कठिन होता है। उनकी अर्थच्छायाओं में भेद होता है; उदाहरणार्थ-हमारी वाक् देवी सरस्वती है। काव्य-सृजन के आरम्भ में सरस्वती का आह्वान करने की परम्परा है। यूनान की काव्य-प्रेरणादायिनी देवी 'Muse' है। कवि होमर ने उसकी वन्दना की है। सरस्वती एवं Muse दोनों ही काव्य-प्रेरणा की देवियाँ हैं पर दोनों अलग-अलग संस्कृतियों की प्रतीक हैं। पर अनुवाद में 'Muse' के स्थान पर 'सरस्वती' तथा 'सरस्वती' के स्थान पर 'म्यूज' लिखना उचित नहीं होगा।

इसके अलावा हर एक संस्कृति में रहन-सहन, रीति-रिवाज, खान-पान, आचार-विचार, जाति-कुल, धर्मोपासना के विधि-विधान तथा भौगोलिक स्थितियाँ विशिष्ट और निजी होने से उनकी भाषा-प्रयोग विधि भी विशिष्ट होती है। ऐसे प्रयोगों को भाषान्तरित करना बड़ा ही कठिन हो जाता है। उदाहरणार्थ-त्रिमूर्ति की धारणा हिन्दुत्व की धुरी है। मिथकों, निजधरी कथाओं, लोक-विश्वासों के सांस्कृतिक प्रतीकों में इसकी जड़ें बहुत गहरी हैं। संस्कृति के ऐसे आदि बीज-बिम्बों का अनुवाद बड़ा ही कठिन होता है। इनका लिप्यंतरण ही बेहतर होता है।

(8) **देशकाल-** अनुवादक को इस बात की सर्तकता रखनी चाहिए कि स्त्रोत-भाषा की सामग्री किस देश या काल की है। कुछ शब्द ऐतिहासिक घटनाओं के साथ जन्मते हैं और कालान्तर में उनका अर्थ बदलने लगता है; जैसे-हिन्दी साहित्य के भक्ति-आन्दोलन काल में विभक्त शब्द का अर्थ होता था विशेष तरह का भक्त, पर आज इस शब्द का अर्थ है 'पृथक्-पृथक्'।

(9) **सन्दर्भ-** सन्दर्भ अर्थ-निर्धारण का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पहलू है क्योंकि सन्दर्भच्युत हो जाने पर बात अपने लक्ष्य से ही भटक जाती है तथा शब्द के स्तर पर सन्दर्भ को समझकर ही अर्थ-ग्रहण किया जाता है; जैसे-यह सन्दर्भ के अनुसार ही समझा जा सकेगा कि 'हरि' शब्द भगवान के लिए अथवा बन्दर के लिए या व्यक्ति-विशेष के लिए प्रयुक्त हुआ है। इसलिए अनुवाद करते समय सही सन्दर्भ पकड़ पाना एवं लक्ष्य-भाषा में उसके अनुसार समानार्थक शब्द खोज पाना बहुत जरूरी होता है। उदाहरणार्थ-अंग्रेजी का शब्द है 'Receipt'। अब हिन्दी में इसका अर्थ हम सन्दर्भ के अनुसार ही निर्धारित करेंगे तथा तद्नुसार इसका अर्थ 'प्राप्ति' या 'आवती' या 'रसीद' या 'आय' लिखेंगे।

(10) **लिंग-** अर्थ-निर्धारण में लिंग, वचन एवं समास की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है; जैसे-संस्कृत में 'गो' शब्द (स्त्रीलिंग) में इसका अर्थ 'गाय' होता है एवं पुल्लिग में 'बैल'। वृक्षवाची शब्द पुल्लिग होने पर वृक्ष में वाचक होते हैं तथा नपुंसक लिंग होने पर फल के, जैसे-'पीलुफलम्'।

(11) **वचन-** कुछ शब्दों के एकवचन रूप में प्रयुक्त होने पर कुछ अर्थ होता है तथा बहुवचन हो जाने पर कुछ और; जैसे Wood-लकड़ी एवं Woods-जंगल। इस बात के संबंध में अनुवादक को बड़ी ही सावधानी रखनी चाहिए।

(12) **समास-** वाक्य में पद पृथक-पृथक रहने पर सामान्य अर्थ का बोध कराते हैं पर समास होने पर विशेष अर्थ का बोध कराते हैं। समास में समुदाय का अर्थ प्रधान होता है, पद का अर्थ नहीं। उदाहरणार्थ-'ओदन' तथा 'पाकी' से शब्द बनाया गया 'ओदनपाकी'। इसका अर्थ औषधि हेतु रूढ़ है। समस्त पदों को अलग करते ही अर्थ बदल जाता है। इनका अनुवाद समस्त पदों के रूप में ही होना चाहिए, अलग-अलग पदों के रूप में नहीं। संस्कृत में प्राय: ऐसे समास भी होते हैं जिनमें एक शब्द ही समास के कारण एक से ज्यादा का अर्थबोध कराता है; जैसे-'पितरौ' का अर्थ है-माता-पिता, 'भ्रातरौ' का अर्थ है-भाई-बहिन।

(13) **वाच्य-भेद-** वाच्य-भेद से धातुओं के अर्थों में भेद हो जाता है; जैसे-'मिद्' धातु का 'टूटना' तथा 'तोड़ना', 'पच्' धातु का 'पकना' एवं 'पकाना' अर्थ होता है। 'भिन्नति काष्ठम्' 'भिद्यते काष्ठम्' धातु में इस तरह के अर्थ-भेद का ज्ञान क्रिया के समस्त पद से होता है। अगर अनुवादक का ध्यान इस संबंध में चूक जाता है तो अर्थ में गड़बड़ी हो जाती है।

(14) **स्वर-भेद-** स्वर अथवा वर्ण के भेद से शब्द के अर्थ में भेद ही नहीं होता वरन् अर्थ कभी-कभी बिल्कुल विपरीत भी हो जाता है। स्वर-भेद से वह शब्द उस अर्थ का बोधक नहीं रहता जिसका मूलत: था। अत: उदात्त, अनुदात्त आदि स्वरों का ज्ञान जरूरी है। संस्कृत में इसे इतना ज्यादा महत्व दिया गया कि मंत्रोच्चार में थोड़ी-सी त्रुटि रह जाने पर पाप लगने की कल्पना की गई। 'अमित्र' शब्द बहुब्रीहि समास से अन्तोदात्त है तथा इसका अर्थ है-मित्र रहित। तत्पुरुष समास में 'मि' उदात्त होने पर इसका अर्थ है शत्रु।

(15) **उपसर्ग संयोग-** उपसर्ग के संयोग से अर्थ-भेद होता है क्योंकि उपसर्गों के संयोग से शब्दों तथा धातुओं के अर्थों में महान् अन्तर आ जाता है। कभी-कभी शब्द अपने अर्थ से विपरीत अर्थ का भी बोध कराने लगता है। उपसर्ग के द्वारा धातु का अर्थ बहुत दूर चला जाता है। उदाहरणार्थ-'स्था' धातु का अर्थ है-रुकना, पर प्रस्थान में इसका अर्थ विपरीत है-चले जाना। इसी तरह 'संस्थान', 'अनुष्ठान' एवं 'निष्ठान' में इसका भिन्न अर्थ देखा जा सकता है।

(16) **प्रकरण-भेद-** वाक्य-प्रकरण, अर्थ-औचित्य तथा देशकाल से शब्दों के अर्थों में भेद हो जाता है। पर एक ही शब्द का विभिन्न वाक्यों, विभिन्न प्रकरणों आदि में कुछ भिन्नता लिए हुए अर्थ में प्रयोग किया जाता है। इस तरह एक ही शब्द के अर्थों में भेद हो जाता है। प्रकरण-भेद से धातुओं के अर्थों में परिवर्तन हो जाते हैं; जैसे-

(i) 'आदित्यमुपतिष्ठते'-आदित्य की उपासना करता है।

(ii) 'रथिकानुपतिष्ठते'-रथिकों का साथ करता है।

(iii) 'गंगा युनामुपतिष्ठते'-गंगा यमुना से मिलती है।

देश-भेद से अर्थभेद हो जाता है। कई भाषाओं के शब्दों का संग्रह करने पर यह बात पता चलती है-संस्कृत में 'ना' का अर्थ है-'नहीं', पर चीनी में 'ना' का अर्थ है-'वह' एवं रूसी भाषा में इसका अर्थ है-'पर' अथवा ऊपर।

(17) **साहचर्य-** साहचर्य के कारण एक शब्द का अन्य अर्थ में प्रयोग होता है। 'सूर्य' को 'उषा' के साहचर्य से 'वत्स' (बछड़ा) नाम से निर्दिष्ट किया गया है। साहचर्य से अर्थ-विकास के अनेकों उदाहरण मिलते हैं; जैसे-'कृष्णा' शब्द का मुख्यार्थ है-'कृष्ण वर्ण'। पर वेदों में 'कृष्णा' शब्द

रात्रि के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। महाभारत में 'कृष्णा' शब्द का प्रयोग 'द्रोपदी' हेतु हुआ है। इस तरह 'कृष्णा' शब्द का अर्थ-संकोच हो गया।

(18) **सादृश्य-** नानार्थक शब्दों के अर्थ-विस्तार प्रदर्शित को मुख्यता दी जाती है, यथा-'पाद' शब्द का मुख्य अर्थ था 'पैर'। उसी के सादृश्य के आधार पर पशु के एक पैर को चतुर्थांश देखकर चतुर्थांश के हेतु 'पाद' शब्द का प्रयोग होने लगा। सादृश्य के आधार पर इसका इतना ज्यादा अर्थ-विस्तार हुआ कि 'खाट' आदि के पावे हेतु एक 'पाद' शब्द चल पड़ा। वृक्ष की जड़ हेतु 'पाद' शब्द प्रयुक्त होता है-'पादय'। इसलिए अनुवादक को इस सादृश्यता का विशेष ध्यान रखना पड़ता है ताकि अर्थ-निर्धारण हो सके क्योंकि शब्द का अर्थ व्यावहारिकता पर आधृत रहता है-'शब्दालोक निबन्धना'।

(19) **मुहावरे एवं लोकोक्ति-** इन दोनों की पहचान होना अनुवादक हेतु बहुत जरूरी है। हर भाषा के मुहावरे एवं लोकोक्तियाँ नये और निजी भाव तथा उपमान, छिपाये होते हैं। उन्हें ठीक से समझे बगैर उनका साहित्यिक मूल्य नहीं समझा जा सकता। उदाहरणार्थ, हिन्दी की कहावत है-'टके की बुढ़िया, नौ टके सिर मुँड़ाई।' अंग्रेजी में उसका अनुवाद किया गया- 'A quarter worth verry, and three quarters to carry' यहाँ verry तथा carry की तुकबन्दी तो ठीक बैठी है पर हिन्दी की कहावत में जो भारतीय मनोभाव एवं कुटुम्ब पद्धति निहित है वह अंग्रेजी में अनूदित होते ही लुप्तप्राय हो गई। एक और उदाहरण लें-हिन्दी का शब्द है : 'सुहागन'। अंग्रेजी में इसका अनुवाद होगा 'married woman'। पर 'सुहागन' कहने पर सौभाग्यपूर्ण स्त्री का जो चित्र हमारे सामने उपस्थित होता है वह married woman कहने पर उपस्थित नहीं होता। एक-दो बार तलाक देकर फिर से विवाह करने वाली स्त्री हिन्दी शब्द 'सुहागन' के अन्तर्गत नहीं आयेगी, वह सिर्फ अंग्रेजी के married woman के अन्तर्गत रहेगी। इसलिए इतालियन कहावत कि 'अनुवादक गद्दार होते हैं' सही नहीं है। 'हेमलेट' की पंक्ति-Frailty thy name is women का अगर शब्दानुवाद किया जाये-'चंचलता ! तेरा ही नाम स्त्री है !' यहाँ शब्दार्थ की दृष्टि से तो अनुवाद सही हो जायेगा पर वह अर्थ सम्प्रेषित नहीं हो पायेगा जो विशेष संदर्भ में कवि का अभिप्रेत है।

(20) **अर्थ-परिवर्तन-** यह बहुत जरूरी है कि लक्ष्य-भाषा की सामग्री स्त्रोत-भाषा की पाठ-सामग्री से अर्थ की दृष्टि से भिन्नत्व न प्राप्त कर ले एवं ऐसा न लगे कि अनुवाद होने के पश्चात् दोनों भाषाओं ने अपने-अपने अर्थ-बोध का अलग-अलग वितान तान लिया है। अगर ऐसा प्रतीत हुआ तो अनुवाद की संगति ही खण्डित हो जायेगी। एक-सी अर्थ वाली अभिव्यक्ति स्त्रोत तथा लक्ष्य-भाषा दोनों में हमेशा मिल जाना सम्भव नहीं होता। अत: अनुवादक के मस्तिष्क में निकटता अथवा समीपता की तलाश रहती है। अत: अनुवादक भाषा की सम्पूर्ण अर्थ-ध्वनियों को शब्दानुवाद में न डालकर अर्थानुवाद हेतु भावानुवाद की तरफ प्रवृत्त कर देता है। इस तरह अर्थानुवाद एक तरह का ठीक-ठीक भावानुवाद है।

अर्थ-विकास के साथ-साथ अर्थ-सन्दर्भ घटते-बढ़ते रहते हैं। अत: भाषा में शब्दों के अर्थों का परिवर्तन स्वाभाविक गति से होता रहता है। शब्द का एक ही अर्थ नियमित नहीं रह सकता। सामाजिक, आर्थिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक कारण तथा उनके सन्दर्भ जैसे-जैसे बदलते रहते हैं, शब्दों के अर्थ-सन्दर्भ भी बगैर बदले नहीं रह सकते। एक समय में एक समाज जिन शब्दों को जो अर्थ देता है कालान्तर में वही समाज उन शब्दों से उस अर्थ को छीन कर या तो उसमें नया अर्थ भरता है अथवा पुराने अर्थ को नष्ट कर देता है। अर्थ-परिवर्तन की इस प्रक्रिया पर अनुवादक का ध्यान हर स्थिति में रहना चाहिए क्योंकि अर्थ-परिवर्तन के पीछे काम करने वाली शक्ति है मानव मस्तिष्क तथा यही कारण है कि शब्दों की बजाय अर्थ में परिवर्तन ज्यादा जल्दी होता है। शब्दों का काम

तो संकेतों तथा भंगिमाओं के माध्यम से भी चल जाता है, पर अर्थों का नहीं चलता। शब्द स्थूल होते हैं तथा अर्थ-सूक्ष्म व्यंजनाओं से गर्भित एवं मनोमय और बौद्धिक भी होता है। यही कारण है कि शब्द के अर्थ-परिवर्तन की दिशाएँ निश्चित नहीं की जा सकतीं। पर इस तरह के अर्थ-परिवर्तन की प्रक्रिया को अनुवादक भाषा-विज्ञान की अर्थ-प्रक्रिया से समझ सकता है। पाश्चात्य विद्वान ब्रील ने अर्थ-निर्धारण की तीन दिशाएँ स्वीकार की हैं-

(1) अर्थ-विस्तार,. (2) अर्थ-संकोच, (3) अर्थादेश।

भारतीय निरुक्त और व्याकरणकार भी अर्थ-परिवर्तन की इन तीनों दिशाओं को समझाते रहे हैं-

(क) **अर्थ-विस्तार-** सामान्य शब्द जब विशेष अर्थ में तथा विशिष्ट शब्द जब सामान्य अर्थ में प्रयुक्त होने लगता है तो अर्थ-विस्तार हो जाता है अर्थात् शब्द अपने शाब्दिक अर्थ से ज्यादा विस्तार ग्रहण कर लेता है। उदाहरणार्थ, प्राचीन काल में संस्कृत में तेल शब्द का अर्थ था तिल का सार। बाद में महुआ, अलसी, मूँगफली, सरसों, चमेली, नारियल आदि सभी के सार को तेल कहा जाने लगा। सामान्य कथन की प्रवृत्ति बराबर बनी रही। बाद में यह प्रवृत्ति इतनी बढ़ी कि आजकल तेल शब्द का प्रयोग डीजल-पेट्रोल आदि के अर्थ में भी किया जाता है। संस्कृत में गाय खोज लाने को गवेषणा कहते थे। पर आज सभी अनुसंधान कार्य गवेषणा अथवा Research के पर्याय हो गये हैं।

अर्थ-विस्तार का मुख्य कारण तो यही है कि जब शब्द सामान्य से विशिष्ट हो जाता है तब उसका प्रयोग अतिशयता से किया जाता है। ऐसी स्थिति में भावों के सादृश्य अथवा रूपात्मक संबंध से उसमें अर्थ-वैविध्य पैदा हो जाता है। क्योंकि शब्द के अर्थ का कोई आकार नहीं होता। अस्पष्टता से भी अर्थ में विकास होता है; जैसे-'कादम्बरी' तथा 'सुरा' आदि शब्द। वस्तु-सादृश्य एवं लक्षणा से भी अर्थ-विस्तार होता है; जैसे-आरम्भ में 'गो' शब्द का अर्थ पृथ्वी था पर आज इसके कई अर्थ हो गये हैं। आलंकारिक प्रयोगों द्वारा भी अर्थ-विकास होता है; जैसे-'गाय' का प्रयोग सीधे-सादे व्यक्ति के अर्थ में-'लड़की तो बिल्कुल गाय है', अनुवादक को शब्दार्थ तथा व्यंजनार्थ दोनों ही पकड़ने होंगे। हिन्दी में 'लोमड़ी' चालाकी का प्रतीक है। 'वह लड़की लोमड़ी है' जैसे प्रयोगों के प्रतीकार्थ पर ध्यान देना होगा।

(ख) **अर्थ-संकोच-** मानवीय ज्ञानात्मक संवेदना में सूक्ष्मता एवं बौद्धिकता के विस्तार के साथ वस्तु, क्रिया तथा धर्म की शक्तियों को अभिव्यक्ति देने की सूक्ष्म क्षमता का भी विकास होता है। ऐसी स्थिति में सामान्य अर्थ वाले शब्द को विशेष स्थिति में सीमित कर देती है-यही अर्थ-संकोच की स्थिति है। इस स्थिति के भीतर सांस्कृतिक कारणों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। बीलू की मान्यता है कि जो राष्ट्र अथवा जाति जितनी विकसित होगी उसमें अर्थ-संकोच उतना ही अधिक होगा। उदाहरणार्थ, प्राचीन काल में श्रद्धापूर्वक किया जाने वाला कोई भी कार्य 'श्राद्ध' कहलाता था पर धार्मिक कार्य से जुड़कर 'श्राद्ध' शब्द मरणोपरान्त धार्मिक कर्म का वाची रह गया। हिन्दी की सामान्य भाषा तथा साहित्य में प्रचलित वेदना शब्द-'वेदने तू भी भली बनी'-'विद्' धातु से बना जिसका अर्थ है-सुख-दु:खात्मक अनुभव। पर सामान्य भाषा में इसका अर्थ है-पीड़ा। इस तरह संस्कृत के अनेकों शब्दों का हिन्दी में आते-आते अर्थ-संकोच हो गया; जैसे-'धेनु' का अर्थ होता था दूध देने वाला हर पशु; पर हिन्दी में इसका अर्थ सिर्फ गाय है।

अर्थ-संकोच कई तरह से होता है। समास, उपसर्ग, प्रत्यय एवं विशेषण के संयोग से भी प्राय: अर्थ-संकोच होता है।

(ग) **अर्थादेश-** शब्द का अपने मूल अर्थ से हट जाना अर्थादेश है एवं जब कभी ऐसा हो जाता है तो अनुवादक को भयंकर कठिनाई का सामना करना पड़ता है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि कालान्तर में शब्द का मूल अर्थ ही खो जाता है तथा सामान्य व्यक्ति को यह पता ही नहीं होता कि जिस अर्थ को हम भूल चुके हैं वह कभी लोक-व्यवहार का अंग भी था। यह बात निम्न ठोस उदाहरणों से समझी जा सकती है-

(1) 'गँवार' शब्द का मूल अर्थ था ग्रामीण। पर आज यह शब्द एक गाली बन गया है जिसका अर्थ मूर्ख, असभ्य अथवा जंगली आदि माना जाता है।

(2) आर्य-ईरानी काल में 'असुर' शब्द देवता का वाचक था। वैदिक काल में भी 'असुर' देवता विशेष हेतु प्रयुक्त होता रहा। पर कालान्तर में इसका अर्थ हो गया, 'राक्षस'।

कई बार सामाजिक तथा राजनीतिक कारणों से भी अर्थादेश जरूरी हो जाता है; जैसे-'देवानांप्रिय' सम्राट अशोक की पदवी थी एवं इस शब्द का एक विशेष ऐतिहासिक सन्दर्भ था और इसकी स्थिति सामाजिक थी। पर कालान्तर में यह शब्द अपने मूल अर्थ से एकदम दूर जा पड़ा एवं संस्कृत जैसी संस्कारवान भाषा में अर्थ हो गया, 'मूर्ख'।

अलग-अलग परिवारों की भाषाएँ अपनी संरचना में भिन्न होती हैं। अत: अर्थ की दृष्टि से समानार्थक शब्द मिल पाना अपने आप में ही एक समस्या होती है। यही कारण है कि अनुवाद करते ही एक भाषा के संकेतार्थ दूसरी भाषा के संकेतार्थों से दूर पड़ जाते हैं। अत: हमेशा इस बात पर गौर किया जाना चाहिए कि पाठ-सामग्री को लक्ष्य-भाषा पाठ में लाते वक्त उसकी अर्थपरक मूल आत्मा सुरक्षित रह सके।

पदबन्ध अथवा पदक्रम

पदक्रम- सभी भाषाओं का पदक्रम अलग-अलग होता है। हिन्दी, अंग्रेजी आदि में पदक्रम की निश्चित व्यवस्था है पर संस्कृत, रूसी आदि का पदक्रम स्वतंत्र है। पदक्रम में सभी पदों का ध्यान रखा जाता है पर प्रधानता कर्म एवं क्रिया की ही होती है; जैसे-हिन्दी का पदक्रम है-कर्ता + कर्म + क्रिया-'वह पत्र लिखता है', 'सीता पानी पीती है।' इन दोनों वाक्यों में क्रमश: कर्ता, कर्म तथा क्रिया का प्रयोग है। इसके प्रतिकूल अंग्रेजी में कर्ता के बाद क्रिया आती है एवं फिर कर्म अर्थात् कर्ता + क्रिया + कर्म, जैसे-'He writes the letter', 'Sita drinks water'।

अनुवाद करते समय पदक्रम पर पूरा ध्यान दिया जाना चाहिए। He the letter writes हो जाने पर पूरा वाक्य निरर्थक हो जायेगा। संस्कृत में क्रम का कोई कठोर बन्धन नहीं है। 'वह पुस्तक पढ़ता है' का अनुवाद वहाँ-

'सः पुस्तकं पठति'

'पुस्तकं सः पठति'

'पठति सः पुस्तकं'

'पठति पुस्तकं सः'

— इन सभी ढंगों से हो सकता है।

इसी तरह हिन्दी में कहते हैं-'मैं, तुम एवं वह जायेंगे।' अंग्रेजी के पदक्रम में इसे कहेंगे : 'You, he and I shall go'. पदक्रम बदल जाने से कभी-कभी अर्थ बदल जाता है। 'He is reading the book' को 'Is he reading the book' के क्रम में रख देने से प्रश्नवाचक वाक्य बन गया। हिन्दी के वाक्य हैं-

'तुम नहीं चलोगे'

'तुम चलोगे नहीं'

यहाँ पदक्रम में यह परिवर्तन बल देने की इच्छा से किया गया है। इसी तरह-

'मैंने दूध पिया'

'दूध मैंने पिया'

इसी तरह अंग्रेजी में-

'She is beautiful, no doubt.'

'Beautifal she is, no doubt.'

कविता में छन्द के पदक्रम को बदल देने से नया अर्थ पैदा होता है-

'देखे मैंने वे शैल श्रृंग' को यदि लिखें 'मैंने वे शैल श्रृंग देखे हैं' तो स्पष्ट हो जायेगा कि पहली पंक्ति में जो विशेष अर्थ लक्ष्य किया गया है वह दूसरी पंक्ति में खत्म हो गया।

अनुवाद में वाक्य

अनुवाद करते समय स्त्रोत-भाषा तथा लक्ष्य-भाषा के मध्य की व्यवस्था की तुलना करते हुए वाक्य-योजना पर ज्यादा ध्यान केन्द्रित किया जाना चाहिए। क्योंकि वाक्य-योजना के त्रुटिपूर्ण विश्लेषण से विशेष विवरणों की रूपान्तर प्रक्रिया लड़खड़ा जाती है तथा चयन-प्रक्रिया से उत्पन्न पाठ की क्रमबद्धता सरल एवं जटिल न बनकर व्याघातों में फँस जाती है। इसलिए भाषा-वैज्ञानिक सन्दर्भ में वाक्य-विज्ञान अनुवादक को भाषागत व्याघात समझने में मददगार होता है। कविता, कहानी, उपन्यास, निबन्ध आदि की साहित्यिक भाषा एवं दूसरी तरफ समाजशास्त्रीय विषयों में प्रयुक्त भाषा अथवा प्रशासनिक, विधिक, तकनीकी और वैज्ञानिक विषयों की भाषा में गहरा अन्तर होता है। व्यावहारिक रूप से यह सब प्रस्तुतीकरण की प्रक्रिया से सम्बद्ध है जिसमें स्त्रोत-भाषा के प्रयोग का सामाजिक पक्ष तथा उसकी सांस्कृतिक पृष्ठभूमि छिपी है। वाक्यों के अनुप्रयोग का वह परिस्थितिगत सन्दर्भ भी होता है जिससे ग्रहीता सांस्कृतिक-ऐतिहासिक सन्दर्भ में अर्थ को ग्रहण करता है। इसलिए वाक्य-योजना को केन्द्र में रखना सर्वाधिक जरूरी है।

प्राय: पाठ कठिन से सरल की तरफ न जाकर सरल से कठिन की तरफ जाता है। वाक्य-योजना के इस पाठ्य सन्दर्भ को भाषा-वैज्ञानिक आधारभूत संरचना से जोड़कर समझाने का प्रयत्न करता है एवं उसका सन्दर्भ सरल की तरफ रहता है, जैसे दो वाक्य हैं-

(1) वह नटखट लड़का है।

(2) वह लड़का नटखट है।

इसमें वाक्य को आधारभूत मानने से भाषा-वैज्ञानिक प्रथम को सरल तथा दूसरे को व्युत्पन्न मानने से जटिल मानता है। 'वाक्य भाषा की पूर्ण इकाई तथा लघुतम पूर्ण उच्चार है।' अनुवाद करते समय एक विशिष्ट भाषा के वाक्यों को दूसरी भाषा की विशिष्ट वाक्य-रचना में रूपान्तरित करना पड़ता है। इस कार्य को करते हुए स्त्रोत-भाषा की वाक्य-रचना को लक्ष्य-भाषा की संरचनात्मक एवं व्यावहारिक प्रकृति के अनुकूल वाक्य-रचना में बदलने की सावधानी बरतनी पड़ती है। जब एक भाषा के वाक्य का दूसरी भाषा के वाक्य में शब्दश: रूपान्तरण नहीं हो पाता तो अर्थ के स्तर पर अन्तर करना पड़ता है तथा अर्थ का यह स्तर वाक्य योजना से जुड़ा हुआ है। भाषा में पद-पदार्थ महत्वपूर्ण नहीं होते, वाक्य महत्वपूर्ण होते हैं। स्वयं वैयाकरण भी पदवाद का खण्डन करके वाक्यवाद

की स्थापना करते रहे हैं क्योंकि वाक्य की सत्ता पद से पृथक् है। वाक्य से ही अर्थ का ज्ञान तथा अर्थाभिव्यक्ति होती है, पद अथवा पदों से नहीं। वाक्य में तात्विक दृष्टि से पद का अस्तित्व नहीं है। इस तरह वाक्य के अर्थ की स्वतंत्र सत्ता है।

शास्त्र से अलग भाषा एक व्यावहारिक वस्तु है। जब बच्चा मुख से ध्वनियाँ उच्चरित करता है तब उनका अर्थ वाक्य के रूप में प्रकट होता है, जैसे-बच्चा कहता है दूध, तो माँ पूरा अर्थ ग्रहण करती है कि उसे दूध चाहिए। निश्चित है कि वाक्य भाषा की इकाई है तथा भाषा वाक्यों का समूह। मनुष्य अपने समस्त संबंधों को भाषा के माध्यम से ही सोचता, समझता तथा समझाता है। अतः अनुवाद करते समय वाक्य को पूरे सामाजिक-सांस्कृतिक सन्दर्भ में समझा जाता है। अगर हम इससे काटकर उसे समझने की कोशिश करते हैं तो अर्थगत असंगतियाँ पैदा होती हैं; उदाहरणार्थ-'हेमलेट' का कथन 'To be or not to be that is the question....' 'हेमलेट' की सम्पूर्ण द्वन्द्वात्मक परिस्थितियों को काटकर अगर देखा जाएगा तो वाक्य-रचना में निहितार्थ की गहराई तक हम नहीं पहुँच पायेंगे। सिर्फ मत का ही अर्थ ग्रहण कर पायेंगे। पर अनुवाद में वाक्य-रचना का गहनतम स्तर पकड़ने का प्रयत्न होना चाहिए। साहित्यिक वाक्यों में शाब्दिक स्तर से ज्यादा उनका अर्थ-अनुगूँजगत स्तर ही सार्थक प्रासंगिकता रखता है क्योंकि वह सामान्य वार्तालाप का वाक्य नहीं होता वरन् विशिष्ट अर्थ तथा सन्दर्भ की अन्तर्मानसिकता का वाक्य होता है। जब कभी अनुवादक इस तरह के वाक्य को अभिधेय बना देता है तो स्त्रोत-भाषा की अर्थशक्ति का अनुमान पाठक को नहीं लग पाता तथा लक्ष्य-भाषा की अर्थशक्ति को वह कुछ भी योग नही दे पाता। स्त्रोत-भाषा की वाक्य-योजना में अगर समृद्ध ध्वनि-व्यापार-प्रक्रिया है तो वह अनुवाद के माध्यम से लक्ष्य-भाषा में भी समृद्ध रूप से पेश हो सकती है।

विज्ञान अथवा विधि ऐसे विषय होते हैं जिनका अर्थ हमेशा वाक्य स्तर पर ही ग्रहण किया जाता है। अतः इनका अनुवाद करते समय वाक्य को ठीक वैसा का वैसा ही पेश करना उपयुक्त होगा। इससे दूसरी बात, जो सामने आती है वह यह है कि अनुवादक को उस विषय की पूरी जानकारी होना चाहिए, जिसका अनुवाद वह कर रहा है।

वाक्य, भाषा का शरीर पक्ष है तथा वाक्यार्थ आत्मपक्ष। इस दृष्टि से वाक्य-विज्ञान वाक्य के उच्चारण-पक्ष का अध्ययन करता है-'वाक्य-विन्यास में वाक्य अवयवों का परस्पर संबंध, रूपान्तर-क्रम तथा वाक्य बनाने की रीति का वर्णन किया जाता है।' इस अध्ययन की ऐतिहासिक, वर्णनात्मक एवं तुलनात्मक पद्धतियाँ भाषा-वैज्ञानिकों को मान्य हैं। वाक्य के रचना-पक्ष को प्रश्रय देने वाले विद्वान, रचना, रूप तथा प्रक्रिया तीनों पर दृष्टि केन्द्रित करते हैं क्योंकि भाषा के सम्प्रेषण-पक्ष का सम्पूर्ण दायित्व वाक्य पर टिका होता है। चाहे वैयाकरण हो अथवा अनुवादक पद तथा वाक्य के संबंध में सही ढंग से जानकारी हेतु उसे दो सिद्धान्तों पर ध्यान देना होगा-अभिहितान्वयवाद एवं अन्विताभिधानवाद। ये सिद्धान्त मीमांसकों ने पद तथा वाक्य के संबंध के सन्दर्भ में दिये हैं। अभिहितान्वयवादी पदों को महत्व देते हैं। अन्विताभिधानवादी वाक्यों को महत्व देते हैं। उनका कहना है कि वाक्यों को तोड़ने से पद बनते हैं। वाक्य की प्रथम सत्ता स्वीकार करने से इन्हें वाक्यवादी भी कहा जाता है। आधुनिक भाषा-विज्ञान वाक्य को भाषा की सार्थक इकाई के रूप में स्वीकृति देता है। इस दृष्टि से अन्विताभिधानवाद का महत्व और बढ़ जाता है।

विषय को स्पष्टता से समझने हेतु यहाँ निम्न तथ्यों पर विचार किया जा रहा है। अनुवाद में वाक्य की महत्ता निम्न तथ्यों से स्पष्ट हो सकी है-

(1) **श्लेषात्मक वाक्य-** श्लेषात्मक वाक्य अगर स्वतंत्र रूप से बोले अथवा लिखे जायें तो श्रोता अथवा पाठक को उनका अभीष्ट अर्थ-ग्रहण करने में कठिनाई होती है। अन्य वाक्यों के साथ प्रसंगानुकूल ही श्लेषात्मक वाक्य का अर्थ जाना जा सकता है; जैसे-'सुमन के खेलो सुन्दर खेल' इसका अर्थ दो तरह से निकलता है, एक फूल के सन्दर्भ में एवं दूसरा सुन्दर मन के सन्दर्भ में। व्याकरणिक श्लेषात्मक वाक्य में सही अर्थ-ग्रहण करने हेतु प्रसंग निर्देश इसलिए जरूरी है कि उसके बगैर अर्थावगति असम्भव है; जैसे-'माँ ने लेटे हुए बच्चे को दवा पिलाई।'

अब इस वाक्य में निश्चित रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता, क्योंकि माँ भी लेटी हो सकती है तथा बच्चा भी लेटा हो सकता है। इसी तरह-'दोनों' आदमी दौड़ते हुए बच्चों के पास आए। इस वाक्य में यह स्पष्ट नहीं है कि दोनों आदमी दौड़ते हुये आये अथवा बच्चे दौड़ रहे थे। इस तरह की वाक्य प्रवृत्ति संस्कृत में भी रहती है। इससे अनुवाद में बड़ी ही कठिनाई होती है। उदाहरणार्थ-'अयोध्या अटवी: विदधि' इसके दो अर्थ हो सकते हैं-(1) जंगल को अयोध्या समझ, (2) अयोध्या को जंगल समझ।

(2) **आन्तरिक तथा बाह्य संरचना-** आन्तरिक तथा बाह्य संरचना से भी वाक्यों के अर्थ प्राय: बदलते हैं, जैसे-'वह नाचने वाली है।' इस वाक्य के दो अर्थ होंगे-एक तो यह कि वह नाचना अभी शुरू करने वाली है एवं दूसरा यह कि नाचना उसका व्यवसाय है। इस तरह दो अर्थ निकलने का कारण यह है कि वाक्य-संरचना के भीतर दो वाक्य काम कर रहे हैं। एक वाक्य तो यह काम कर रहा है कि वह नाच पेश करने वाली है एवं दूसरा यह कि नाच उसका व्यवसाय है। अनुवादक को इस तरह के अनेकार्थी वाक्यों के संबंध में निरंतर सतर्कता रखनी पड़ती है एवं बाह्य अर्थ से ज्यादा आन्तरिक अर्थ की तरफ ध्यान लगाना पड़ता है, जैसे-'मुझे साड़ी पसन्द है।' इस वाक्य में कई आन्तरिक वाक्य मौजूद हैं-मुझे साड़ी पहनना पसन्द है, कोई साड़ी विशेष पसन्द है, दूसरों को साड़ी पहने हुए देखना मुझे पसन्द है, समस्त वेशभूषाओं में मुझे सिर्फ साड़ी ही पसन्द है।

(3) **व्यंग्यपरक वाक्य-** व्यंग्यपरक वाक्य प्राय: सभी भाषाओं में जाने-अनजाने मौजूद रहते हैं। उनके अर्थ को समझने हेतु मूल पाठ के प्रसंग पर पुन:-पुन: ध्यान दिया जाना चाहिए; जैसे-'प्रसाद' के नाटक 'चन्द्रगुप्त' में चाणक्य सम्पूर्ण व्याकरण की अव्यावहारिकता पर व्यंग्य करता है तथा यह व्यंग्य सावधानी से पढ़ने पर ही पकड़ में आता है-

"भाषा ठीक करने से पहले मैं मनुष्यों को ठीक करना चाहता हूँ।"

नाटकों में वार्तालाप के माध्यम से जीवन की लय को पकड़ने का प्रयत्न किया जाता है। अत: वहाँ ऐसे व्यंग्यपरक वाक्यों के बहुत से उदाहरण मौजूद होते हैं। उपन्यास में भी ऐसे उदाहरण पर्याप्त मात्रा में मिल जाते हैं; जैसे-'गोदान' में जमींदार के पूछने पर कि होरी तुम बहुत कमजोर हो गये हो, होरी का उत्तर ऐसा ही व्यंग्यात्मक है-

'मोटे वे होते हैं जो दूसरों का खाते हैं।'

इस वाक्य में वर्ग-संघर्ष की चेतना का पूरा अहसास है। प्रसंग को पकड़ने की थोडी-सी चूक से ही अनर्थ हो जाता है।

(4) **प्रतीकात्मक वाक्य-रचना-** संरचना किसी भी भाषा का मूलाधार ही नहीं होती वरन् प्रतीक क्रम व्यवस्था को, चाहे वह प्राचीन हो अथवा नवीन, दृष्टि में लाती है। जब वाक्य में कोई निश्चित प्रतीक चल पड़ता है तो उसका अनुवाद सीधे नहीं हो पाता। ऐसी स्थिति में उसे टिप्पणी देकर समझाना पड़ता है; जैसे-

साँप।
तुम सभ्य तो हुए नहीं;
नगर में बसना
भी तुम्हें नहीं आया।
एक बात पूछूँ-'उत्तर दोगे?'
तब कैसे सीखा डसना-
विष कहाँ पाया?

सामान्य गद्य के वाक्य-विन्यास को कवि ने यहाँ तोड़ा है तथा कविता का विशिष्ट वाक्य-विन्यास अर्थ-योजना के अनुकूल बनाया है। 'तुम सभ्य तो हुए नहीं' पंक्ति अगर गद्य की पंक्ति होती तो कहा जाता 'तुम सभ्य नहीं हुए' पर यहाँ कवि द्वारा शब्द-क्रम बदल दिये जाने से सम्पूर्ण अर्थ-विधान बदल गया है तथा वाक्य-योजना शब्दार्थ के लिए शब्द-क्रम पर आधृत हो गई है। अगर इस पंक्ति का अंग्रेजी में अनुवाद किया जाये-'You have not become civilized' तो अभिप्रेत अर्थ संकेतित नहीं होता, क्योंकि यहाँ पर 'तो' शब्द का जो ध्वन्यर्थ है वह अंग्रेजी के इस वाक्य में नहीं आ सका। ऐसी स्थिति में अनुवादक को अर्थ के स्पष्टीकरण हेतु अलग से टिप्पणी देनी चाहिए।

(5) **अर्थ-तत्व तथा संबंध-तत्व-** दो भाषाओं की रचना-प्रक्रियाओं को समान रूप से अर्थ-तत्व एवं संबंध-तत्व अभिव्यक्त करते हैं। यह ठीक है कि संबंध तत्वों का कोई अर्थ नहीं होता। फिर भी वे अर्थ-तत्वों के साथ सम्पृक्त-होकर संरचना को निखारने में बहुत मददगार सिद्ध होते हैं। अत: इन दोनों को संरचनाओं का मेरुदण्ड कहा जाता है; जैसे-'मैं घर में लिखता हूँ।' इसमें संबंध-तत्व की दो स्थितियाँ हैं-'मैं' तथा 'ता' एवं बाकी 'में', 'घर', 'लिख', 'हूँ' सभी अर्थ-तत्व हैं। अत: भाषा के निकटस्थ अवयवों पर अनुवादक को ध्यान देना चाहिए।

(6) **वैज्ञानिक भाषा तथा भावात्मक भाषा-** अन्त:करण में जितनी प्रवृत्तियाँ होती हैं उन्हीं के अनुसार भाषा-प्रयोग होते हैं। कई बार ऐसा होता है कि अन्त:करण की सभी प्रवृत्तियों को भाषा अभिव्यक्त नहीं कर पाती। ऐसी स्थिति में वाक्य-रचना को बड़ा संघर्ष करना पड़ता है क्योंकि हमें पता तो है पर अभिव्यक्त कैसे करें एवं अभिव्यक्त हो जाने पर भी वह पूर्णतया सम्प्रेषित कैसे हो? भावात्मक भाषा विन्यास में ऐसी कठिनाई बहुत होती है। वैज्ञानिक विषय के कथन प्राय: मूर्त धरातल पर चलते हैं। रिचर्डस के मत से विज्ञान कथन की रचना करता है तथा काव्य 'आभासी कथन' की। विज्ञानपरक कथन में प्रतीकात्मक मूल्य नहीं के बराबर होता है पर कविता में जो प्रतीकात्मक मूल्य है, वह हमारे मनोभावों से जुड़ा होता है। भावात्मक भाषा के अर्थ-तत्व चार चीजें समेटते हैं– (1) वाच्यार्थ, (2) भावना, (3) सुर, (4) अभिप्राय। इनमें से अभिप्राय सबसे महत्वपूर्ण होता है। अत: शैली-विज्ञान मानता है कि काव्य भाषा का एक विशिष्ट रूप है।

अनुवादक को काव्य के अभिप्राय को पकड़ने हेतु रूप की बजाय वस्तु एवं अर्थ की तरफ ज्यादा ध्यान देना चाहिए। जैसे पीछे अज्ञेय की कविता का उदाहरण दिया गया था। उसमें अनुवादक 'रूप' पर ही उलझ जाएगा तो वह सम्पूर्ण अर्थ प्रक्रिया से दूर पड़ जायेगा।

(8) **वाक्य के अवयव-** जिन पदों तथा खण्डों से वाक्य बनते हैं उन्हें ही वाक्य का अवयव कहा जाता है। किसी भी वाक्य के अर्थ में सही निर्धारण अथवा ज्ञान हेतु उस वाक्य-विशेष के निकटतम अवयव को जानना अपेक्षित होता है, क्योंकि अर्थ की इकाइयाँ निकटतम अवयवों पर ही

आधृत होती हैं। वाक्य में इनका स्थान दूर रहने पर भी अर्थ की दृष्टि से निकट रहता है। अनुवादक हेतु यह आवश्यक है कि वह इन निकटतम अवयवों को पकड़ने में कोई चूक न होने दे। उदाहरणार्थ-

'We visited Zoo, Museum, Children's Park and Red Fort of Delhi.'

इस वाक्य का अनुवाद अगर यह किया जाये कि हमने चिड़ियाघर, म्यूजियम, चिल्ड्रन्स पार्क एवं दिल्ली का लाल किला देखा तो वस्तुत: यह अनुवाद गलत होगा। होना चाहिए-'हम दिल्ली का चिड़ियाघर, म्यूजियम, चिल्ड्रन्स पार्क एवं लाल किला देखने गये।' क्योंकि 'दिल्ली का' संबंध इन चारों स्थानों से है न कि अकेले लाल किले से। इसी तरह एक और वाक्य है-

'Well known experts and professors were invited.'

इस वाक्य का अनुवाद दो तरह से हो सकता है-

(1) सुप्रसिद्ध विशेषज्ञ एवं आचार्य आमंत्रित किये गये।

(2) सुप्रसिद्ध विशेषज्ञ एवं सुप्रसिद्ध आचार्य आमंत्रित किये गये।

अत: वाक्य में अलग-अलग शब्दों की बजाय निकटतम अवयवों पर ध्यान दिया जाना चाहिए। अगर वाक्य में इन अवयवों की स्थिति को भली-भाँति समझा नहीं जाएगा तो अर्थ समझने में भयंकर भूल होने तथा परिणामस्वरूप भ्रष्ट अनुवाद हो जाने की सम्भावना है। 'Is the work done' में 'is' एवं 'done' दूर-दूर रहते हुए भी एक-दूसरे के निकटतम अवयव हैं।

(9) **प्रयोग-रीति-** हर एक भाषा का अपना विशिष्ट मुहावरा होता है। इस विशिष्ट मुहावरे की पहचान उस भाषा विशेष को पढ़ने-लिखने तथा बोलने से आती है। अत: वाक्य-रचना के स्तर पर मुहावरे का विशेष महत्व है। वस्तुत: यह किसी भाषा में किसी बात को कहने का ढंग अथवा रीति विशेष होती है। अनुवाद करते समय भाषा की इस प्रवृत्ति की तरफ हमेशा ध्यान रखा जाना चाहिए। स्त्रोत-भाषा में कही गई बात का लक्ष्य-भाषा में अर्थ-बोध करा देना ही पर्याप्त नहीं होता। वह बात इस ढंग से पुनर्प्रस्तुत की जानी चाहिए कि अटपटी न लगे वरन् ऐसा लगे कि वह बात हम मूलतया लक्ष्य भाषा में ही कह रहे हैं। अभिप्राय यह है कि अनुवाद करते समय कथ्य को लक्ष्य-भाषा में अन्तरित करने समय लक्ष्य-भाषा का सहज स्वरूप नष्ट नहीं होना चाहिए। भाषा की अभिव्यक्ति का सहज ढंग उसका वाक्य-विन्यास, संरचनात्मक गठन, उसकी रवानी का ध्यान अनुवाद करते समय हमेशा रखा जाना चाहिए। स्त्रोत-भाषा एवं लक्ष्य-भाषा के भिन्न मुहावरे के मध्य सामंजस्य बैठाने की यह प्रक्रिया भाषा की प्रयोग-विधि को केन्द्र में रखे बगैर असम्भव है। उदाहरणार्थ, अंग्रेजी में कहा जाता है : 'He has taken his examination.' पर हिन्दी में इसके लिए कहा जाएगा : 'वह अपनी परीक्षा दे चुका है।' इसी तरह हिन्दी में हम कहते हैं : 'मेरी घड़ी में साढ़े चार बजे हैं।' पर अंग्रेजी में अगर इसका अनुवाद कर दिया जाए : 'It is half past four in my watch'. तो यह सर्वथा गलत हो जाएगा, क्योंकि अंग्रेजी में कहना चाहिए : 'It is half past four by my watch'.

तात्पर्य यह है कि अगर भाषा की मूल प्रवृत्ति की अवहेलना करते हुए समानार्थी शब्द पेश कर दिये जायेंगे तो अनुवाद सर्वथा गलत, बेढंगा एवं हास्यास्पद बन जायेगा।

(10) **लिंग-** अनुवादक को स्त्रोत-भाषा एवं लक्ष्य-भाषा में प्रचलित व्याकरणिक लिंग के नियमों तथा प्रयोगों से सुपरिचित होना चाहिए। जिन भाषाओं में व्याकरणिक लिंग हैं, उनका अनुवाद

करते समय विशेष सावधानी जरूरी है। नहीं तो बहुत बड़ी गलती हो जाने की सम्भावना रहती है। ऐसी भी भाषाएँ हैं जिनमें लिंग हैं ही नहीं; जैसे-तुर्की, फारसी आदि। ऐसी भाषाओं का अनुवाद उन भाषाओं में करते समय, जो लिंग प्रधान हैं, बड़ी ही सतर्कता से काम लेना चाहिए। लिंग संबंधी नियम विभिन्न भाषाओं में अलग-अलग ही होते हैं। अंग्रेजी में निर्जीव वस्तुओं हेतु Neuter gender है पर हिन्दी में निर्जीव वस्तुएँ स्त्रीलिंग एवं पुल्लिग के अन्तर्गत ही आती हैं-'फूल रखे हैं', 'किताबें रखी हैं' में फूल पुल्लिग हैं, किताब स्त्रीलिंग। अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद करते समय इसका पूरा ध्यान रखना होगा।

इसी तरह कुछ शब्द ऐसे हैं जो हिन्दी में पुल्लिग हैं एवं अंग्रेजी में स्त्रीलिंग; जैसे-Spring, ship, moon अंग्रेजी में स्त्रीलिंग हैं पर हिन्दी में पुल्लिग। अंग्रेजी की पंक्ति है-'Happly the Queen Moon is on her throne' इसका शब्दानुवाद होगा : 'सम्भवतया महारानी शशि अपने सिंहासन पर विराजमान हैं।' पर हिन्दी के लिंग के अनुसार लिखा जाना चाहिए-'सम्भवतया महाराज शशि अपने सिंहासन पर विराजमान हैं।' इसी तरह हिन्दी का वाक्य है-'जहाज एवं उसकी सभी नावें तूफान में नष्ट हो गईं।' अंग्रेजी में इसका अनुवाद "The ship and all his boats were destroyed in the storm' नहीं होगा वरन् होगा : 'The ship and all her boats were destroyed in the storm.'

हिन्दी में लिंग बहुत ज्यादा महत्वपूर्ण इसलिए है कि ये क्रिया, आकारान्त विशेषण तथा संबंध कारक के परसर्ग को प्रभावित करते हैं-

लड़का आया है - The boy has come.

लड़की आई है - The girl has come.

यहाँ अंग्रेजी के वाक्यों में कर्ता के लिंग के अनुसार क्रिया प्रभावित नहीं हुई पर हिन्दी के वाक्यों में क्रिया कर्ता के लिंग से प्रभावित हुई। अंग्रेजी के वाक्यों में-

He is a good boy.

She is a good girl.

लड़का तथा लड़की दोनों के लिए good शब्द का इस्तेमाल किया गया है पर हिन्दी में 'अच्छा लड़का' और 'अच्छी लड़की' होगा। इसी तरह 'Ram's mother, Ram's father हेतु हिन्दी में राम की माता एवं राम के पिता होगा।

हिन्दी में प्राणिवाचक लिंग आसानी से मालूम हो जाते हैं क्योंकि उनके जोड़े होते हैं। पर छोटे आकार के प्राणियों में; जैसे-जोंक, जूँ, मक्खी आदि में लिंग निर्णय की कठिनाई होती है। बंगला, उड़िया, असमिया में प्रमुखतया विशेषण एवं क्रिया में लिंग-परिवर्तन नहीं होता। इन भाषाओं से हिन्दी में अनुवाद करते समय लिंग संबंधी कठिनाई सामने आती है।

प्राकृतिक तथा व्याकरणिक लिंगों की जानकारी से अनुवादक लक्ष्य-भाषा के वाक्य-विन्यास को इस अर्थ में समृद्ध बनाता है कि वह जटिल वाक्य-विन्यास प्रक्रिया को सरल वाक्य-विन्यास प्रक्रिया की तरफ मोड़ दे सकता है। व्याकरणिक लिंगों के शब्द; जैसे-ग्रन्थ, पुस्तक आदि में अर्थ की दृष्टि से अन्तर नहीं होता पर फिर भी लिंग की दृष्टि से इनमें अन्तर है। ग्रन्थ पुल्लिग है एवं पुस्तक स्त्रीलिंग।

भाषाओं में लिंगों की व्यवस्था अलग-अलग है। हिन्दी में दो लिंग हैं, संस्कृत, ग्रीक, जर्मन तथा रूसी में तीन। वस्तुत: लिंगभेद की इतनी ही उपयोगिता है कि वह भाषा को व्याकरणिक अन्विति देता है।

(11) **वचन-** वचन संबंधी नियम हर भाषा के निजी होते हैं। हिन्दी, अंग्रेजी आदि में दो वचन हैं पर संस्कृत में तीन वचन होते हैं, वहाँ दो हेतु द्विवचन रखा गया है। हिन्दी में बहुवचन की धारणा व्यक्ति तथा समूह के आधार पर है। अंग्रेजी में वचन संबंधी नियम विशिष्ट होते हैं; जैसे-कुछ वस्तुओं में एकवचन एवं बहुवचन रूप समान होते हैं-Swine, sheep, deer, hair। संख्यात्मक विशेषणों के पश्चात् प्रयोग करते समय pairs, dozen, stone, hundred, thousand आदि के भी बहुवचन नहीं बनाये जाते; जैसे-'I bought two dozen pencils' कुछ संज्ञाएँ ऐसी होती हैं जिन्हें बहुवचन के रूप में ही प्रयुक्त किया जाता है; जैसे-socks, cissors, trousers, spectacles, animals आदि। इसी तरह कुछ संज्ञाएँ एकवचन होने पर भी बहुवचन के रूप में प्रयुक्त होती हैं, जैसे-cattle, poultry आदि। हिन्दी में भी कुछ शब्द ऐसे हैं जो बहुवचन होने पर भी एकवचन के रूप में प्रयुक्त होते हैं; जैसे-'वह सात वर्ष का है।' हिन्दी में आदरसूचक वाक्यों में एकवचन के स्थान पर भी बहुवचन का प्रयोग किया जाता है; जैसे-'मेरे पिताजी आये हैं।' पिताजी एकवचन पर भी 'आये हैं' बहुवचन का प्रयोग हुआ है। अंग्रेजी में ऐसा कोई नियम नहीं है। ऐसी स्थिति में अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद करते समय अनुवादक बहुधा ध्यान नहीं रख पाता तथा जब वह 'Shakespeare was a great poet' हेतु 'शेक्सपियर महान् कवि था' लिख देता है तो हिन्दी भाषा की दृष्टि से यह अशिष्ट-सा लगता है क्योंकि हिन्दी के अनुसार लिखा जाना चाहिए 'शेक्सपियर एक महान् कवि थे।'

एकवचन मैं (1) के लिए भी कुछ हिन्दी भाषी क्षेत्रों में 'हम' का प्रयोग होता है तथा हम जायेंगे' का अर्थ वस्तुत: 'मैं जाऊँगा' ही होता है। ऐसी स्थिति में अनुवादक को प्रसंग का ध्यान रखना चाहिए, तभी वचन की दृष्टि से अर्थ का सही निर्धारण हो सकेगा।

(12) **पुरुष-** पुरुष की कल्पना वक्ता, श्रोता तथा उनसे भिन्न तीसरे व्यक्ति के आधार पर हुई है। अनुवाद करते समय लक्ष्य-भाषा की प्रवृत्ति के अनुसार पुरुष रखा जाना जरूरी होता है; जैसे-हिन्दी का वाक्य है-'राम ने कहा कि मुझे भूख नहीं है' अंग्रेजी में अगर ज्यों का त्यों अन्तरित कर दिया जाए : 'Ram said that I am not hungry' तो यह गलत होगा। अंग्रेजी भाषा में इसे कहा जाएगा : 'Ram said that he was not hungry.'

(13) **कारक चिह्न-** अन्य व्याकरणिक कोटियों के समान कारक संबंधी धारणा भी सभी भाषाओं में एकरूप नहीं है। अंग्रेजी में दो कारक हैं, लैटिन तथा जर्मन में पाँच, संस्कृत में सात एवं हिन्दी में आठ। अनुवाद करते समय कभी-कभी कारक चिह्नों में भी परिवर्तन किया जाता है; जैसे-

मैं तुम से दोपहर को मिलूँगी।

I shall meet you at noon.

इसी तरह—

Write in red ink.

लाल स्याही से लिखो।

(14) **कर्ता एवं कर्म की व्यापकता-** संस्कृत में कर्ता तथा कर्म जितने प्रबल कारक हैं उतने प्रबल कारक अन्य भाषाओं में शायद नहीं हैं। कुछ ऐसे प्रयोग हैं जिनमें प्रेरणाहीन धातु का कर्ता प्रेरणावान बनाने पर कर्म होकर द्वितीया विभक्ति ग्रहण करता है। शेष स्थलों में अनुक्त रहने से तृतीया विभक्ति होता है; जैसे-'वेद पठति' अथवा 'वेद पाठयति' हिन्दी में हो जायेगा 'वेद पढ़ता है,' 'वेद पढ़ाता है'। अंग्रेजी में जहाँ प्रेरणात्मक बनने पर धातु बदलती है वहाँ तो यही प्रक्रिया है पर ज्यादातर प्रेरणा का अनुवाद दो क्रियाओं में किया जाता है-'Shyam makes the boy drink milk' अथवा 'Makes him sleep' हिन्दी में इसका अनुवाद होगा 'श्याम लड़क को दूध पिलाता है' अथवा 'उसे सुलाता है।' अंग्रेजी में प्रेरणात्मक क्रिया होती ही नहीं। अत: अनुवादक संस्कृत जैसी भाषा अंग्रेजी में अनुवाद करते समय सर्वत्र 'make', 'give' आदि लगाकर प्रेरणा का बोध करता है; जैसे-He makes him speak, learn, known, win. अंग्रेजी ने प्रेरणा हेतु बहुत-सी स्वतंत्र क्रियाएँ निर्मित की हैं; जैसे-गत्यर्थक 'Send', बुद्धयर्थक 'Teach', भोगतार्थक 'feed' तथा अकर्मक 'seat' लेकिन इनमें 'feed' हमेशा एक ही कर्म रखता है; जैसे-'Ram feeds him with sweets' पर 'teach' दो कर्म लेता है-'He reads Gita' एवं 'Ram teaches him Gita' अत: कर्ता तथा कर्म का यह सूक्ष्म अन्तर अनुवादक के सामने सूक्ष्म अर्थभेद की समस्या पैदा करता है।

(15) **काल-** अनुवाद करते समय 'काल की अवधारणा' पर ध्यान देना होगा, क्योंकि सभी भाषाओं में काल-योजना समान नहीं है। काल एक तरह का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य होता है-संस्कृत एवं रूसी में क्रिया के कालभेद का आधार उसका 'प्रकार' है। हिन्दी एवं अंग्रेजी के अभ्यस्त व्यक्तियों को रूसी की 'प्रकार-धारणा' कठिनाई में डाल देती है क्योंकि वहाँ भूत अथवा भविष्य दोनों कालों के ही भेद हैं-पूर्ण एवं अपूर्ण। लेकिन काल की अवधारणा भाषा के विकासक्रम के साथ बदलती रहती है; जैसे-'वह प्रत्येक सोमवार को वहाँ जाता है।' इस कार्य का संबंध भूतकाल से भी है, भविष्यकाल से भी तथा वर्तमान काल से भी। वह हर सोमवार को पहले भी जाता था, आज भी जाता है एवं जाता रहेगा। वस्तुत: 'जाता है' क्रिया यहाँ काल-निरपेक्ष रूप में प्रयुक्त है। हिन्दी के 'चावल पकाता है' तथा चावल पका रहा है' दोनों का अनुवाद संस्कृत में 'ओदनं पचति' ही होगा। अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद करते समय 'I stayed there' का अनुवाद 'मैं वहाँ रहता था।' एवं 'मैं वहाँ रहा' दोनों ही हो सकते हैं। इसी प्रकार 'मैं अभी आया' का अनुवाद 'I am just coming' होगा एवं उसने कहा था कि अच्छी तरह से हूँ' का अनुवाद होगा : 'He said that he was quite well'.

(16) **काल-स्त्रोत-** स्त्रोत भाषा से लक्ष्य-भाषा में अन्तरित करते समय वाक्यों के वाच्यगत अन्तर को विस्मृत नहीं किया जाना चाहिए। कर्मवाच्य के कुछ प्रयोग विलक्षण होते हैं तथा उन पर ध्यान देना जरूरी है; जैसे-'I did not take notice of the fact' यहाँ वस्तुत: क्रिया है, 'take' तथा उसका कर्म है-'notice'। यहाँ इसका कर्मवाच्य अगर किया जाए 'The fact was not taken notice of'. तो यह वाक्य गलत हो जाएगा। सही कर्मवाच्य वाक्य होना चाहिए-'The notice of the fact was not taken by me.'

इसी तरह prepositional verb पर भी अनुवाद में ध्यान दिया जाना चाहिए; जैसे-एक वाक्य है-'The boy was searched for'. हिन्दी में अनुवाद होगा : 'लड़का खोजा गया', 'लड़के को खोजा गया।'

अंग्रेजी में भाववाच्य नहीं होता। कर्तृव्य तथा कर्मवाच्य प्राय: सभी भाषाओं में होते हैं एवं एक भाषा के वाच्य के अनुसार उसे दूसरी भाषा में पेश किया जा सकता है; जैसे-

संस्कृत का — 'रामेण रावण: हत:'।

हिन्दी में होगा — 'राम द्वारा रावण मारा गया अथवा रावण राम द्वारा मारा गया।'

अंग्रेजी में होगा — 'Ravna was killed by Ram.'

पर यह हमेशा जरूरी नहीं होता कि कर्मवाच्य को कर्मवाच्य के रूप में ही अथवा कर्तृवाच्य को कर्तृवाच्य के रूप में ही अनूदित किया जाए, क्योंकि सभी भाषाओं में वाच्य-प्रयोग की आदत समान नहीं होती। हिन्दी में कर्मवाच्य की तुलना में कर्तृवाच्य का प्रयोग ज्यादा किया जाता है। ऐसी स्थिति में अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद करते समय अगर अंग्रेजी में जो कर्मवाच्य है तथा हिन्दी में कर्मवाच्य के रूप में प्रस्तुत होने पर वह उतना प्रभावपूर्ण नहीं बनता जितना कि कर्तृवाच्य के रूप में बन सकता है तो ऐसी स्थिति में वाच्य में अन्तर कर दिया जाना चाहिए।

'He was laughed of by all his friends'. इसे हिन्दी में 'उसके सभी मित्रों द्वारा उस पर हँसा जाता था' के स्थान पर लिखा जाना चाहिए-'उसके सभी मित्र उस पर हँसते थे।'

(17) **जोड़ना तथा छोड़ना**- जिस भाषा से अनुवाद किया जा रहा है उसके वाक्यों को हमेशा शब्द-प्रति-शब्द लक्ष्यभाषा में अन्तरित नहीं किया जाता। कभी-कभी उसके वाच्य लक्ष्यभाषा में पेश करते समय एकाधिक शब्द अपनी ओर से जोड़ना अथवा छोड़ना पड़ता है, क्योंकि भाषा प्रयोग-विधि अथवा भाषा की प्रवृत्ति हमेशा बड़ी ही महत्वपूर्ण होती है। हमारी बात नीचे दिए गए कुछ उदाहरणों से स्पष्ट हो जायेगी-

जोड़ना-

He travels third class.

वह तीसरे दर्जे में यात्रा करता है।

Better late than never.

कभी न पहुँचने से देर से पहुँचना अच्छा है।

He is my cousin.

वह मेरा चचेरा भाई है।

छोड़ना-

He was bought a house over there.

उसने वहाँ मकान खरीद लिया है।

She is my cousin.

वह मेरी चचेरी बहन है।

समग्रत: कहना चाहिए कि वाक्य-रचना का भाषा-प्रवृत्तिगत तथा सामाजिक सांस्कृतिक सन्दर्भ हमेशा ही बड़ा महत्वपूर्ण होता है। उसका अर्थ इन्हीं के परिप्रेक्ष्य में सार्थक बनता है। वाक्य में शब्दों से ज्यादा उनका अर्थ तथा अर्थ के भीतर से निकलने वाली ध्वनि एवं आशय महत्व रखते हैं। अत: अनुवाद-प्रक्रिया में सबसे ज्यादा जरूरी होता है सन्दर्भ। क्योंकि सन्दर्भ से कटकर शब्द निरर्थक ही होता है। वाक्य में शब्दों को विषय तथा प्रसंग के सन्दर्भ में ही देखा जाना चाहिए।

इकाई-तीन

अनुवाद की प्रक्रिया-प्रविधि

अनुवाद अथवा अनूदित कृति पर विचार करने की दो दृष्टियाँ हैं, पाठपरक दृष्टि एवं प्रक्रियापरक दृष्टि। पाठपरक दृष्टि के केन्द्र में मूलरचना तथा अनूदित कृति के बीच पाये जाने वाले संबंधों की प्रकृति रहती है। इसके आधार पर हम यह देखना चाहते हैं कि अपने सन्देश, बनावट एवं बुनावट में अनूदित कृति, मूलरचना के कितने निकट अथवा समतुल्य है? इस सन्दर्भ में जो भी चर्चा सम्भव है, उसका आधार तथा सीमा पाठ के रूप में मूलरचना एवं अनूदित कृति ही बनती है। इस दृष्टि के आधार पर हम ऐसे प्रश्नों का उत्तर पा सकते हैं कि अनुवाद क्या है? अनुवाद कैसा बन पड़ा है? अनुदित पाठ, मूल रचना के कितने निकट अथवा कितनी दूर है? मूल रचना के सन्देश को किस सीमा तक अनुदित कृति सम्प्रेषित करने में समर्थ है? अथवा फिर अपनी संरचनात्मक बनावट अथवा शैलीगत बुनावट में अनुवाद मूल रचना के शिल्प विधान के कितने अनुरूप है?

स्पष्ट है, पाठपरक दृष्टि अनुवाद अथवा अनुदित कृति को पहले एक बनी-बनाई वस्तु के रूप में स्वीकार करती है, एवं फिर उस पर चर्चा करती है। इस दृष्टि से अनुवाद पर बात करने वालों की आँख के आगे से वे सभी प्रसंग ओझल रहते हैं जिसका सामना अनुवाद करते समय एक अनुवादक को करना पड़ता है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि अनुवाद भाषा-व्यापार की एक सर्जनात्मक प्रक्रिया भी है। यह प्रक्रिया मूल रचना पर अनुवादं की भावात्मक प्रतिक्रिया से शुरू होकर अनूदित पाठ के रचना-विधान तक फैली होती है। यह कहा जा सकता है कि अनुवाद भाषा-व्यापार की एक संश्लिष्ट प्रक्रिया भी है तथा इस प्रक्रिया का परिणाम भी। अनुवाद पर विचार करने वाली प्रक्रियापरक दृष्टि अनूदित कृति (पाठ) को मात्र मूल रचना में निहित सन्देश एवं उसकी बनावट और बुनावट के सन्दर्भ के आधार पर नहीं देखना चाहती, वरन् अनुवाद को उन प्रसंगों के परिप्रेक्ष्य में भी देखना चाहती है जिसका सामना अनुवादक को मूल रचना को समझने, इसके अर्थ को दूसरी भाषा में बाँधने एवं अनूदित कृति के रूप में सममूल्य पाठ के रचने के दौरान करना पड़ता है।

प्रक्रियापरक दृष्टि अनुवाद (अनूदित कृति) को मूल रचना के सममूल्य एक स्वायत्त पाठ के रूप में भी देखती है तथा उसे उस प्रक्रिया के परिणाम के रूप में भी ग्रहण करती है जो दो पाठों (मूल एवं अनूदित) को सममूल्य और सममूल्य बनाती है। दूसरी ओर वह अनूदित पाठ की अपनी विशिष्टता तथा सीमा के कारणों पर भी प्रकाश डालती है। इस दृष्टि के आधार पर हम ऐसे प्रश्नों का भी उत्तर पा सकते हैं-अनुवाद मूल रचना से भिन्न है तो क्यों? इस तरह मूल रचना एवं अनूदित पाठ की भिन्नता का यह सिर्फ आधार ही नहीं पेश करती बल्कि उसकी व्याख्या भी करती है। वह उन प्रसंगों का निर्धारण भी करती है जो मूलपाठ एवं अनूदित पाठ/कृति में अन्तर का आधार पैदा करता है। वह उन भिन्न भूमिकाओं के सन्दर्भ में अनूदित कृति को देखती है जिसका निर्वाह अनुवाद करते समय एक अनुवादक को करना पड़ता है। यही कारण है कि यह अनुवाद प्रक्रिया दो दृष्टियों से बहुत महत्वपूर्ण एवं प्रासंगिक हो जाती है। एक ओर अनुवाद प्रशिक्षण में इसका महत्व सहज-सिद्ध है, क्योंकि वह अनुवादक को उसकी विभिन्न भूमिकाओं के प्रति सजग तथा समर्थ बनाने में मददगार होती है। दूसरी ओर इसका उपयोग मशीनी अनुवाद में सार्थक ढंग से किया जाना सम्भव है क्योंकि वह अनुवाद-व्यापार के विभिन्न चरणों की तरफ न सिर्फ संकेत देती है, बल्कि उन चरणों में पाये जाने वाले विकल्पों को भी निर्धारित करने में मददगार होती है।

अनुवाद का व्यापार-क्षेत्र- किसी कही हुई बात को फिर से कहना अनुवाद है। दूसरे शब्दों में किसी एक भाषा में पहले से ही रचित कृति (पाठ) के सन्देश को किसी दूसरी भाषा में सममूल्य रचना (पाठ) के रूप में व्यक्त करना अनुवाद है। स्पष्ट है कि अनुवाद दो भाषाओं के सम्प्रेषण व्यापार की अपेक्षा रखता है। पहली भाषा का संबंध मूल रचना से है, जिसे अनुवाद की तकनीकी शब्दावली में स्त्रोत-भाषा कहा जाता है। दूसरी भाषा का संबंध उस भाषा से है जिसमें अनुवाद किया जाना है। इसे लक्ष्य भाषा की संज्ञा दी जाती है।

दो भाषाओं के सम्प्रेषण व्यापार से सम्बद्ध होने से अनुवाद-व्यापार में हमें दो तरह के पाठकों का सामना करना पड़ता है। पहला पाठक, स्त्रोत भाषा में रचित कृति के रूप में अनुवादक को पहले से ही उपलब्ध होता है। इस मूल कृति का रचयिता (लेखक) कोई अन्य होता है तथा लेखन के समय इसका पाठक समुदाय भी कोई दूसरा होता है। अनुवादक का मूल कृति के रचयिता से परिचय हो भी सकता है एवं नहीं भी। अनुवादक सबसे पहले पाठक के रूप में इस मूल रचना से टकराता है। उसका पहला दायित्व पाठक के रूप में मूलकृति में अन्तर्निहित सन्देश को समझना होता है।

अनुवाद सन्देश का भाषान्तर होता है। स्त्रोत-भाषा के पाठ में अन्तर्निहित सन्देश को समझने का काम तो उस भाषा का सामान्य पाठक भी करता है। लेकिन अनुवादक को द्विभाषिक की भूमिका का निर्वाह भी करना पड़ता है। उसे इस सन्देश को लक्ष्य भाषा में बाँधना पड़ता है। यहाँ ध्यान देने की जरूरत है कि अपने अस्तित्व के एक धरातल पर सन्देश भाषा-तटस्थ होती है तो एक-दूसरे धरातल पर वह भाषा-विशिष्ट। उदाहरण के लिए अंग्रेजी की अभिव्यक्ति Good morning को ही लें। अपने अस्तित्व के एक धरातल पर यह भाषा-तटस्थ है, क्योंकि हम कह सकते हैं कि इसके सन्देश का संबंध अभिवादन-व्यवस्था से है। जब दो व्यक्ति आपस में मिलते हैं तब अपनी बात अथवा आचरण का प्रारम्भ अभिवादन के साथ करते हैं। हर समाज की अपनी एक अभिवादन-व्यवस्था होती है, जिसे वह अपने आचरण की किसी विशिष्ट मुद्रा अथवा भाषा की विशिष्ट अभिव्यक्ति द्वारा व्यक्त करता है। Good morning को अभिवादन की अभिव्यक्ति समझना सन्देश के प्रयोजन अथवा प्रकार्य को समझना है, जो भाषा से बँधकर भी भाषा की विशिष्ट अभिव्यक्ति से मुक्त है।

अंग्रेजी भाषा में Good morning को अभिवादन की अभिव्यक्ति के रूप में ग्रहण तो किया जाता है, लेकिन प्रयोग के सन्दर्भ में इसका व्यवहार प्रात:काल ही सम्भव है। इस भाषा में यह अभिव्यक्ति समय-सापेक्ष है, अत: वहाँ Good morning के साथ-साथ Good afternoon, Good evening, Good night का प्रयोग सम्भव है। यह अंग्रेजी भाषा अथवा समाज का अपना वैशिष्ट्य है। हिन्दी भाषा अथवा समाज के संस्कार में अभिवादन-व्यवस्था का संबंध समय के साथ नहीं होता। इसलिए इन सभी सन्दर्भों में उसका समानान्तर प्रयोग "नमस्ते" ही होगा। सुबह, दोपहर, शाम अथवा रात में किये जाने वाले अभिवादन में सर्वदा "नमस्ते" का प्रयोग ही सम्भव है।

हिन्दी भाषा अथवा उसके समाज की अभिवादन-व्यवस्था की अपनी विशिष्टता है। इसमें अभिव्यक्तियाँ समय के सन्दर्भ में नहीं बदलतीं लेकिन वे सामाजिक स्तर-भेद के साथ अपने प्रयोग में जरूर बदल जाती हैं। हम बराबर वालों को "नमस्ते" अथवा "राम-राम" कहते हैं तो बड़ों के अभिवादन हेतु "प्रणाम" अथवा "पाव लागे" का व्यवहार करते हैं। इस दूसरी स्थिति में बड़ा, छोटों को अभिवादन के सन्दर्भ में आशीर्वाद देते हुए "खुश रहो" अथवा "चिरंजीव भव" कहता है। ये

तथ्य इस बात की तरफ संकेत देते हैं कि प्रत्येक भाषा एवं उसके समाज की अभिव्यक्ति-रूढियाँ सन्देश को विशिष्ट बनाती हैं। सन्देश के भाषान्तरण के समय अनुवादक को उस द्विभाषिक की क्षमता का परिचय देना पड़ता है जो स्त्रोत भाषा तथा लक्ष्य भाषा की न सिर्फ अभिव्यक्ति-रूढ़ियों एवं शैली-संस्कार की भिन्नता का उसे पता बताये वरन् यह भी सूचित करे कि अभिव्यक्ति-शैली की भिन्नता के बावजूद किस तरह भाषान्तरित सन्देश समान स्थिति में समान प्रकार्य सम्पादित करते हैं।

अनुवादक लक्ष्य भाषा में पाठ का रचयिता (लेखक) भी होता है। वह न सिर्फ मूलकृति के सन्देश को समझता है एवं उसे भाषान्तरित करता है, वरन् लक्ष्य भाषा में पाठ के रूप में उसे पेश भी करता है। लेखक के रूप में अनुवादक को कई तरह के दबाव का सामना करना पड़ता है। उसे एक तरफ मूल कृति में निहित सन्देश को लक्ष्य भाषा की अभिव्यक्ति-रूढियों के माध्यम से व्यक्त करना पड़ता है, दूसरी ओर उसे अनूदित पाठ का इस तरह का निर्माण करना पड़ता है जिससे वह (अनूदित पाठ) मूल पाठ के समतुल्य बन सके एवं साथ ही साथ उसके अपने पाठकों हेतु बोधगम्य एवं सम्प्रेष्य हो सके। हर अनुवाद का अपना पाठक-वर्ग होता है, इसलिए लेखक के रूप में अनुवादक को पाठ के सन्देश के प्रति ईमानदारी के साथ-साथ अपने पाठक को भी अनुवाद के प्रति आश्वस्त करते चलना पड़ता है।

अनुवादक को तीन तरह की विशिष्ट भूमिकाओं का निर्वाह करना पड़ता है-

(1) मूल पाठ के पाठक की भूमिका।

(2) (मूलपाठ के) सन्देश को (अनूदित पाठ) में भाषान्तरित करने वाले द्विभाषिक की भूमिका।

(3) अनूदित पाठ के रचयिता की भूमिका।

अनुवाद प्रक्रिया : दो प्रारूप- अनुवाद प्रक्रिया पर जिन विद्वानों ने गम्भीरतापूर्वक विचार किया है उनमें नाइडा तथा न्यूमार्क के विचार ही ज्यादा चर्चित हैं।

नाइडा अनुवाद को एक वैज्ञानिक तकनीक के रूप में स्वीकार करते हैं। उनके अनुसार अनुवाद, भाषा विज्ञान का एक अनुप्रयुक्त पक्ष है, इसलिए अनुवाद प्रक्रिया के विभिन्न सोपानों को समझने तथा उसके विश्लेषण हेतु भाषावैज्ञानिक तकनीक का प्रयोग जरूरी है। उनके अनुसार अनुवाद प्रक्रिया के तीन सोपान हैं-(1) विश्लेषण, (2) अन्तरण, (3) पुनर्गठन। एक कुशल तथा अनुभवी अनुवादक इन तीन विभिन्न सोपानों को एक छलाँग में पार कर लेता है। लेकिन अनुवाद के प्रशिक्षार्थी को इन तीनों सोपानों से क्रमशः गुजरना पड़ता है।

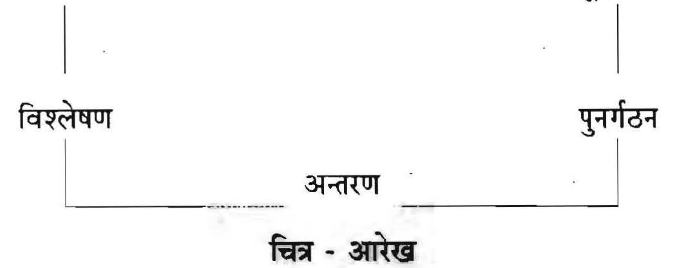

चित्र - आरेख

इन तीनों सोपानों में एक निश्चित क्रम है। स्त्रोत भाषा में पहले से ही रचित मूलपाठ के सन्देश को ग्रहण करने हेतु अनुवादक सबसे पहले पाठ का विश्लेषण करता है। पाठ भाषाबद्ध होता है तथा सन्देश भाषिक संरचना के माध्यम से सम्प्रेषित किया जाता है, अत: नाइडा के अनुसार मूलपाठ के विश्लेषण हेतु भाषा सिद्धान्त एवं उसमें अपनाई जाने वाली विश्लेषण तकनीक का उपयोग जरूरी हो जाता है। नाइडा का यह भी मत है कि हर भाषिक संरचना के दो स्तर होते हैं-आभ्यान्तर एवं बाह्य। आभ्यान्तर स्तर का संबंध भाषा के सार्वभौम पक्ष से जुड़ा होता है। इसलिए इस स्तर पर स्थित सन्देश स्त्रोत भाषा एवं लक्ष्य भाषा हेतु समान रूप से होता है। इसके विपरीत बाह्य स्तर की संरचना का संबंध भाषाविशेष की विशिष्ट व्याकरणिक व्यवस्था के साथ रहता है, जिसके कारण गहरे स्तर पर स्थित समान सन्देश को अभिव्यक्त करने हेतु दो भाषाएँ (स्त्रोत भाषा एवं लक्ष्य भाषा) दो भिन्न-भिन्न अभिव्यक्ति प्रणालियों का प्रयोग करती हैं। नाइडा के अनुसार अनुवाद गहन स्तर पर स्थित समानधर्मी सन्देश के कारण ही सम्भव हो पाता है। इसलिए अनुवादक हेतु जरूरी है कि वह बाह्य स्तर पर स्थित भाषिक संरचना का विश्लेषण करते हुए उसके गहन स्तर पर स्थित सन्देश का पता लगाये एवं उस धरातल पर पाठ का अर्थबोध करे।

उदाहरण हेतु अंग्रेजी का एक वाक्य लें-Mohan frightens Sheela. गहरे स्तर पर इसकी दो व्याकरणिक संरचना सम्भव हैं। एक में मोहन, कर्ता के रूप में सक्रिय प्राणी (एजेण्ट) के रूप में कार्य करता है तथा दूसरे में वह करण के रूप में मात्र क्रिया के साधन के रूप में प्रयुक्त होगा। इसी के अनुसार क्रिया के दो अर्थ भी सम्भव हो पाते हैं। हिन्दी में इसके दो समानार्थी सन्देश सम्भव हैं-(1) मोहन शीला को डराता है। (2) शीला मोहन से डरती है। विश्लेषण के बाद प्राप्त इन दोनों सन्देशों के बाद ही अनुवादक पाठ के सन्दर्भ के अनुसार उनमें से किसी एक अथवा दोनों सन्देशों को अनूदित पाठ में सम्प्रेषित करने का निर्णय लेता है।

विश्लेषण से प्राप्त अर्थ-बोध का लक्ष्य भाषा में अन्तरण अनुवाद प्रक्रिया का दूसरा सोपान है। हर भाषा मूल सन्देश को अपने ढंग से भाषित इकाइयों में बाँधती है। इसलिए सन्देश को एक भाषा से दूसरी भाषा में अन्तरित करने का मतलब ही है अभिव्यक्ति के धरातल पर उसका पुनर्विन्यास करना। नाइडा के अनुसार पुनर्विन्यास की यह प्रक्रिया कुछ-कुछ उसी तरह की है जिस तरह कुछ विभिन्न आकार के बक्सों के सामान को उससे भिन्न आकार के दूसरे बक्सों में दुबारा सुव्यवस्थित ढंग से सजाया जाना। पुनर्विन्यास की यह प्रक्रिया कभी मात्र ध्वनि/लिपि स्तर तक सीमित होती है; जैसे-अंग्रेजी के शब्दों में 'एकेडमी', 'टेकनीक', 'इंटरीम', 'कॉमेडी' क्रमश: अकादमी, तकनीक, अन्तरिम तथा कामदी के रूप में, और कभी नवीन अभिव्यक्ति के रूप में भाषा के सभी स्तरों पर। हिन्दी की लोकोक्ति 'नाच न आवे आँगन टेढ़ा' के अंग्रेजी अनुवाद A bad carpenter quarrels with his tools. में न तो नाच का प्रसंग है तथा न ही आँगन एवं उसके टेढ़े होने का। लेकिन सन्देश के धरातल पर ये दोनों अभिव्यक्तियाँ सममूल्य हैं।

पुनर्गठन- यह अनुवाद प्रक्रिया का तीसरा सोपान है। ध्यान देने की बात है कि हर भाषा की अपनी अभिव्यक्ति-प्रणाली तथा कथन-रीति होती है। लक्ष्य-भाषा में अनूदित पाठ का निर्माण यदि मूल रचना के सन्देश को यथारूप रखने के प्रयत्न से जुड़ा होता है, तो उसके साथ लक्ष्य-भाषा की उस अभिव्यक्ति-संस्कार के साथ ही सम्बद्ध रहता है, जो अनूदित पाठ को सहज स्वाभाविक तथा बोधगम्य बनाता है। अनूदित पाठ के रचयिता के रूप में अनुवादक कई तरह की छूट ले सकता है, यथा पद्य में लिखी मूलकृति का यह गद्यानुवाद कर सकता है (लेकिन मूलकृति की काव्यात्मकता

का बगैर ह्रास किये हुए) मूल रचना के सात-आठ वाक्यों के सन्देश को चार-पाँच वाक्यों या दस-ग्यारह वाक्यों में बाँध अथवा फैला सकता है (लेकिन मूल सन्देश में बगैर कुछ जोड़े अथवा घटाये), व्याकरणिक संरचना में भी वह परिवर्तन ला सकता है; यथा-कर्मवाच्य में व्यक्त मूल अभिव्यक्ति को अनूदित पाठ में वह कर्तृवाच्य में बदल सकता है (बशर्ते यह बदलाव लक्ष्य भाषा की प्रकृति की माँग का परिणाम हो)

बाइबिल का अनुवादक होने से नाइडा की दृष्टि मूलत: एक विशिष्ट तरह के पाठ के अनुवाद तक सीमित थी। उनके अनुवाद संबंधी उदाहरण भी प्राचीन पाठ, उसमें निहित गूढ़ार्थ की पकड़, विकसित एवं अविकसित भाषाओं में सन्देश के सम्प्रेषण की समस्या आदि से जुड़े थे। अनुवाद-प्रक्रिया पर न्यूमार्क द्वारा प्रस्तावित प्रारूप नाइडा के समान कुछ चरणों की अपेक्षा रखता है, लेकिन अपने चिन्तन में वह व्यापक है।

न्यूमार्क तथा नाइडा द्वारा प्रस्तावित आरेख की तुलना से स्पष्ट होता है कि अनुवाद प्रक्रिया संबंधी संकल्पना में यदि उनमें समानता है, तो एक सीमा तक विभिन्नता भी है। न्यूमार्क अनुवाद प्रक्रिया की दो दिशाएँ स्वीकार करते हैं तथा इसीलिए मूल पाठ एवं अनूदित पाठ के सह-संबंध को दो स्तरों पर स्थापित करते हैं। पहला संबंध दो पाठों के अन्तरक्रमिक अनुवाद पर आधारित है, जिसे उन्होंने खण्डित रेखा के माध्यम से जोड़ा है। अन्तरक्रमिक अनुवाद शब्द-प्रति-शब्द अनुवाद होता है। इसलिए कई सन्दर्भों में न सिर्फ अपनी प्रकृति में अपारदर्शी होता है, वरन् भ्रामक भी होता है। खण्डित रेखा से जोड़ने का मतलब ही है कि यह अनुवाद की सही प्रक्रिया नहीं है, भले ही कुछ अनुवादक इस रास्ते को अपनाने की तरफ प्रवृत्त हों एवं कुछ को यह मार्ग सहज तथा सीधा लगे।

अनुवाद का दूसरा रास्ता मूल पाठ के अर्थबोधन तथा लक्ष्य-भाषा में उच्च अर्थ के अभिव्यक्तिकरण का है। न्यूमार्क द्वारा संकेतित बोधन की प्रक्रिया, नाइडा द्वारा प्रस्तावित विश्लेषण की प्रक्रिया से ज्यादा व्यापक संकल्पना है, क्योंकि इसमें विश्लेषण से प्राप्त अर्थ के साथ-साथ अनुवादक द्वारा मूल पाठ की व्याख्या का अंश भी शामिल है। कई भाषिक पाठ अथवा उक्तियाँ अनुवादक की व्याख्या की अपेक्षा रखती हैं, नहीं तो अर्थ पारदर्शी नहीं बन पाता। सुरेशकुमार ने कुछ उदाहरण देकर न्यूमार्क के प्रारूप को समझाने का प्रयास किया है। उदाहरण के लिए, हम ऐसे ही कुछ उदाहरण द्वारा इस प्रारूप का यहाँ स्पष्ट करना चाहेंगे। किसी ट्रक पर अंकित 'पब्लिक केरियर' का अनुवाद क्या हो? अन्तरक्रमिक अनुवाद के अनुसार, 'पब्लिक' हेतु 'लोक/जन' तथा 'केरियर' हेतु 'वाहन' मानते हुए एक अनुवाद 'लोकवाहन/जनवाहन' सम्भव है। लेकिन यह अनुवाद पारदर्शी अनुवाद नहीं माना जा सकता एवं न ही पूर्णरूप से बोधगम्य। बोधन के धरातल पर 'पब्लिक केरियर' का एक अर्थ यह भी है कि उक्त वाहन किसी की निजी सम्पत्ति इस रूप में नहीं है कि सामान्य व्यक्ति इसका उपयोग कर सके। इसका जनसाधारण हेतु उपयोग सम्भव है बशर्ते कि व्यक्ति इसका उचित भाड़ा दे। इसलिए अर्थ के एक धरातल पर इसका अन्वय सम्भव है-A carrier which can be hired by public. इसलिए पारदर्शी अनुवाद के रूप में इसका अनुवाद 'भाड़े का ट्रक' भी सम्भव है।

बोधन, व्याख्या सापेक्ष होता है तथा यह व्याख्या स्त्रोतभाषा में अन्वय के रूप में सम्भव है। उदाहरण के लिए, अंग्रेजी का एक वाक्य लें-Judgement has been reserved. अन्तरक्रमिक अनुवाद के रूप में हिन्दी में कहा जा सकता है-निर्णय आरक्षित/सुरक्षित कर लिया

गया है। यह अनुवाद बोधन के धरातल पर न सिर्फ अपारदर्शी वरन् अर्थ-सम्प्रेषण में भ्रामक भी है। 'निर्णय का आरक्षण/सुरक्षा' अपने आशय को स्पष्ट नहीं कर पाता। इसलिए यह अर्थ-बोधन के धरातल पर स्रोतभाषा में ही अन्वय की अपेक्षा रखता है; यथा-Judgement will not be announced immediately/Judgement will be announced later. आदि।

बोधन के बाद का चरण है लक्ष्यभाषा में सन्देश के अभिव्यक्तिकरण का, जो पुनर्गठन तथा पुनःसर्जना की भी अपेक्षा रखता है। ध्यान देने की बात है कि हर भाषा की अपनी बनावट तथा बुनावट होती है, उसकी अपनी शैली एवं संस्कार होता है, अपना मिजाज और तेवर होता है। लक्ष्य-भाषा में अनूदित पाठ के अभिव्यक्तिकरण के चरण में सन्देश के यथासम्भव सुरक्षित रखते हुए एक भाषा के रचना विधान तथा संस्कार से दूसरी भाषा के रचना-संस्कार एवं शैली-संस्कार की यात्रा करनी होती है। अंग्रेजी के वाक्य-I have two books का अनुवाद होगा, 'मेरे पास दो पुस्तकें हैं', पर I have two daughters का अनुवाद 'मेरे पास दो लड़कियाँ हैं' गलत माना जाएगा। हिन्दी के भाषा-व्यवहार के अनुरूप अनुवाद होगा-"मेरे दो लड़कियाँ हैं। यह भाषा संस्कार ही है जिसके अनुसार A line is reply will be appreciated का अनुवाद 'उत्तर में लिखी एक पंक्ति प्रशंसित की जायेगी' गलत माना जायेगा जबकि 'उत्तर की प्रतीक्षा रहेगी' अनुवाद सही माना जायेगा। इसी तरह I wonder if this is true का अनुवाद 'मुझे इसकी सच्चाई में सन्देह है' ज्यादा उपयुक्त माना जायेगा। इस चरण पर Judgement has been reserved का हिन्दी में अभिव्यक्तिकरण होगा-निर्णय अभी नहीं सुनाया जायेगा।

अनुवाद प्रक्रिया के अन्तिम चरण का संबंध पाठ-निर्माण से है। इस चरण पर अनुवादक न सिर्फ लक्ष्य भाषा के अनुरूप सन्देश को भाषिक अभिव्यक्ति का जामा पहनाता है, वरन् मूल भाषा के पाठ की प्रकृति को ध्यान में रखते हुये सह-पाठ का निर्माण करता है। उदाहरण के लिए अंग्रेजी का No Admission अथवा No Smoking का बोधन के धरातल पर अन्वय होगा Admission is not allowed या Smoking is not allowed तथा अभिव्यक्तिकरण के चरण पर हिन्दी में कथन होगा 'अन्दर आना मना है, सिगरेट-बीड़ी पीना मना है' लेकिन यह सम्भव है कि पाठ-निर्माण के चौथे चरण में हम अनुवाद करें 'प्रवेश निषिद्धि'। इसी तरह Judgement has been reserved का अभिव्यक्तिकरण के चरण पर हिन्दी रूपान्तरण 'निर्णय अभी नहीं सुनाया जायेगा' स्वीकार हो सकता है। लेकिन पाठ-निर्माण के चरण पर इसका अनुवाद 'निर्णय बाद में सुनाया जायेगा' ज्यादा सार्थक माना जायेगा।

अनुवाद प्रक्रिया के इन विभिन्न चरणों पर पाई जाने वाली अंग्रेजी-हिन्दी की दो अभिव्यक्तियों के उदाहरण नीचे दिये जा रहे हैं-

1. **स्रोत (मूल) भाषा पाठ-**	(क) No smoking.
	(ख) Judgement has been reserved.
1. (अ) **अन्तरक्रमिक अनुवाद-**	(क) नहीं धुआँ करना/धूम्रपान।
	(ख) निर्णय रख लिया गया सुरक्षित।
2. **बोधन**	(क) Smoking is not allowed here.
	(ख) Judgement will not be announced immediately.

3. **अभिव्यक्तिकरण-** (क) बीड़ी-सिगरेट पीना मना है।

(ख) निर्णय अभी नहीं सुनाया जायेगा।

4. **पाठ-निर्माण-** (क) धूम्रपान निषेध।

(ख) निर्णय बाद में सुनाया जायेगा।

समरूपतामूलक प्रतिक्रिया का सिद्धान्त

समरूपतामूलक प्रतिक्रिया का सिद्धान्त- भाषा में शब्दों की बजाय उनकी अर्थगत प्रतिक्रियाओं पर ध्यान दिया जाता है। शब्द अथवा ध्वनि-प्रतीक अर्थ-बोधक चिह्नमात्र होते हैं जैसे एक राजनीतिज्ञ कहता है-'समस्याओं के समाधान हेतु बूढ़ों को राजनीति से हटा दिया जाना चाहिए।' इस कथन पर अनुकूल अथवा प्रतिकूल प्रतिक्रिया होगी। पर इसका मूल अर्थ यह है कि असामाजिक स्थितियाँ पैदा करने वाले बूढ़ों को अलग कर दिया जाना चाहिए। इसलिए अनुवाद करते समय समरूपतामूलक प्रतिक्रिया वाले सिद्धान्त के द्वारा ज्यादातर अर्थ-विकृतियों की व्याख्या की जा सकती है।

स्त्रोत-भाषा की पाठ-सामग्री को लक्ष्य-भाषा की पाठ-सामग्री में अन्तरित करने की प्रक्रिया अनुवाद है। इस तरह अनुवाद एक भाषा से दूसरी भाषा में भाषान्तरण है। भाषागत प्रतीकों के प्रति सजगता अनुवादक का दायित्व है क्योंकि इन्हें ठीक से अनूदित न कर पाने पर ही अनुवाद में घपला हो जाने की सम्भावना रहती है। अनुवाद का संबंध भाषा से है तथा भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन एवं अनुसंधान भाषा-विज्ञान का विषय है। यही कारण है कि अच्छा अनुवादक भाषा के मर्म को समझने हेतु प्रयत्नशील रहता है। वह भाषागत संरचना पर विशेष रूप से ध्यान केन्द्रित करता है। भाषागत संरचना के मुख्य आधार हैं-संज्ञा, क्रिया, विशेषण एवं क्रिया-विशेषण।

भाषा के अध्येता मानते हैं कि भाषा जीवन की ठोस वास्तविकता है। अत: भाषा की परिभाषा एवं व्याख्या समय-समय पर विविध सन्दर्भों को ध्यान में रखकर भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों से की गई है। मुख्य बात तो यह है कि भाषा सम्प्रेषण व्यापार का सर्वाधिक सशक्त माध्यम है एवं यह माध्यम सांकेतिक तथा यादृच्छिक प्रतीकों पर आधृत है। 'भाषा' एक व्यापक शब्द है जिससे सभी विशिष्ट भाषाओं का बोध होता है। अपनी प्रकृति के अनुसार भाषा एक मौखिक प्रतीकात्मक पद्धति है। प्रतीकार्थ विज्ञान की यह मान्यता सही है कि भाषा यादृच्छिक वाक्प्रतीकों की पद्धति है। इस पद्धति के चार महत्वपूर्ण रूप हैं-

(1) भाषा एक पद्धति है।

(2) भाषा प्रतीकों की पद्धति है।

(3) भाषा की रचना वाचिक-प्रतीकों से होती है।

(4) भाषिक प्रतीक यादृच्छिक होते हैं।

इस तरह भाषा प्रतीक पद्धति से विचारों एवं भावों की सीधी अभिव्यक्ति है। सीधी दृष्टिगत होने पर भी भाषा एक जटिल मानसिक क्रिया है जिसमें कई अनुभव-प्रेरक प्रतीक अन्तर्निहित होते हैं। ब्लूम्स फील्ड ने कहा है-"भाषा यादृच्छिक ध्वनि-प्रतीकों की संरचनात्मक व्यवस्था है जिसके माध्यम से किसी भाषा-भाषी समुदाय के लोग अपने भाव अथवा विचारों की एक-दूसरे तक सम्प्रेषित करते हैं।"

इसी तरह हाल एवं ट्रेगर की मान्यता है, "अन्ततोगत्वा भाषा यादृच्छिक प्रतीकों की एक व्यवस्था ही होती है जिसके माध्यम से किसी भाषा-भाषी समुदाय के लोग एक-दूसरे से बातचीत करते हैं। इस विधान की सार्थकता यह होती है कि यह ऐसी वस्तुओं, विचारों, संकल्पनाओं एवं गतिविधियों की तरफ निर्देश करती है जिसका अस्तित्व उस समुदाय विशेष में पाया जाता है।"

भाषा के इस सामाजिक-सांस्कृतिक महत्व को रेखांकित करते हुए भाषाविद् सस्यूर ने लिखा है, "भाषा एक प्रकार का ऐसा सामाजिक विधान अथवा संविदा है जो व्यक्ति वक्ता के माध्यम से किन्हीं भी तरीकों से न तो अस्तित्व में लाया जा सकता है, न संशोधित या विकृत किया जा सकता है। उसमें एक ऐसा वाक्पथ अंतर्निहित होता है जिसके अन्तर्गत ध्वनिबिम्ब या श्रवण किसी अर्थ से जुड़ जाता है।"

इस तरह भाषा एक समाजबद्ध स्वतन्त्र पद्धति है, जिसे वास्तवपन की अनुकृति नहीं कहा जा सकता है। प्रतीकात्मक होने के कारण वह हमेशा सार्थक ध्वनियों से निर्मित होती है। ध्वनियाँ तथा संकेत पशु-पक्षी भी करते हैं लेकिन मनुष्य सार्थक ध्वनियों में अपने को बाँधकर विशिष्ट बनाता है। अतः भाषा होने हेतु प्रथम अनिवार्य स्थिति है, भाषा का पद्धतिबद्ध होना। वह तो भाषा हो ही नहीं सकती, जिसकी कोई पद्धति नहीं है। क्योंकि भाषा मानव की यादृच्छिक प्रवृत्ति है, इसलिए उसमें किसी आदिभौतिक एवं दैविक शक्ति का हाथ नहीं है। वह स्वाभाविक प्रवृत्ति की भाँति समाज में अभिव्यक्ति की एक स्वाभाविक शक्ति है।

सामान्य प्रयोग अथवा व्यवहार में भाषा शब्द दो रूपों का वाची है-

(1) सामान्य भाषा; जैसे- जापानी, जर्मनी, अंग्रेजी आदि।

(2) विशिष्ट भाषा; जैसे- राष्ट्रभाषा, राजभाषा, साहित्यिक भाषा, मानक भाषा, आंचलिक भाषा, अन्तर्राष्ट्रीय भाषा आदि जो किसी विशिष्ट रूप का बोध कराती है।

भाषा के कई रूपों में मनुष्य वाक्शक्ति द्वारा विचारों को सम्प्रेषित करता है। पर सामान्य रूप से रूपगत मित्रता होने से एक भाषा दूसरी भाषा से ध्वनिप्रतीक, समूह-संघटना, संरचना तथा शैली में अलग होती है। इस मित्रता का कारण ऐतिहासिक-सांस्कृतिक है। भौगोलिक परिवेश तथा परम्परागत संस्कार भी अलगाव को जन्म देते हैं। इसलिए भाषा एवं संस्कृति का संबंध बहुत गहरा है। समाजशास्त्रीय पृष्ठभूमि रहन-सहन, खान-पान, रीति-रिवाज, कार्य-प्रणाली, भौगोलिक स्थितियाँ, ऐतिहासिक तथा धार्मिक पृष्ठभूमि एवं आर्थिक आधार उसमें मुख्य भूमिका अदा करते हैं। अतः संस्कृति में मानव के भाषिक एवं भाषिकेतर व्यवहार तथा सिद्धान्त समाहित हैं। प्रोफेसर जॉर्ज ग्युसदोर्फ इसी निष्कर्ष पर पहुँचे थे-"भाषा एवं संस्कृति को न तो अलग-अलग किया जा सकता है तथा न किया जाना चाहिए, वैसे ही जिस तरह भाषा और विचार को कभी अलग-अलग नहीं किया जा सकता। इस दृष्टि से भाषा तथा संस्कृति की पारस्परिकता एक अनिवार्य संबंध में बँधी है।"

इस तरह भाषा दो प्रकार के अध्ययन एवं ज्ञान पर निर्भर है-वस्तु का ज्ञान तथा वस्तु विषयक ज्ञान। संस्कृति की सम्पूर्ण आत्मा भाषा में अभिव्यक्ति पाती है। स्वयं ब्लूम्सफील्ड इसी निष्कर्ष पर पहुँचे थे कि किसी भी भाषा के स्वरूप तथा उसकी संस्कृति के ठीक ज्ञान के बगैर भाषा पढ़ाने का मतलब बच्चे के कई साल नष्ट करना भर है एवं उसका परिणाम नगण्य होता है।

इस कोण से भाषा की समझ सांस्कृतिक सन्दर्भों में भाषागत प्रतीकों तथा उनके अर्थों से निर्झरित है।

प्राय: भाषा-विज्ञान में भाषा का अभिप्राय साहित्यिक भाषा से लिया जाता है। जिस भाषा में कोई लिखित साहित्य नहीं होता उसे भाषा न कहकर बोली कहा जाता है। सामान्य मान्यता है कि भाषा हमें साहित्य से सीखने को मिलती है तथा बोली जनसमाज एवं माता-पिता से। यह निरीक्षण का विषय है कि हमारे बोलने एवं लिखने में हमेशा दूरी अथवा अन्तर रहता है। लिखने में हम संयमन तथा नियंत्रण से सुसंस्कृत भाषा का प्रयोग करते हैं। अत: भाषा के हिमायती बोली को गँवारू, असभ्य अथवा असंस्कृत लोगों की भाषा कहते हैं। संस्कृत-सुशिक्षित लोगों की भाषा तथा अपभ्रंश, अपभ्रष्ट (corrupt) शब्दों से भरी हुई भाषा समझी जाती रही है। बोली संबंधी इस भ्रम को आज खण्डित भी किया जा रहा है क्योंकि एक शताब्दी पूर्व ब्रजभाषा 'भाषा' थी तथा खड़ी बोली 'बोली' पर धीरे-धीरे खड़ी बोली न सिर्फ भाषा बनी वरन् राजभाषा एवं राष्ट्रभाषा के पद पर समासीन हो गई। इस तरह बोलियाँ मानक या आदर्श का अतिक्रमण करती रहती हैं क्योंकि वे लोक-जीवन अथवा लोक-संस्कृति से अपनी खुराक लेती हैं। असल में जिन वाक् रूपों की कोई लिखित पद्धति नहीं है अथवा अपढ़ लोग अनगढ़पन से जिनका प्रयोग करते हैं वह भाषा के विपरीत पड़ती है तथा उन्हें बोली कह दिया जाता है। अत: बोली एवं भाषा के अन्तर को भाषा-विज्ञान सर्वेक्षणात्मक धरातल पर समझाना चाहता है।

भाषा-विज्ञान अनुवादक के लिए तो यह निर्देश देता है कि जहाँ तक सम्भव हो सके मानक भाषा ही प्रयुक्त होनी चाहिए। पर अगर विदेशी भाषा के किसी शब्द हेतु लोक-प्रचलित बोली अथवा कोई शब्द बहुत ज्यादा उपयुक्त हो एवं उसकी सन्दर्भगत अर्थवत्ता पर कोई संशय न हो तो उसे ग्रहण कर लेना चाहिए।

अनुवादक एक भाषा के प्रतीकों का दूसरी भाषा में भाषान्तरित करता है एवं इन दोनों भाषाओं में प्राय: प्रकृतिगत भिन्नता होती है एवं अगर समानता भी होती है तो अक्सर ऊपरी समानता होती है। इसलिए दोनों में ही विशिष्ट सांस्कृतिक-ऐतिहासिक परिवेश से भावों, विचारों तथा क्रियाओं, स्थितियों एवं वस्तुओं को व्यक्त करने वाले प्रतीक इनके अपने होते हैं; जैसे-अंग्रेजी में 'Chair' तथा हिन्दी में 'कुर्सी'। शब्दों के अलावा प्रत्येक भाषा में लिंग, वचन, काल, पुरुष, कारक आदि को अभिव्यक्त करने की निजी व्यवस्था होती है; जैसे-संस्कृत में तीन लिंग होते हैं तथा हिन्दी में दो। हिन्दी में कर्ता के लिंग के अनुसार क्रिया का लिंग होता है पर अंग्रेजी में ऐसा नहीं होता। हिन्दी के वाक्य 'आप जायेंगे' एवं 'आप जायेंगी' दोनों के लिये अंग्रेजी में 'You will go' ही होगा। इसी तरह हिन्दी में निर्जीव वस्तुओं को भी स्त्रीलिंग तथा पुल्लिग के अन्तर्गत रखा जाता है, जैसे-'कमरा बड़ा है', 'कोठरी छोटी है'। पर अंग्रेजी में निर्जीव वस्तुओं के Neuter gender हैं। इसी भाँति हिन्दी में एकवचन 'लड़का' के बहुवचन रूप चार होंगे-लड़का, लड़के, लडको, लड़कों, पर अंग्रेजी में Boy का बहुवचन सिर्फ 'Boys' ही होगा।

अनुवाद कार्य में स्रोत-भाषा की व्यवस्था के स्थान पर लक्ष्य-भाषा की व्यवस्था रखी जाती है। इस कार्य में बहुत सावधानी अपेक्षित होती है। इस बात को हम इस उदाहरण से समझ सकते हैं-

"Mohan reads"- "मोहन पढ़ता है।"

"Shila reads"- "शीला पढ़ती है।"

अंग्रेजी में Mohan तथा Shila दोनों हेतु "Reads" क्रियारूप प्रयुक्त हुआ है। इस तरह कर्ता के लिए लिंग का कोई प्रभाव क्रिया पर नहीं पड़ा है। पर हिन्दी में क्रिया कर्ता के लिंग के अनुसार ही चलेगी तथा कहा जाएगा : "मोहन पढ़ता है।", "शीला पढ़ती है।" इसी तरह हिन्दी के "आज जाते हैं।", "तू जाता है", "तुम जाते हो" हेतु अंग्रेजी में सिर्फ "You go." ही रहेगा।

इस तरह यह बात स्पष्ट होती है कि अनुवाद का सीधा संबंध तुलनात्मक भाषा-विज्ञान से है। अनुवाद-समानार्थक शब्द (Translation equivalents) खोजने की प्रक्रिया ही अपने आपमें एक तुलनात्मक प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में हम स्त्रोत-भाषा के किसी शब्द की लक्ष्य-भाषा में ऐसा समानार्थी खोजने का प्रयत्न करते हैं जो स्त्रोत-भाषा के शब्द के समकक्ष अर्थ को पेश करने में अधिकाधिक समर्थ हो, जैसे-अंग्रेजी के "Strongest" शब्द हेतु हिन्दी में हम लिखेंगे "प्रबलतम"। यह तुलना 'शब्द-समूह' एवं 'भाषा व्यवस्था' दोनों की ही होती है। भाषा की व्यवस्था के अन्तर्गत वाक्य-रचना, रूप-रचना तथा ध्वनि आते हैं। इस तरह भाषा-विज्ञान के अन्तर्गत आने वाले भाषा के छः तत्व-ध्वनि, शब्द, वाक्य, अर्थ, रूप तथा लिपि सभी का स्त्रोत-भाषा एवं लक्ष्य भाषा की दृष्टि से तुलनात्मक अध्ययन जरूरी होता है। इस तुलना को अधिकाधिक व्यापक तथा प्रामाणिक बनाने हेतु भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन में ध्वनि-विज्ञान, अर्थ-विज्ञान, रूप-विज्ञान, वाक्य-विज्ञान, शब्द-विज्ञान तथा लिपि-विज्ञान-सभी विधियों का सहारा लेना पड़ता है।

द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् अमेरिका के कई भाषाशास्त्रियों ने, जिसमें शापियर एवं ब्लूम्सफील्ड प्रमुख हैं, भाषा के अध्ययन को नई दिशा दी है। इन विद्वानों ने जीवित भाषा एवं बोली पर ज्यादा बल दिया। अतः भाषा-विज्ञान (Philology) एवं भाषा-शास्त्र (Linguistics) दो अलग-अलग विषय बन गये। ये दोनों ही शब्द भिन्न-भिन्न रूप तथा अर्थ में प्रयुक्त होते हैं। Philology शब्द का व्यवहार प्राचीन भाषा के अध्ययन के सन्दर्भ में होता है। अर्थात् इसका क्षेत्र प्राचीन भाषा-सामग्री के विश्लेषण तक सीमित है। पर भाषाशास्त्र (Linguistics) के अन्तर्गत आधुनिक जीवित भाषाओं एवं बोलियों का अध्ययन पेश किया जा सकता है अर्थात् कथ्यभाषा की ही व्याख्या की जाती है। इसलिए आज के अनुवादक को भाषा-विज्ञान तथा भाषा-शास्त्र दोनों की ही सूक्ष्म एवं गहन पकड़ होनी चाहिए। प्राचीन तथा नवीन भाषा एवं साहित्य के ज्ञान के बगैर अनुवाद सम्भव ही नहीं है।

भाषा-शास्त्र के अन्तर्गत सामान्य भाषा आती है तथा आधुनिक भाषाशास्त्र के अन्तर्गत भाषा का वैज्ञानिक विश्लेषण कई रूपों में किया जा सकता है-(1) वर्णनात्मक, (2) समकालिक, (3) ऐतिहासिक, (4) तुलनात्मक, (5) गठनात्मक। इनमें से समकालिक भाषा-शास्त्र अनुवाद की दृष्टि से सर्वाधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि इसमें जीवित बोलियों का ऐतिहासिक तथा तुलनात्मक अध्ययन सम्भव होता है। जीवित भाषा एवं बोली के लिए समकालीन साहित्य की जानकारी भाषाशास्त्री की तरह अनुवादक को भी होनी चाहिए।

अनुवाद कार्य के साथ भाषा का ऐतिहासिक सांस्कृतिक काल-बोध भी जुड़ा रहता है। प्राचीन कृतियों अथवा शिलालेखों के पाठ का अनुवाद करते समय 'खोये हुए काल की खोज' भी भाषा से करनी पड़ती है।

इकाई-चार

अनुवाद के प्रकार

स्थूल रूप से अनुवाद के बहुत से प्रकार अथवा भेद किये जा सकते हैं। पर इसके मुख्य तीन आधार हैं-(1) सीमा, (2) स्तर, (3) श्रेणी या पदक्रम।

(1) **सीमा के आधार पर अनुवाद के प्रकार-** सीमा के आधार पर अनुवाद के दो भेद किये जा सकते हैं-

(क) पूर्ण अनुवाद-

(ख) आंशिक अनुवाद।

पूर्ण अनुवाद- पूर्ण अनुवाद में सम्पूर्ण अनूद्य-सामग्री का अनुवाद किया जाता है। स्त्रोत-भाषा के पाठ का हर भाग लक्ष्य-भाषा में लाया जाता है।

आंशिक अनुवाद- आंशिक अनुवाद में स्त्रोत-भाषा की पाठ-सामग्री के कुछ अंशों का अनुवाद न करके उन्हें लक्ष्य-भाषा के पाठ में सीधे अन्तरित कर दिया जाता है। साहित्यिक अनुवाद में ऐसा प्राय: किया जाता है। कभी-कभी तो स्त्रोतभाषा के किसी पद को अनुवाद्य समझा जाता है अथवा फिर स्थानीय पृष्ठभूमि या स्थानिक विशेषता लाने के प्रयोजन से उन्हें लक्ष्य-भाषा में ज्यों का त्यों ले लिया जाता है।

(2) **भाषिक स्तर के आधार पर अनुवाद के प्रकार-**भाषिक स्तर के आधार पर अनुवाद के दो भेद किये जा सकते हैं-

(क) समग्रता में अनुवाद,

(ख) निर्बद्ध अनुवाद।

समग्रता में अनुवाद- इस तरह के अनुवाद में स्त्रोत-भाषा पाठ का सभी स्तरों पर प्रतिस्थापित किया जाता है। स्त्रोत-भाषा के व्याकरण तथा शब्दावली को भी लक्ष्य-भाषा के व्याकरण एवं शब्दावली के समकक्षों द्वारा सम्पूर्णता में प्रतिस्थापित कर दिया जाता है।

निर्बद्ध अनुवाद- इस तरह के अनुवाद में स्त्रोत-भाषा के पाठ को लक्ष्य भाषा के पाठ के समानार्थक पाठ द्वारा सिर्फ एक स्तर पर प्रतिस्थापित किया जाता है। इसमें अनुवाद स्वर-विज्ञान या लिपि-विज्ञान अथवा व्याकरण या शब्दविज्ञान के आधार पर किया जाता है। लिपि-वैज्ञानिक अनुवाद को लिप्यन्तरण नहीं समझा जाना चाहिए। क्योंकि लिप्यन्तरण एक जटिल प्रकिया है जिसमें स्वर-विज्ञानपरक अनुवाद एवं स्त्रोत तथा लक्ष्य-भाषा में स्वर-विज्ञान और लिपि-विज्ञान का परस्पर संबंध सम्मिलित होता है। लिप्यन्तरण में स्त्रोत-भाषा की लिपि-विज्ञानपरक इकाइयों को तदनुरूप स्वर-विज्ञानपरक इकाइयों द्वारा प्रतिस्थापित किया जाता है एवं फिर इन स्त्रोत-भाषा की स्वर-विज्ञानपरक इकाइयों को उनके समकक्ष लक्ष्य-भाषा की स्वर-विज्ञानपरक इकाइयों में अन्तरित कर दिया जाता है एवं अन्त में यह लक्ष्य-भाषा की स्वर-विज्ञानपरक इकाइयाँ तदनुरूप लिपि-विज्ञानपरक इकाइयों में प्रतिस्थापित की जाती हैं।

(3) **श्रेणी अथवा पद-क्रम के आधार पर अनुवाद के प्रकार-** इस तरह का अनुवाद व्याकरणिक अथवा स्वर-वैज्ञानिक पदक्रम के क्रम के आधार पर स्थापित किये गये अनुवाद समानार्थकों से संबंधित है, प्राय: इसे क्रमबद्ध अनुवाद भी कहा जाता है। मुक्त अनुवाद, शब्दानुवाद, शब्दश: अनुवाद भी आंशिक रूप से इसी से संबंधित हैं।

मुक्तानुवाद- यह अनुवाद हमेशा बद्ध होता है। प्राय: यह अनुवाद शब्द के स्तर पर क्रमबद्ध अनुवाद होता है।

शाब्दिक अनुवाद- मुक्तानुवाद तथा शब्दश: अनुवाद के बीच की श्रेणी को शब्दानुवाद कहते हैं अथवा शब्दश: अनुवाद से शुरू होता है। पर स्त्रोत-भाषा के व्याकरण के अनुरूप इसमें परिवर्तन कर लिये जाते हैं अर्थात् अतिरिक्त शब्द जोड़ दिये जाते हैं तथा संरचना किसी भी क्रम से बदल सकती है।

भाषा-वैज्ञानिक आधार के अलावा अन्य आधारों पर भी अनुवाद के भेद अथवा प्रकार कर सकते हैं। इनमें से मुख्य आधार निम्न तरह हैं-

(1) वाड्मय, (2) गद्य-पद्य, (3) विधा, (4) विषय, (5) अनुवाद-प्रकृति।

(1) वाड्मय के आधार पर दो भेद हैं-(क) ज्ञान के साहित्य का अनुवाद, (ख) रस अथवा शक्ति के साहित्य का अनुवाद।

(क) ज्ञान के साहित्य के अन्तर्गत भौतिक-शास्त्र, वनस्पति-शास्त्र, जीव-विज्ञान, रसायन-शास्त्र आदि जैसी सभी ज्ञान की धाराओं को अनूदित करने का कार्य किया जाता है। वैज्ञानिक अनुवाद के अन्तर्गत इसी तरह का कार्य विश्व भर में तेजी से हो रहा है।

(ख) शक्ति के साहित्य के अन्तर्गत तमाम भावाश्रित साहित्य आता है। मानव का समस्त लालित्य-बोधीय कार्य, जिसमें ललित कलाओं की स्थिति मुख्य है-इसी अनुवाद के अन्तर्गत आता है। कविता कहानी-नाटक का अनुवाद इसी ललित साहित्य के अनुवाद का एक मुख्य अंग है।

(4) **गद्य-पद्य के आधार पर अनुवाद के प्रकार-**

पद्यानुवाद- सामान्यत: इसमें मूल पद्य का अनुवाद पद्य में ही किया जाता है; जैसे-कालिदास के 'मेघदूत' के कई अनुवाद होते रहे हैं। शेक्सपियर के 'हेमलेट' अथवा 'मैकबेथ' के तमाम अनुवाद इसी श्रेणी में आते हैं। लेकिन स्थिति एवं अवसर को देखते हुए पद्य का अनुवाद गद्य में किया जा सकता है, किया जाना चाहिए। जैसे-कवि नागार्जुन द्वारा कालिदास के 'मेघदूत' का गद्यानुवाद। कभी-कभार तो पद्य का पद्य में अनुवाद करते समय छन्द को ही आधार बना लिया जाता है। हालांकि यह अनिवार्य नहीं है फिर भी छन्द का थोड़ा सा ध्यान रखना भी पड़ता है। पद्य से पद्य के अनुवाद को ही पद्यानुवाद कहते हैं। शब्द-लय एवं अर्थ-लय के अनुकरण पर इस तरह का अनुवाद आधारित होता है।

गद्यानुवाद- गद्य का अनुवाद प्राय: गद्य में ही किया जाता है। प्रेमचन्द के प्रख्यात उपन्यास 'गोदान' के अंग्रेजी आदि में भी कई गद्यानुवाद हुए हैं। पर गद्य से पद्य में अनुवाद करने का कोई रूढ़ नियम नहीं है। अनुवादक चाहे तो गद्य का पद्य में भी अनुवाद कर सकता है। ऐसे उदाहरण मिलते हैं कि गद्य का पद्य में अनुवाद हुआ है। गोल्डस्मिथ के 'The traveller' का श्रीधर पाठक ने 'श्रान्त-पथिक' नाम से पद्य में अच्छा अनुवाद किया है।

छन्दबद्ध अनुवाद- जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है, यह अनुवाद मूल पाठ के छन्द में ही किया जाता है; जैसे-अंग्रेजी के Sonnet का अनुवाद करते समय उसके 11 वर्णों या 14 पंचपदियों में उसकी स्वत: पूर्ण विषय-विचार श्रृंखला को ढालने का प्रयत्न किया जाये। अंग्रेजी के ज्यादातर 'सानेट' Petrach की भाँति दो चतुष्पदियों एवं दो त्रिपदियों अथवा स्पेंसर तथा शेक्सपियर की भाँति तीन चतुष्पदियों एवं एक युग्मक में रचित है। अनुवादक को उनकी इस छन्द-कला का ध्यान रखना होगा। यदि इसी आधार पर अनुवाद किया जाता है, तो इस तरह के अनुवाद को छन्दबद्ध अनुवाद कहते हैं।

छन्दमुक्त अनुवाद- इसमें अनुवादक स्रोत-भाषा के पाठ के छन्द-बन्धन में न बँधकर लक्ष्य-भाषा में प्रचलित किसी भी छन्द को अपना लेता है; जैसे-कालिदास का 'मेघदूत' संस्कृत के मन्दक्रान्ता छन्द में है। पर डॉ. भगवतशरण उपाध्याय ने इसका अनुवाद मुक्त छन्द में किया है। कवि पोव के प्रसिद्ध काव्य 'Essay on Criticism' का अनुवाद कविवर पं. जगन्नाथदास रत्नाकर ने हिन्दी के रोला शब्द छन्द में 'समालोचनादर्श' नाम से किया है।

(5) **विधा के आधार पर अनुवाद के प्रकार-**

(क) **काव्यानुवाद-** इस तरह का अनुवाद गद्य अथवा पद्य में से किसी का भी हो सकता है। यों तो प्राय: काव्य का अनुवाद काव्य में ही किया जाता है। हिन्दी में संस्कृत काव्यों को काव्य में अनूदित करने की एक समृद्ध परम्परा रही है। भारतेन्दु-युग में लाला सीताराम ने कालिदास के 'रघुवंश' का अनुवाद दोहा-चौपाइयों में किया। श्रीधर पाठक ने कालिदास के 'ऋतुसंहार' का अनुवाद ब्रजभाषा के सवैया छन्द में किया। यह लगातार कहा जाता रहा है कि काव्यानुवाद हो ही नहीं सकता, पर ऐसा लगता है कि अनुवादकों ने इस कथन की कभी परवाह नहीं की। प्राचीन परम्परा से इस बात के पर्याप्त प्रमाण दिये जा सकते हैं कि काव्यानुवाद बड़ी लगन से किये जाते रहे हैं। यह काव्यानुवाद निबद्ध एवं अनिबद्ध काव्य के दोनों रूपों का हुआ है। यूनानी कवि होमर के विकसनशील महाकाव्य 'इलियड' के विश्व भर में तमाम काव्यानुवाद हुए है।

(ख) **नाट्यानुवाद-** विश्व-भर में नाट्यानुवाद की एक समृद्ध परम्परा दृष्टिगत होती है। हिन्दी में गोपीनाथ एम.ए. ने सन् 1950 में शेक्सपियर के तीन नाटकों के हिन्दी में अनुवाद किये। उन्होंने 'Romeo and Juliet' का 'प्रेमलीला' नाम से 'As you like it' एवं 'Merchant of Venice' का नये नामों से अनुवाद किया। मथुराप्रसाद चौधरी ने 'मैकबेथ' का 'साहसेन्द्र साहस' नाम से अनुवाद किया। कवि बच्चन एवं अमृतराय ने 'हेमलेट' और 'मैकबेथ' का अनुवाद किया। कवि रघुवीर सहाय ने 'मैकबेथ' का पुन: 'बरनम वन' नाम से अनुवाद किया है।

स्वयं भारतेन्दु ने संस्कृत के 'मुद्राराक्षस' का एवं राजा लक्ष्मणसिंह ने 'अभिज्ञान-शाकुन्तल' का हिन्दी में अनुवाद किया। फिलहाल ही हबीब तनवीर ने 'मृच्छ-कटिकम्' का 'मिट्टी की गाड़ी' के रूप में अनुवाद किया है। इसके अलावा नाट्य रूपान्तर (कहानी-उपन्यासादि के) इस दौर में बहुत लोकप्रिय हुए हैं; जैसे-विष्णु प्रभाकर द्वारा 'गोदान' का 'होरी' नाम से नाट्य-रूपान्तर।

नाटक का संबंध रंगमंच से होने के कारण इस तरह के अनुवादों में कई तरह की व्यावहारिक कठिनाइयाँ सामने आती हैं। अगर रंगमंच की बुनियादी माँगों को पूरा करने में कोई नाट्य-रूपान्तर असफल हो जाता है तो यह नाट्य-रूपान्तरकार की भारी असफलता है। अत: नाटक के अनुवादक एवं नाट्य-रूपान्तरकार का रंगमंच से जुड़ा होना निहायत जरूरी है। रंगमंच के व्यावहारिक ज्ञान के बगैर नाट्यानुवाद सफलता से किया ही नहीं जा सकता।

(ग) **कथानुवाद-** कथा-साहित्य के अन्तर्गत उपन्यास-कहानी आदि को स्थान दिया जाता है। कहानियों एवं उपन्यासों का अनुवाद काव्यानुवाद की तुलना में काफी आसान होता है। साथ ही ये अनुवाद ज्यादा प्रचलित तथा लोकप्रिय भी हैं। टालस्टाय के उपन्याय 'War and Peace' के अनेकों भाषाओं में हुए अनुवाद काफी लोकप्रिय हुए हैं। अज्ञेय ने जैनेन्द्र के प्रख्यात उपन्यास 'त्यागपत्र' का अंग्रेजी में 'The Resignation' नाम से सफल अनुवाद किया है। हिन्दी में भारतीय भाषाओं के हजारों उपन्यास सफलता से अनूदित हुए हैं। संस्कृत की कहानियों-'पंचतंत्र' अथवा 'कथा-सरित्सागर' के विदेशी भाषाओं में सैकड़ों अनुवाद हुए हैं। इस तरह कथानुवाद के क्षेत्र में अनुवादक का योगदान उल्लेखनीय रहा है।

(घ) **अन्य साहित्यिक विधाओं के अनुवाद-** निबन्ध, आत्मकथा, रेखाचित्र, संस्मरण आदि के अनुवाद बहुत समय से प्रचलित हैं। स्वयं आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने बेकन के निबन्धों का अनुवाद 'बेकन-विचार-रत्नावली' के नाम से हिन्दी में किया। गाँधीजी की 'आत्मकथा' के कई भारतीय भाषाओं में अच्छे अनुवाद किये गये हैं।

(6) **विषय के आधार पर अनुवाद के प्रकार-** विषय के आधार पर अनुवाद के कई भेद किये जा सकते हैं-

(क) ललित साहित्य का अनुवाद,

(ख) धार्मिक-पौराणिक साहित्य का अनुवाद,

(ग) साहित्यिक साहित्य का अनुवाद,

(घ) गणित का अनुवाद,

(च) प्रशासनिक साहित्य का अनुवाद,

(छ) अभिलेखों, गजेटियरों आदि का अनुवाद,

(ज) पत्रकारिता से संबंधित विषयों का अनुवाद,

(झ) समाजशास्त्रीय विषयों का अनुवाद,

(ट) काव्यशास्त्र एवं भाषा-वैज्ञानिक विषयों से संबंधित अनुवाद।

(7) **अनुवाद प्रकृति के आधार पर अनुवाद के प्रकार-** अनुवाद-प्रकृति के आधार पर भी कई भेद-प्रभेद किये जा सकते हैं-

(क) **शब्दानुवाद-** शब्दानुवाद शब्द का प्रयोग यहाँ Verbal तथा literal translation के मिले-जुले अर्थ में किया जाता रहा है। प्राय: शब्दानुवाद तथा शब्दश: अनुवाद को एक मानने की भूल हो जाती है। स्थूल रूप से कहा जा सकता है कि-शब्दानुवाद में स्त्रोत-भाषा के हर शब्द पर अनुवादक को ध्यान रखना पड़ता है एवं शब्दश: अनुवाद में शब्द के स्तर पर क्रमबद्ध अनुवाद की तरफ ध्यान दिया जाता है। शब्दानुवाद का अभिप्राय यह नहीं है कि स्त्रोत-भाषा की वाक्य-व्यंजना के ढंग से लक्ष्य-भाषा की वाक्य-व्यंजना की जाए। 'Will he go' का अनुवाद 'करेगा वह आना' वस्तुत: कोई अनुवाद नहीं हुआ। वरन् शब्दानुवाद से अभिप्राय यह किया जाना चाहिए कि मूलपाठ में कही गई प्रत्येक बात को लक्ष्य-भाषा में ढंग से अन्तरित किया जाए। गणित विधि जैसे विषयों में ऐसा अनुवाद जरूरी होता है, क्योंकि वहाँ 'कुछ भी छूट जाने' अथवा कुछ भी जोड़ दिये जाने से, भयंकर भूलें हो जाने की सम्भावना रहती है। शब्दानुवाद करते समय सर्वाधिक सावधानी इस बात की रखनी पड़ती है कि भाषा में बोधगम्यता, सम्प्रेषणीयता तथा प्रवाह रहे। पत्र-पत्रिकाओं आदि में अंग्रेजी के हिन्दी अनुवाद करते समय कई बार इस तरह की गलतियाँ रह जाती हैं एवं भाषा हास्यास्पद भी लगने लगती है।

शब्दानुवाद घातक इस अर्थ में होता है कि स्त्रोत-भाषा की सूक्ष्मातिसूक्ष्म अर्थध्वनियों तथा भाव की विशिष्ट भंगिमाओं को पकड़ने में अनुवादक प्राय: असमर्थ रह जाता है। अत: स्त्रोत-भाषा का मूलार्थ अपनी अनुगूँज में लक्ष्य-भाषा में गड़बड़ा जाता है। ऐसी स्थिति में अगर कोई व्यंजना-प्रधान सामग्री का अनुवाद करता है तो शब्दानुवाद से काम नहीं चलता। शब्दानुवाद करते समय अनुवादक लक्ष्यार्थ तथा व्यंग्यार्थ के स्तरों को नहीं पकड़ पाता। ऐसा अनुवाद अर्थविहीन हो जाता है; जैसे-He prefers dying to living का अनुवाद 'वह जिन्दगी से मृत्यु को वरीयता देता है' बड़ा ही अटपटा एवं बेढ़ंगा लगता है क्योंकि कहना चाहिए था : 'वह जीने के बजाय मरना बेहतर समझता है।'

(ख) **भावानुवाद-** भावानुवाद में अनुवादक का ध्यान भाव, विचार एवं अर्थ पर ज्यादा रहता है एवं वह पूरी शक्ति से उसी को लक्ष्य-भाषा में अन्तरित करने का प्रयत्न करता है। भाषा के पद तथा वाक्यों पर ज्यादा ध्यान न देने से यह अर्थ-विज्ञान के ज्यादा निकट है। अनुवादक स्त्रोत-भाषा पाठ-सामग्री के सम्पूर्ण अर्थ को लाने का प्रयत्न करता है अत: इसमें स्त्रोत भाषा की आत्मा प्राय: सुरक्षित रहती है। सूक्ष्म अर्थच्छायाओं वाली स्त्रोत-भाषा की सामग्री का लक्ष्य-भाषा में अनुवाद इस अर्थ में हितकारी सिद्ध होता है कि अनुवादक अर्थ की एक सूक्ष्म पकड़ को बिखराव में नष्ट नहीं होने देते। भावानुवाद कई तरह का होता है। कभी-कभार ऐसा भी होता है कि स्त्रोत-भाषा की पाठ-सामग्री का शब्दानुवाद बेहद जटिल प्रक्रिया में फँसा होता है, तो ऐसी स्थिति में भावानुवाद करना पड़ता है। यहाँ भावानुवाद ही करना बेहतर होता है। भावानुवाद में स्त्रोत-भाषा की शारीरिक योजना खत्म हो जाने से अनुवाद मुक्त दिखाई देता है तथा शाब्दिक यान्त्रिकता से मुक्त हो जाने से अनुवाद अपनी सृजनात्मकता की सहज शक्ति से काम लेता है। इस तरह भावानुवाद एक सीमा तक सृजनात्मकता के ज्यादा निकट है। मूल के शब्दश: अनुवाद पर आधारित न होने से यह अनुवादक की मौलिकता का क्षेत्र भी है तथा इस मौलिकता से मौलिक रचना की तरह का रचनात्मक आनन्द पाठक को प्राप्त होता है। कई बार तो अनुवादक भावानुवाद में इतना क्षमता सम्पन्न होता है कि पाठक यह भूल जाता है कि वह अनुवाद को पढ़ रहा है अथवा मूल को।

विद्वान लोग भावानुवाद का यह दोष मानते हैं कि उसमें मूल लेखक का व्यक्तित्व रह जाता है तथा अनुवादक अपनी भाव-सम्पदा, विचार-सम्पदा एवं शैली से पाठक को आक्रान्त कर लेता है। इस कथन पर गहराई से विचार करते ही यह बात निकलती है कि यह बहुत असंगत तर्क है क्योंकि भावानुवाद में कई तरह की उलझनों से मुक्ति मिलती है एवं वह दूसरी भाषा के महत्वपूर्ण विचारों तथा अभिव्यंजनाओं को अपनी भाषा में लाता है। साहित्य के अनुवाद की यही इस दृष्टि से सर्वाधिक उपयोगी पद्धति है।

(ग) **छायानुवाद-** छायानुवाद में अनुवादक मूलपाठ की छाया-अर्थच्छाया को अनुवाद में डालता है। 'छाया' संस्कृत का बहुत पुराना शब्द है एवं इसका प्रयोग नाटकों में यत्र-तत्र दृष्टिगत होता है। संस्कृत पाठ की छाया जब हिन्दी पाठ पर दृष्टिगत होती है तो उसे छायानुवाद कहा जाता है; जैसे अवन्ति वर्मा का यह श्लोक देखिए-

दु:सहतापभयादिव सम्प्रित मध्यस्थिते दिवसानके।
छायामिव वाछन्ती छायापि गता तरूलतानि॥

-शार्ङ्ग 3835

इसका छायानुवाद बिहारी के दोहे में निम्न प्रकार मिलता है-

'बैठि रही अतिसघन वन पैठि सदन तन माँह।
निरखि दुपहरी जेठ की छाहो चाहति छाँह॥'

विदेशी कृतियों की प्रविधि तथा छाया को लेकर जो रचनाएँ की जाती हैं उनमें भी एक तरह का छायानुवाद रहता है; जैसे-अज्ञेयजी के 'नदी के द्वीप' पर डी.एच.लारेन्स के Lady Chattergis's Lover की धुँधली छाया दृष्टिगत होती है। रांगेय राघव के उपन्यास पर 'Uncle Tom's cabin' की छाया, भगवतीचरण वर्मा के उपन्यास 'चित्रलेखा' पर 'ताइस' की छाया अथवा प्रेमचन्द के 'रंगभूमि' पर थैकरे के 'Vanity Fair' की छाया। कभी-कभार लेखक विशेष की कुछ पंक्तियों पर देशी-विदेशी लेखक की छाया दृष्टिगत होती है। पन्तजी की पंक्ति है-'सिखा दो ना हे मधुपकुमारि मुझे भी अपने मीठे गान' (Teach me half of the gladness that they brains must know)।

(घ) **रूपान्तरण-** (Adaptation)- जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है कि अनुवादक इसमें कृति का रूप बदलता है। अत: रूपान्तरकार स्त्रोत-भाषा के पाठ को अपनी आवश्यकतानुसार बदलते हुए लक्ष्य-भाषा में पेश करता है। मूल सामग्री की विधा का परिवर्तन प्राय: इसमें होता है। उपन्यास अथवा कहानी को नाटक में बदल दिया जाता है। सुविधा के अनुसार पात्र तथा काल-योजना में भी हेर-फेर हो सकता है। शेक्सपियर के प्रसिद्ध नाटक Othello का हिन्दी में उपन्यासपरक रूपान्तर शत्रुघ्नलाल शुक्ल ने किया। यह रूपान्तर एक ही भाषा में विधागत परिवर्तन के रूप में हो सकता है। शेक्सपियर के नाटकों को चार्ली लैम्ब ने 'Tales from Shakespeare' में कहानियों के रूप में रूपान्तरित किया है। उसी तरह विभिन्न कविताओं-उपन्यासों आदि के नाट्य रूपान्तर होते हैं, जैसे-विष्णु प्रभाकर द्वारा प्रेमचन्द के 'गोदान' उपन्यास का 'होरी' रूप में नाट्य रूपान्तर अथवा मुक्तिबोध की लम्बी कविता 'अँधेरे में' का नाट्य रूपान्तर है। रूपान्तर बहुत प्रसिद्ध इसलिए भी हुआ है कि उसमें शब्द-विधान को दृश्य-रूप में, दृश्य को शब्द अथवा पाठ्य-विधा रूप में पेश किया जाता है।

(ड) **सारानुवाद** (Summary translation)- लम्बे भाषणों, राजनीतिक वार्ताओं आदि में दुभाषिये इस तरह की अनुवाद-पद्धति का ही सहारा लेते हैं। क्योंकि उसमें स्त्रोत-भाषा की सामग्री का लक्ष्य-भाषा में सारांश पेश किया जाता है। इसमें जरूरत इस बात के चयन की होती है कि जो बातें स्त्रोत-भाषा में कही गई हैं उनका मुख्यार्थ पेश किया जाये। संसद आदि के भाषणें का अनुवाद इसी कोटि में आता है।

(र) **भाषा या टीकापरक अनुवाद-** अनुवाद की यह आचार्य पद्धति कही जानी चाहिए। क्योंकि इसमें स्त्रोत-भाषा के मूल की व्याख्या के साथ अनुवाद भी किया जाता है। विषय विशेष के विद्वान का जैसा वैदुष्य होता है यह भाष्य अथवा टीका इसी कोटि की होती है। क्योंकि इसमें कथ्य के स्पष्टीकरण हेतु भाष्यकार अपनी तरह से उद्धरण, उदाहरण एवं प्रमाण जोड़ सकता है। भाष्यकार कोरा अनुवादक नहीं होता, वह अपने व्यक्तित्व की महत्ता को अर्जित ज्ञान के माध्यम से उस पर स्थापित करता है; जैसे-आचार्य विश्वेश्वर की 'हिन्दी अभिनव भारती', 'हिन्दी ध्वन्यालोकलोचन' आदि की वैदुष्यपूर्ण व्याख्याएँ अथवा संस्कृत की काव्यशास्त्रीय रचना 'साहित्य-दर्पण' पर डॉ. सत्यव्रत सिंह की व्याख्या। गीता पर बाल गंगाधर तिलक का 'गीता-भाष्य'।

भारतीय साहित्य में इस तरह के भाष्य एवं टीकाओं की अपार परम्परा रही है। वेदों तथा उपनिषदों के अनेकानेक भाष्य इसी मनीषी परम्परा ने किए हैं। आज भी गीता, उपनिषद, रामायण, वेद आदि के नये से नये भाष्य किये जा रहे हैं तथा परम्परा खत्म नहीं हुई है।

(ल) **आशु अनुवाद-** आज विश्व-भर में आशु अनुवाद सांस्कृतिक आदान-प्रदान की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण बन गया है। क्योंकि जब अलग-अलग देशों के दो व्यक्ति भिन्न-भिन्न भाषाओं में बातचीत करते हैं तो उन दोनों की बातचीत को सम्प्रेषित करने हेतु अनुवादक दुभाषिये का काम करता है। आशु अनुवादक का भाषा-ज्ञान गहन तथा बहुत प्रामाणिक होना चाहिए। तमाम महत्वपूर्ण भाषाओं, वार्ताओं, अनुबन्धों आदि का अनुवाद उसे कोश अथवा सन्दर्भ ग्रन्थों की मदद के बगैर आमने-सामने करना पड़ता है। इस दृष्टि से भाषा ही नहीं, उसे दोनों देशों के इतिहास तथा संस्कृति एवं समाज से गहरा परिचय होना चाहिए। ताकि वह ऐसी भूल न करे, जिसके परिणाम भयंकर हों। इस तरह के अनुवाद का एक विशिष्ट सांस्कृतिक सन्दर्भ है, यह नहीं भूलना चाहिए एवं आज की प्रतियोगितापरक दुनिया में आशु अनुवादकों की दिन-प्रतिदिन जरूरत भी बढ़ रही है। युद्ध हो अथवा शान्ति, आशु अनुवादक के बगैर काम नहीं चलता। किसी भी देश के प्रधानमंत्री अथवा विदेश मंत्री के कथ्य को सम्प्रेषित करने का आज यही महत्वपूर्ण साधन है।

संक्षेप में, कहा जा सकता है कि आज विश्व-भर में अनुवाद के कई प्रभेद प्रचलित हैं।

कार्यालयी हिन्दी तथा अनुवाद

कार्यालयी हिन्दी का तात्पर्य उस हिन्दी से है जो विभिन्न कार्यालयों के कार्यों में प्रयुक्त की जाती है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 343(1) के अन्तर्गत हिन्दी को देवनागरी लिपि में राजभाषा के रूप में स्वीकार किया गया। राजभाषा के रूप में स्वीकृत होने के बाद यह जरूरी हो गया कि हिन्दी को राजकार्य में सक्षम बनाया जाये एवं निर्वतमान प्रशासनिक अंग्रेजी भाषा का स्थान प्राप्त हो, जिससे समस्त संवैधानिक एवं असंवैधानिक कार्य हिन्दी में सम्पन्न हो सकें। इस प्रक्रिया को अतिशीघ्र कार्यरूप देने के लिए राष्ट्रपति के विभिन्न आदेश (1955, 1960 में) राजभाषा आयोग (1955) एवं संसदीय समिति तथा विविध राजभाषा अधिनियम 1963, 1967 तथा 1976 के लागू होने के कारण सरकारी प्रशासनिक कामकाज द्विभाषिक रूप में होने लगा, फलतः कार्यालयी हिन्दी-अनुवाद की गति तीव्र हो गई।

कार्यालयी अनुवाद का तात्पर्य

कार्यालयी अनुवाद का अभिप्राय उस अनुवाद से है जो विभिन्न तरह के कार्यालयों में अंग्रेजी से हिन्दी में किया जाता है अर्थात् कार्यालय से सम्बद्ध हिन्दी में किया गया अनुवाद ही कार्यालयी अनुवाद है। कार्यालयी अनुवाद के अन्तर्गत प्रशासनिक कार्यालयों से सम्बद्ध अनुवाद, बैंकों से सम्बद्ध अनुवाद, न्यायालय से सम्बद्ध अनुवाद, रेलवे से सम्बद्ध अनुवाद, होटलों से सम्बद्ध अनुवाद, डाक-तार से सम्बद्ध अनुवाद तथा बीमा से सम्बद्ध अनुवाद एवं अन्य अनेक प्रकार के अनुवाद आते हैं। कार्यालयी अनुवाद को दो वर्गों में विभाजित किया गया है-

(1) **सांविधिक अनुवाद-** सांविधिक अनुवाद की प्रकृति स्थायी होती है। इसके अन्तर्गत संविधान, अधिनियम, अध्यादेश, विधेयक, सांविधिक नियमावलियों तथा उनके अन्तर्गत बनाए गए पत्रों आदि का हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद होता है।

(2) **असांविधिक अनुवाद-** असांविधिक अनुवाद के अन्तर्गत विधितर स्थायी सामग्री, सहिताएँ, मैनुअल या नियम पुस्तकों का समावेश होता है। इस तरह के अनुवाद को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है -

(i) **गैर-तकनीकी सामग्री-** गैर-तकनीकी सामग्री के अन्तर्गत नियमावलियाँ, फार्म, प्रपत्रों, रजिस्टर एवं मसौदा टिप्पणी का समावेश होता है।

(ii) **तकनीकी सामग्री-** तकनीकी सामग्री के अन्तर्गत मैनुअल, नियम- पुस्तिकाएँ, रक्षा पेट्रोलियम, रसायन, कृषि, विधि, ऊर्जा, वाणिज्य, रेल मंत्रालय आदि समस्त मंत्रालयों एवं विभागों की पारिभाषिक शब्दावली आती है।

(iii) **अस्थायी महत्त्व की सामग्री-** स्थायी प्रकृति की सामग्री, संकल्पों, सामान्य आदेशों अधिसूचनाओं, प्रशासनिक रिपोर्ट, प्रेस विज्ञप्तियाँ एवं संसद के एक या दोनों सदनों के समक्ष पेश की जाने वाली सभी सामग्री का इसमें समावेश होता है।

कार्यालयी अनुवाद की कुछ अपनी विशेषतायें हैं जो निम्नांकित हैं-

(1) सर्वप्रथम, कार्यालयी अनुवाद के लिए प्राप्त सामग्री मूलतः अभिधाप्रधान होती है। नाटक, कविता, आदि सृजनात्मक साहित्य के सदृश लक्षण तथा व्यंजना का अनुवाद में कोई प्रयोग नहीं होता।

(2) द्वितीय, कार्यालयी अनुवाद में अधिकाशतः पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग होता है जो प्रत्येक विषय के अलग-अलग होते हैं। किन्हीं दो विषयों के पारिभाषिक शब्दों में समानता बहुत कम मिलती है।

(3) कार्यालयी भाषा के पारिभाषिक शब्द हिन्दी में कई स्रोतों से आये हैं, कुछ हिन्दी के मध्य काल के है तो कुछ अरबी-फारसी के जैसे- सुलहनामा, खारिज, दाखला आदि; कुछ आधुनिक काल की अंग्रेजी की देन हैं जैसे- जज, बैंक, चैक आदि तो कुछ शब्द आधुनिक काल में संस्कृत शब्दों, उपसर्गों व प्रत्ययों आदि से बनाये गये हैं जैसे निवेश, परिबद्ध, क्षतिपूर्ति आदि। कुछ शब्द सामान्य जनता की देन हैं तो कुछ मिश्रित शब्द भी कार्यालयी हिन्दी भाषा में सम्मिलित हैं। यह अनुवादक की योग्यता पर निर्भर करता है कि वह अनुवाद के लिए किन शब्दों का चुनाव करे। असंगत तथा अनुचित शब्दों का प्रयोग अनुवाद को हास्यास्पद एवं अटपटा-सा बना सकते हैं।

(4) सभी अनुवादों की भांति कार्यालयी अनुवाद में भी हिन्दी की प्रकृति के अनुरूप हिन्दी अनुवाद करते हुये विषय को संक्षिप्त अथवा विकृत किया जा सकता है।

(5) कार्यालयी अनुवाद करते समय ध्यान रहना चाहिये कि किसी भी विषय का शब्दश: अनुवाद नहीं करना चाहिए वरन् एक हिन्दी वाक्य को पढ़कर एवं समझकर मुक्त अनुवाद करना अपेक्षित है।

(6) कार्यालयी भाषा सदैव एकार्थी होनी चाहिए, एकाधिकार्थी नहीं। अर्थात् वाक्यों के एक से अधिक अर्थ नहीं होने चाहिए। ऐसा होने पर वाक्यों के अर्थ में भ्रम की उत्पत्ति हो सकती है।

(7) कार्यालयों में एक विशेष प्रकार का पत्र सूचना प्राप्ति हेतु प्राप्त होता है जिसे कार्यालय ज्ञापन कहते हैं। यह अन्य पुरुष में होता है। इसमें प्राय: अंग्रेजी शब्द के बदले अधोहस्ताक्षरित शब्द का अनुवाद में प्रयोग करके 'अधोहस्ताक्षरी को यह कहने का निर्देश हुआ है कि वह अमुक कार्यालय में अमुक संख्यक ज्ञापन के संदर्भ में यह सूचित करे कि ......, आदि अनुवाद करते हैं। इसका सीधे-सादे शब्दों ...... में कार्यालय का ...... संख्यक ज्ञापन अथवा कार्यालय ज्ञापन मिला। उसके सम्बन्ध में यह सूचित किया जा रहा है ...... रूप में अनुवाद हिन्दी की प्रकृति के अनुकूल है।'

कार्यालयी अनुवाद अथवा सूचना प्रधान साहित्य : समस्याएँ एवं समाधान

कार्यालयी अनुवाद का कार्य इतना सरल तथा सहज नहीं है, अनुवाद करते समय कई समस्याएँ सामने आती हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व अंग्रेजों के शासन काल में सभी कार्यालयों के कामकाज में अंग्रेजी भाषा का ही प्रयोग होता था। 15 अगस्त 1947 के पश्चात् 26 जनवरी 1950 में अपने देश का संविधान निर्मित हुआ, फलस्वरूप 14 सितम्बर 1949 को केन्द्रीय राजभाषा के रूप में देवनागरी लिपि में खड़ी बोली हिन्दी को स्वीकार किया गया। इस स्वीकृति के बाद केन्द्रीय प्रशासन के विभिन्न मंत्रालयों, निगमों, विभागों, कार्यालयों में अंग्रेजी के साथ-साथ हिन्दी भाषा को भी काम-काजी बनाने के प्रयास शुरू किये गये। हिन्दी भाषा को काम-काजी भाषा बनाने के प्रयत्न राष्ट्रपति के आदेशों, राजभाषा आयोग की सिफारिशों तथा विभिन्न अधिनियमों के अन्तर्गत किए जा रहे हैं। पारिभाषिक शब्दावली इस प्रक्रिया का अत्यधिक महत्त्वपूर्ण स्रोत है क्योंकि प्रत्येक तकनीकी क्षेत्र, औद्योगिक इकाई एवं वैज्ञानिक शोध तथा अनुसंधान आदि की अपनी-अपनी विशिष्ट पारिभाषिक शब्दावलियाँ होती हैं जिनका स्वाभाविक रूप अंग्रेजी में है, हिन्दी में अनुवाद किया जाता है। विभिन्न क्षेत्रों में इन शब्दों का किसी एक विशिष्ट नियम के अनुसार अनुवाद कार्य सम्पन्न नहीं होता वरन् विभिन्न क्षेत्रों की पारिभाषिक शब्दावली परस्पर भिन्न तथा स्वतंत्र अनुवाद की अपेक्षा रखती है। अर्थात् एक शब्द का एक भाषा में एक अर्थ मिलता है तो दूसरी भाषा में उसका दूसरा अर्थ देखने को मिलता है एवं किसी अन्य भाषा में यदि उसी शब्द को ढूँढें तो वहाँ उसका भिन्न अर्थ मिलेगा। उदाहरणार्थ- विधि का Bill शब्द यदि वसीयत का द्योतक है तो वाणिज्य की दुनिया का Bill किसी

खरीदी हुई, वस्तु के कुल दाम का अर्थ रखता है। संसद की भाषा में यही Bill विधेयक का वाचक बन जाता है। यह अनुवादक के ऊपर निर्भर करता है कि वह किस संदर्भ में किस अर्थ का चयन करता है। किसी अनुवादक की थोड़ी-सी लापरवाही विषय के अर्थ का अनर्थ कर देती है। इन पारिभाषिक, शब्दावलियों के अनुवाद की अपनी-अपनी समस्याएँ हैं जिनके समाधान का प्रयास भी वैज्ञानिकों ने किया है।

पारिभाषिक शब्द की समस्याएँ

(i) अथक प्रयत्नों के बाद भी अंग्रेजी के सभी शब्दों के लिए हिन्दी में शब्दों का निर्माण नहीं हो सका जिससे अनुवादक को काफी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। उदाहरणार्थ, अंग्रेजी के Performance शब्द का समतुल्य शब्द आज तक हिन्दी में उपलब्ध नहीं हो सका। ऐसी परिस्थिति के समाधान के लिए अनुवादक को अंग्रेजी के उस पारिभाषिक शब्द को उसी रूप में हिन्दी में स्वीकृत कर लेना चाहिए।

(ii) कार्यालयी अनुवाद की एक समस्या यह भी है कि केन्द्र एवं विभिन्न प्रदेशों ने एक ही शब्द का प्रयोग अपने-अपने यहाँ विभिन्न अर्थों में किया है। केन्द्र में सैक्शन के लिए 'खण्ड' शब्द का प्रयोग किया जाता है।

(iii) पारिभाषिक शब्दों के अनुवाद की एक कठिनाई यह भी कि पारिभाषिक शब्दों के निर्माताओं ने नवनिर्मित पारिभाषिक शब्दों के लिए अंग्रेजी-हिन्दी के शब्दों को अस्वीकृत करके नए शब्दों का निर्माण किया है। ये नवनिर्मित शब्द अधिकांश: कृत्रिम तथा आरोपित होते है जिससे वे प्राय: दुरूह एवं कठिन हो जाते हैं।

(iv) कभी-कभी अंग्रेजी की शब्दावली में शब्द एकाधिक अर्थ के वाहक मिलते हैं। इनका अनुवाद करते समय अनुवादक को अपने विवेक, संदर्भ, सापेक्षता तथा अनुभव का उपयोग कर कठिनाई को हल करना चाहिए।

(v) **विभिन्न शब्द: एक पर्याय-** हिन्दी शब्दावली में अंग्रेजी के कई शब्दों के लिए मात्र एक ही शब्द निर्मित है जिससे कभी-कभी संदर्भ भेद से अर्थभेद होने का भय बना रहता है; जैसे- अंग्रेजी के end तथा conclusion अलग-अलग शब्द हैं जबकि हिन्दी में दोनों हेतु एक शब्द 'अंत' ही है।

इसी तरह कहीं-कहीं एक, अंग्रेजी पारिभाषिक शब्द के लिए कई हिन्दी पर्यायों का प्रयोग कर दिया जाता है; जैसे अंग्रेजी के रिपोर्ट शब्द के लिए हिन्दी के अनुवाद में प्रतिवेदन, आख्या एवं रिपोर्ट शब्दों का प्रयोग कर दिया जाता है।

(vi) **एक शब्द : विभिन्न अनुवाद-** एक ही शब्दार्थ के लिए विभिन्न प्रांतों तथा केन्द्र में पृथक-पृथक शब्दों का प्रयोग अनुवादक के संकट को गहरा करता है; जैसे अंग्रेजी के Grievance शब्द के लिए केन्द्र ने 'शिकायत' शब्द पर्याय के रूप में ग्रहण किया है तो बिहार में 'खुश' मध्य प्रदेश को 'दु:ख' से शिकायत नहीं है एवं उत्तरप्रदेश को इस पर्याय के लिए कोई 'खुश' नहीं है।

(vii) **संक्षेपों की समस्या-** शब्दों का संक्षिप्त स्वरूप भी अनुवादक को कठिनाई में डाल देता हे। जैसे- U.P.S.C., U.G.C. आदि शब्दों का संक्षिप्त रूप अंग्रेजी में बहुतायत मिलता है जबकि हिन्दी में अभी तक इस तरह का कोई तरीका नहीं ढूंढा जा सका।

इस तरह कार्यालयी अनुवाद कार्बन कॉपी से करने जैसा सरल अथवा सीधा कार्य नहीं है अपितु अनुवादक को यह कार्य सम्पन्न करने के लिए काफी परेशानियों का सामना करना पड़ता है। बड़ी सूझ-बूझ के साथ ही कार्यालयी अनुवाद के कार्य को सम्पन्न करना पड़ता है। छोटी-सी चूक ही अर्थ का अनर्थ कर देती है। देश के शासन तंत्र में द्विभाषिता की स्थिति होने के कारण कार्यालयी

अनुवाद का अपना एक विशेष स्थान है अत: इसकी प्रक्रिया के उन्नयन की तरफ ध्यान देना अति आवश्यक है।

कार्यालयी पत्रों के अनुवाद

कार्यालयों से हमारा तात्पर्य केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों से है। भारत सरकार की वर्तमान राजभाषा नीति के अनुसार इस समय केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों में द्विभाषिक प्रणाली का प्रचलन है। इस पद्धति के अनुसार आज कार्यालयों में हिन्दी तथा अंग्रेजी दोनों भाषाओं के माध्यम से सरकारी कार्य निष्पादन किया जा सकता है। पर वास्तविक स्थिति यह है कि ज्यादातर कार्य अंग्रेजी के माध्यम से ही किया जाता है एवं हिन्दी में जो कार्य किया जाता है वह प्राय: अंग्रेजी के मूलपाठ का हिन्दी में अनुवाद होता है। इस अनुवाद की भाषा एक ओर तो सहज तथा स्वाभाविक हिन्दी से कुछ भिन्न तरह की होती है एवं दूसरे उसकी अपनी कुछ विशेषताएँ भी होती हैं। इस अनुवाद-कार्य का क्या महत्व है तथा इसकी क्या विशिष्टता है? इसका विवेचन एवं विश्लेषण ही इस लेख का उद्देश्य है।

कार्यालयी अनुवाद के महत्व को विश्लेषित करने से पहले हमें यह देखना होगा कि किन तत्वों से प्रेरित होकर तथा किन निर्देशों से नियंत्रित होने से द्विभाषिक स्थिति का प्रादुर्भाव हुआ है। कार्यालयीन कार्य में मौलिक हिन्दी का प्रचलन होने के मार्ग में कौन-कौन सी वर्जनाएँ थीं तथा वे आधारभूत स्तम्भ क्या थे? जिन पर धीरे-धीरे अनुवाद के भवन का निर्माण हुआ है तथा अब भी हो रहा है। हमें इस तथ्य के मूल में पहुँचने हेतु भारतीय संविधान एवं उसमें विहित व्यवस्थाओं के अन्तर्गत जारी किये गये निर्देशों का अवलोकन तथा विश्लेषण करना होगा।

1950 में स्वीकृत भारतीय संविधान के अनुच्छेद 343 के अनुसार देवनागरी लिपि में लिखित हिन्दी को संघ सरकार की राजभाषा घोषित किया गया है। इसी अनुच्छेद के उपखण्ड 2 के अनुसार 15 वर्षों तक अंग्रेजी के चलते रहने की व्यवस्था की गई थी, पर इस कालावधि में भी राष्ट्रपति आदेश द्वारा संघ के राजकीय प्रयोजनों हेतु हिन्दी के प्रयोग की अनुमति दे सकते थे। इस अनुच्छेद के उपखण्ड 3 के अनुसार यह व्यवस्था की गई थी कि संसद विधि द्वारा 15 वर्ष की कालावधि के बाद भी ऐसे प्रयोजनों हेतु अंग्रेजी भाषा के प्रयोग को जारी रखने की व्यवस्था कर सकेगी जिनका उस विधि में उल्लेख किया जाये। संविधान की इसी व्यवस्था के अनुसार 1963 में संसद ने राजभाषा अधिनियम पारित किया जिसमें यह उपबन्ध किया गया कि 26 जनवरी, 1965 के बाद भी संघ के समस्त राजकीय प्रयोजनों हेतु एवं संसद से संबंधित सभी कार्यों के लिए अंग्रेजी का वैसे ही प्रयोग होता रहेगा जैसा कि इससे पूर्व होता जा रहा था। हालांकि इस अधिनियम द्वारा हिन्दी का प्रयोग बढ़ाने की भी व्यवस्था की गई पर इसका सबसे महत्वपूर्ण परिणाम यह हुआ कि इससे अनिश्चित काल तक के लिये केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों में द्विभाषिकता की स्थिति का श्रीगणेश हुआ। इस अधिनियम की धारा 3(5) के अनुसार यह स्थिति तब तक चलती रहेगी जब तक अंग्रेजी भाषा का प्रयोग खत्म करने हेतु ऐसे सभी राज्यों के विधान-मण्डलों द्वारा जिन्होंने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, संकल्प पारित नहीं कर दिये जाते तथा जब तक उपर्युक्त संकल्पों पर विचार कर लेने के बाद इसकी समाप्ति हेतु संसद के हर सदन द्वारा संकल्प पारित नहीं कर दिया जाता। भारत की वर्तमान स्थिति को देखते हुये यह पूर्णतया स्पष्ट है कि ऐसा अवसर आने में बहुत समय लगेगा। परिणामस्वरूप दीर्घकाल तक द्विभाषिक स्थिति के चलते रहने की सम्भावना है। इसका प्रतिफल यह होगा कि केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों में अनिश्चित काल तक अनुवाद का कार्य चलता रहेगा। इसी से हम अनुवाद कार्य के महत्व का अनुमान लगा सकते हैं।

समस्त सरकारी कार्य कुछ नियमों, विनियमों तथा निर्धारित पद्धतियों के अनुसार होता है। सरकारी कार्यालयों में अंग्रेजी में पत्र-व्यवहार करने एवं सरकारी मन्तव्यों को प्रकट करने की परिपाटियाँ तथा रूढ़ियाँ स्थापित हो चुकी हैं क्योंकि इसका प्रयोग वर्षों से होता रहा है। हमारे संविधान तथा 1963 के अधिनियम के द्वारा कई कार्यों तथा प्रसंगों में न सिर्फ हिन्दी का प्रयोग करने की व्यवस्था की गई है वरन् कुछ परिस्थितियों में अकेले अथवा द्विभाषिक रूप में हिन्दी का प्रयोग करना अनिवार्य भी बना दिया गया है। ऐसी स्थिति में हिन्दी का प्रयोग भले ही किया जाए पर उसकी पद्धति तथा शैली वही होगी जो अंग्रेजी में प्रचलित रही है। स्पष्ट है कि इन परिस्थितियों में मौलिक हिन्दी का प्रयोग न होकर वह अंग्रेजी का अनुकरण पात्र होगा....शैली के रूप में एवं भाषा के रूप में। ऐसा इसलिए होगा क्योंकि पत्राचार की परम्परा को पूर्ववत् बनाये रखने हेतु प्रायः सभी मंत्रालयों के मैनुअलों (नियम पुस्तिकाओं), कोडों (संहिताओं) तथा फार्मों (प्रपत्रों) का अनुवाद हिन्दी में किया जा चुका है। इसलिए जो सरकारी कर्मचारी हिन्दी में कार्य करते हैं वे इसी अनूदित भाषा तथा शैली का आश्रय लेते हैं। जहाँ मौलिक प्रारूप हिन्दी में बनाये जाते हैं वहाँ भी उसी अनूदित भाषा एवं शैली का सहारा लिया जाता है। वास्तविक स्थिति तो यह है कि अभी ज्यादातर प्रारूप मूलतः अंग्रेजी में तैयार किये जाते हैं, निर्देशों के अनुसार जारी किये जाने से पूर्व उनका हिन्दी अनुवाद कराया जाता है।

अब हमें इस बात पर विचार करना है कि कहाँ-कहाँ तथा किन-किन परिस्थितियों में हिन्दी में कार्य करना जरूरी एवं अनिवार्य है। इसी विश्लेषण ये यह भी ज्ञात हो सकेगा कि कार्यालयों में अनुवाद का क्या महत्व है?

केन्द्रीय कार्यालयों में हिन्दी के प्रयोग के संबंध में राष्ट्रपति के 1955 तथा 1960 के आदेशों एवं संशोधित राजभाषा अधिनियम, 1963 और राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग) नियम, 1976 में की गई व्यवस्थाओं एवं गृह-मंत्रालय तथा राजभाषा विभाग द्वारा समय-समय पर जारी किये गये अनुदेशों के अनुसार कई कार्यों में हिन्दी का प्रयोग किया जाता है। इनमें से सबसे महत्वपूर्ण व्यवस्था यथासंशोधित अधिनियम, 1963 की धारा 3(3) में की गई है जिसके अनुसार 14 तरह के प्रलेखों को द्विभाषिक रूप में जारी किया जाना अनिवार्य है। इसकी पुनरावृत्ति राजभाषा नियम, 1976 की धारा 6 में की गई है। इसके अन्तर्गत आने वाले प्रलेखों का विवरण निम्न तरह है-

(1) संकल्प, (2) सामान्य आदेश, (3) नियम, (4) अधिसूचनाएँ, (5) प्रशासनिक एवं अन्य रिपोर्ट, (6) प्रेस विज्ञप्तियाँ, (7) संसद के किसी सदन अथवा सदनों में रखी जाने वाली प्रशासनिक रिपोर्ट, (8) सरकारी कागज-पत्र, (9) संविदाएँ, (10) करार, (11) अनुज्ञप्तियाँ, (12) अनुज्ञा-पत्र, (13) टेण्डर नोटिस, (14) टेण्डर फार्म।

राजभाषा अधिनियम की धारा 3(1) में यह व्यवस्था की गई है कि अगर कोई हिन्दी भाषी राज्य किसी अहिन्दी भाषी राज्य को हिन्दी में पत्र भेजेगा तो उसके साथ उसका अंग्रेजी अनुवाद भी भेजना होगा। इसके अलावा धारा 3(2) के अनुसार केन्द्रीय सरकार के मन्त्रालयों, विभागों, निगमों, कम्पनियों, उपक्रमों आदि में परस्पर पत्राचार करते समय तब तक हिन्दी के पत्रों का अंग्रेजी अनुवाद अथवा अंग्रेजी के पत्रों का हिन्दी अनुवाद देना होगा जब तक संबंधित मंत्रालय, विभाग, कार्यालय, निगम अथवा कम्पनी के कर्मचारी हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त नहीं कर लेते। हालांकि उपधारा 3(1) और 3(2) का कड़ाई से पालन नहीं किया गया है, फिर भी इसके अन्तर्गत जारी किये जाने वाले पत्रों का अनुवाद दिये जाने की व्यवस्था बनी हुई है। राजभाषा नियम 1976 की धारा 8 के अनुसार हर सरकारी कर्मचारी को अपना सम्पूर्ण कार्य हिन्दी में करने की छूट दी गई है। पर ऐसी स्थिति में अगर दूसरे अधिकारियों को हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान नहीं है तथा हिन्दी में लिखी गई

विषयवस्तु उनके लिए बोधगम्य नहीं है, तो कार्यालय को ऐसी सामग्री के अनुवाद की व्यवस्था करनी होगी। इसके अलावा अन्तर्विभागीय तथा विभागीय बैठकों की कार्यसूची, टिप्पणियाँ एवं कार्यवृत्त दोनों भाषाओं में जारी किये जायेंगे। इतना ही नहीं हर कार्यालय का समस्त प्रक्रिया-साहित्य जो अंग्रेजी में तैयार किया जाता है उसे द्विभाषिक रूप में निर्मित, प्रकाशित तथा प्रचारित किया जायेगा। इसके अतिरिक्त समस्त विज्ञापनों को हिन्दी-भाषी क्षेत्रों में हिन्दी में एवं अहिन्दी भाषी-क्षेत्रों में द्विभाषिक रूप में प्रचारित किया जायेगा। अन्तर्राष्ट्रीय सन्धियाँ तथा करार भी द्विभाषिक रूप में तैयार किये जायेंगे। इससे स्पष्ट है कि वर्तमान परिस्थिति में सरकारी कार्यालयों में हिन्दी के अनुवाद की परिधि कितनी विस्तृत है ? ऐसी व्यवस्था करना न सिर्फ आवश्यक था वरन् समीचीन भी, क्योंकि राजभाषा होने के नाते महत्वपूर्ण प्रसंगों में उसके प्रयोग से उसको वंचित नहीं किया जा सकता था। अंग्रेजी के चलते रहने पर भी उसे अपेक्षित महत्व देना ही होगा एवं यहीं पैदा होती है अनुवाद की आवश्यकता, क्योंकि जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि अब भी ज्यादातर कर्मचारी अपना कार्य अंग्रेजी में ही करने के अभ्यस्त हैं। राजभाषा नियम, 1976 के अनुसार निम्न कार्यों हेतु अनुवाद की व्यवस्था करना अत्यावश्यक या अनिवार्य है।

(1) केन्द्रीय सरकार के किसी कार्यालय से क्षेत्र 'क' अर्थात् बिहार, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश एवं संघ राज्यक्षेत्र दिल्ली तथा अण्डमान और निकोबार द्वीप समूह प्रशासन को या इनके किसी कार्यालय को या इनमें निवास करने वाले किसी व्यक्ति को अगर पत्र अंग्रेजी में भेजा जाता है तो उसके साथ उसका हिन्दी अनुवाद भेजना अनिवार्य होगा।

(2) केन्द्रीय सरकार के किसी कार्यालय से क्षेत्र 'ख' अर्थात् गुजरात, महाराष्ट्र तथा पंजाब राज्य एवं चंडीगढ संघ राज्य क्षेत्र के या इनके किसी कार्यालय को अगर कोई पत्र अंग्रेजी में भेजा जाता है तो उसके साथ उसका हिन्दी अनुवाद भी भेजा जायेगा।

(3) क्षेत्र 'ग' में (अर्थात् उपर्युक्त क तथा क्षेत्रों में स्थित राज्यों को छोड़कर अन्य राज्यों में) अगर हिन्दी में कोई पत्र भेजा जाता है तो उसके साथ उसका अंग्रेजी अनुवाद भी भेजा जायेगा।

(4) कहीं से भी हिन्दी में प्राप्त पत्र का उत्तर हिन्दी में भेजा जायेगा। अगर उसे मूल रूप में अंग्रेजी में तैयार किया जाता है तो उसका हिन्दी अनुवाद तैयार करके भेजना होगा।

(5) जैसा कि पहले कहा जा चुका है राजभाषा अधिनियम 1963 की धारा 3(3) जिसका समोवश राजभाषा नियम, 76 की धारा 6 में किया गया है, 14 तरह के प्रलेखों को अनिवार्यत: द्विभाषिक रूप से जारी किया जायेगा, अगर ये किसी एक भाषा में तैयार किये जाते हैं तो इनका दूसरी भाषा में अनुवाद तैयार करके इन्हें निर्गत किया जायेगा।

(6) राजभाषा नियम की धारा 8 के अनुसार, हर कर्मचारी को अपनी फाइल पर टिप्पणियाँ या मसौदा हिन्दी या अंग्रेजी में लिखने की छूट है, पर अगर किसी कर्मचारी को हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान नहीं है तो संबंधित कार्यालय को उसके अंग्रेजी अनुवाद की व्यवस्था करनी होगी। (लिखने वाले कर्मचारी पर उसका अनुवाद करने की बाध्यता नहीं होगी), इसके अलावा अगर कोई दस्तावेज विधिक या तकनीकी प्रकृति का है तो कार्यालय-प्रधान के आदेश पर उसका अनुवाद किया जायेगा।

(7) केन्द्रीय सरकार के सभी कार्यालयों से संबंधित मैनुअल, संहिताएँ तथा प्रक्रिया-संबंधी अन्य साहित्य एवं लेखन-सामग्री आदि की वस्तुएँ हिन्दी और अंग्रेजी में द्विभाषित रूप में मुद्रित अथवा साइक्लोस्टाइल कराई जायेंगी। इस व्यवस्था के कार्यान्वयन हेतु अनुवाद की नितान्त जरूरत पड़ेगी।

इस विवरण से स्पष्ट हो गया होगा कि केन्द्रीय कार्यालयों में अनुवाद कार्य का बड़ा महत्व है। कुछ कर्मचारियों ने हिन्दी में कार्य करना जरूर शुरू कर दिया है पर संप्रति हिन्दी संबंधी अधिकतर कार्य अनुवाद के सहारे ही किया जा रहा है।

अनुवाद का क्षेत्र स्पष्ट हो जाने पर हमें अनूदित भाषा की प्रकृति, उसके स्वरूप तथा उसमें नव-निर्मित शब्दावली के प्रयोग की स्थिति पर भी विचार करना होगा।

कार्यालयी साहित्य की विशिष्ट प्रकृति होती है। वह सामान्य भाषा से कुछ अंशों में भिन्न भी होती है क्योंकि वर्षों के प्रयोग के बाद कार्यालयी साहित्य की ऐसी शैली बन गई है कि उसका परित्याग नहीं किया जा सकता। इस शैली की छाया अनुवाद पर भी पड़ी है क्योंकि अनुवाद में तो स्त्रोत भाषा में लिखी गई सामग्री का ही प्रयोग किया जाता है। कार्यालयों में अर्ध-सरकारी पत्रों को प्रायः इस तरह शुरू किया जाता है-"Please refer to your D.D. letter no dated regarding."

'कृपया अपने दिनांक_के अर्ध सरकारी पत्र सं.____का अवलोकन करें जो____के संबंध में है।'

या

कृपया अपना अर्द्ध-सरकारी पत्र सं.____दिनांक____देखें जिसमें आपने____की बात कही है/का उल्लेख किया है।

हालांकि उपुर्यक्त अंग्रेजी के दो तरह के अनुवाद किये गये हैं पर इनमें से कोई भी स्वाभाविक हिन्दी के अनुरूप नहीं है। अगर यही बात आपको मूलत: हिन्दी में कहनी हो तो आप इस शैली का अनुकरण नहीं करेंगे। सहज हिन्दी में "अपने पत्र का अवलोकन करें इस पत्र को देखें" नहीं लिखा जाता। स्वाभाविक रूप में इस पत्र को इस तरह लिखा जाएगा। "आपका____तारीख का पत्र (सं.____) प्राप्त हुआ। इसमें आपने अमुक बातें लिखी हैं।"

इस छोटे से दृष्टान्त से यह स्पष्ट होता हे कि कार्यालयी अनुवाद करते समय अनुवादक को छूट लेने की स्वतन्त्रता नहीं है। उसे हर शब्द का अनुवाद करने की बाध्यता-सी प्रतीत होती है। इसका परिणाम यह होता है कि अनुवाद की भाषा कृत्रिम तथा अटपटी बन जाती है। ऐसे प्रसंगों में नवनिर्मित शब्दों के प्रयोग से उसमें और भी क्लिष्टता आ जाती है तथा कभी-कभी तो भाषा दुर्बोध एवं हास्यास्पद बन जाती है। यहाँ ऐसी भाषा के कुछ दृष्टान्त पेश किये जा रहे हैं।

(1) *उस दशा में जब चाबियों की अविनिमयशीलता ज्यादा संख्या में अपेक्षित हो तब आर्डर देते समय क्रेता द्वारा ऐसा विनिर्दिष्ट किया जायेगा।*

(2) *तेल की टंकी तुरन्त तथा सुरक्षात्मक प्ररूप से टंकी से दाबमोचन करने हेतु दाबमोचन पेंच से युक्त होगी।*

(3) *और इस तारीख से पूर्व तद्वीन प्रोद्भूत तथा उद्भूत समस्त अधिकार विशेषाधिकार, बाध्यताएँ एवं दायित्व____तारीख तक निलम्बित रहेंगे।*

(4) *काली चद्दर की बाल्टियाँ विर्निर्माण के बाद तप्त निमंजन से जस्तेदार की जायेंगी।*

इन उद्धरणों में एक ओर तो नये शब्दों का प्रयोग किया गया है एवं दूसरी ओर सहज शैली अपनाने की बजाय कृत्रिम शैली अपनाई गई है। परिणामस्वरूप भाषा कृत्रिम, अटपटी तथा अबोधगम्य बन गई है। ऐसी भाषा के प्रयोग का कारण यह है कि अनुवादक शब्दानुवाद की शैली का प्रयोग करता है या मक्षिका स्थाने-मक्षिका रखता है तथा उसे सहज बनाने का प्रयत्न नहीं करता। अगर वह किंचित मौलिक प्रतिभा का उपयोग करे तो भाषा निश्चय ही सहज तथा बोधगम्य बन जायेगी। उपर्युक्त दृष्टान्तों में से क्रम सं. 1 तथा 4 का सहज अनुवाद निम्न प्रकार किया जा सकता है-

(1) *जब ऐसी चाभियों की जरूरत हो जिन्हें बिल्कुल बदला न जा सके तो खरीद एवं आर्डर देते समय यह बात साफ-साफ कह दी जायेगी।*

(2) *काली चादर की बाल्टियों को बना लेने के पश्चात् उन्हें गर्म घोल में डालकर उन पर कलई की जायेगी।*

निम्न दृष्टान्तों द्वारा इसे और भी स्पष्ट किया जा सकता है-

(1) As in force for the time being	*कृत्रिम-तत्समय यथाप्रवृत्त।* *सहज-उस समय जैसा लागू हो।*
(2) As early as possible	*संस्कृत शैली-यथासम्भव शीघ्र।* *सहज-जितनी जल्दी सम्भव हो सके।*
(3) Unless the context otherwise reqires	*अटपटा- यदि सन्दर्भ से अन्यथा अपेक्षित हो।* *सहज-जब तक कि प्रसंग से दूसरी बात अपेक्षित न हो।*
(4) Sanction will be accorded when justification is submitted	*संस्कृतनिष्ठ-जब औचित्य प्रस्तुत किया जायेगा तो स्वीकृति प्रदान की जायेगी।* *सहज जब औचित्य दिया जायेगा तो मंजूरी दे दी जायेगी।*

कार्यालयी साहित्य का अनुवाद ललित साहित्य के अनुवाद से भिन्न होता है। यह लक्षणा तथा व्यंजना-प्रधान शैलियों की बजाय अभिधात्मक शैली में लिखा जाता है। इसलिए इसकी भाषा जितनी सरल तथा सपाट होगी उतनी ही ज्यादा बोधगम्य होगी। इसकी दूसरी विशेषता यह है कि यह सूचना-प्रधान होता है। काव्यात्मकता की बजाय इसमें सहजता को प्रधानता दी जाती है क्योंकि यह मुख्यतया प्रचार-साहित्य होता है। अगर उसे गूढ़ तथा अभिव्यजंनात्मक शैली में लिखा गया तो यह बोधगम्य नहीं हो पायेगा एवं अनेकार्थता का भी भ्रम हो सकता है, जबकि कार्यालयी साहित्य पूर्णतया एकार्थी होना चाहिए। जैसा कि ऊपर के दृष्टान्तों द्वारा दिखाया जा चुका है इसकी एक समस्या वाक्य-रचना से संबंधित होती है। वस्तुतः यह अंग्रेजी पाठ का हिन्दी रूपान्तरण होता है तथा अंग्रेजी एवं हिन्दी की वाक्य-रचना में बहुत अन्तर होता है क्योंकि दोनों भाषाओं की प्रकृति भिन्न होती है। ऐसी स्थिति में हालांकि छायानुवाद अथवा भावानुवाद का सहारा नहीं लिया जा सकता है पर शब्दानुवाद की पद्धति भी नहीं अपनाई जा सकती है। कार्यालयी साहित्य के अनुवाद वस्तुतः सरल, सहज तथा चुस्त शैली में अर्थानुवाद होता है। कार्यालयी साहित्य के अनुवाद की एक समस्या अथवा विशेषता पारिभाषिक शब्दों के समुचित प्रयोग की है। संविधान द्वारा जब हिन्दी को राजभाषा बनाया गया तो सबसे पहले यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि अगर हिन्दी में सरकारी कार्य किया जाना है तो उन सभी अंग्रेजी पारिभाषिक शब्दों के हिन्दी पर्याय सुलभ होने चाहिये जो सामान्यतया कार्यालयी प्रयोग में आते हैं। हालांकि हिन्दी में पर्यायों का अभाव नहीं था फिर भी अर्थ की सूक्ष्मता की दृष्टि से तथा अनेकार्थता के भ्रम से बचने हेतु अंग्रेजी शब्दों के हिन्दी पर्यायों को निर्धारित करना एवं जहाँ वे उपलब्ध नहीं थे वहाँ उनका नवर्निर्माण करना अत्यावश्यक था। भारत सरकार ने इसके लिए पहले केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय तथा बाद में वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग की स्थापना की। इन दोनों संस्थाओं ने जो कभी-कभी अलग-अलग तथा कभी एक संस्था के रूप में कार्य करती रही हैं, "पिछले 30-35 वर्षों में लगभग 4 लाख अंग्रेजी शब्दों के हिन्दी पर्याय निर्धारित या निर्मित किये हैं। इस कार्य में उपलब्ध शब्दावली के सभी स्त्रोतों का पूर्णतया उपयोग किया गया है। इसलिए स्वीकृत शब्दावली में संस्कृत, हिन्दी, उर्दू, अंग्रेजी, फारसी,

अरबी एवं अन्य भारतीय भाषाओं के मूल या संकर शब्दों को अपनाने का प्रयत्न किया गया है। कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं-

(1) Complaint Inspector-शिकायत निरीक्षक

(2) Complaint Report-शिकायत रिपोर्ट

(3) Completion certificate-समापन प्रमाण-पत्र

(4) Complicated-जटिल, उलझनदार

(5) Compositor-अक्षर-योजक, कम्पोजीटर

(6) Compost development Officer-कम्पोस्ट विकास अधिकारी

(7) Compounder-कम्पाउण्डर

(8) Compressor Driver-सम्पीडित चालक, कम्प्रेसर ड्राइवर

(9) Compromise-समझौता

(10) Comptist-परिकलन यन्त्र प्रचालक

(11) Concession-रियायत

(12) Concessional rate-रियायती दर

(13) Concillation Officer-सुलह अधिकारी

(14) Concrete Depot Foreman-कंक्रीट डिपो फोरमैन

(15) Concrete Mixer Driver-क्रंकीट मिश्रक चालक

(16) Conditions of Contract-ठेके की शर्तें, संविदा की शर्तें

(17) Condone-माफ करना, मार्जन करना

(18) Conference Hall- सम्मेलन भवन, कान्फ्रेंस हाल

(19) Confession- संस्वीकृति

(20) Confidence- विश्वास, भरोसा

इन दृष्टान्तों में भाषा के परिशुद्ध तथा मिश्रित दोनों रूपों का प्रयोग पाया जाता है एवं यही रूप वर्तमान प्रशासनिक या कार्यालयी हिन्दी की प्रवृत्ति बन गया है। कार्यालयी अनुवाद में हिन्दी भाषा की अपनी प्रकृति बनाये रखते हुए तथा सहजता को प्रधानता देते हुए इन सभी रूपों का प्रयोग सहज मान्य है।

कार्यालयी हिन्दी के अनुवाद

भारत के संविधान-निर्माताओं ने देश के लिए लोकतान्त्रिक प्रणाली का शासन स्वीकार करते समय यह भी महसूस किया था कि शासन सही अर्थ में लोकतन्त्रात्मक तभी हो सकता है जब उसका सारा कामकाज जनता की भाषा में हो। इसलिए सब राज्यों में वहाँ की स्थानीय भाषाओं को और केन्द्र में हिन्दी को शासन की भाषा बनाने का निर्णय किया गया था। संघ के शासन की भाषा के रूप में हिन्दी को स्वीकार करने के पीछे मुख्य भावना यही थी कि उसके बोलने वालों की संख्या काफी अधिक थी और अनेक अहिन्दी-भाषी क्षेत्रों में भी उसको समझने वाले लोग थे। तात्पर्य यह है कि हिन्दी केवल एक 'विशिष्ट वर्ग' की भाषा नहीं थी और उसमें सरकारी कामकाज चलने पर

यह आशा की जानी चाहिए कि जनता को यह लगेगा कि उसकी अपनी भाषा में ही शासन चल रहा है और वह केवल थोड़े-से अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोगों का थोपा हुआ शासन नहीं है।

1965 से राजभाषा के रूप में हिन्दी प्रतिष्ठित होनी थी। वह हो गई पर राजभाषा के अधिनियमों के अनुसार अंग्रेजी का प्रयोग सहभाषा के रूप में चालू रखा गया। अब विधि के अनुसार केन्द्रीय सरकार को राजभाषा हिन्दी है और सहभाषा अंग्रेजी है, पर वस्तुस्थिति यह है कि अधिकांश काम अब भी अंग्रेजी में होता है और हिन्दी में अधिकतर वे ही काम होते हैं जिनके लिए अंग्रेजी के साथ हिन्दी का प्रयोग अनिवार्य कर दिया गया है। हाँ, हिन्दी के अनिवार्य प्रयोग के क्षेत्र को धीरे-धीरे बढ़ाया जाता रहा है। बाकी कामों के लिए अंग्रेजी अथवा हिन्दी का प्रयोग करने की कर्मचारियों को छूट है। यह सन्तोष की बात है कि छूट वाले क्षेत्रों में भी हिन्दी का प्रयोग धीरे-धीरे बढ़ रहा है और भी सन्तोष की बात यह है कि इस क्षेत्र में भाषा के अधिक सरल और सुबोध रूप का प्रयोग हो रहा है। फिर भी हिन्दी के प्रयोग की अधिक मात्रा अनिवार्य प्रयोग वाले क्षेत्र में ही है।

जिन कामों के लिए अंग्रेजी के साथ हिन्दी का प्रयोग अनिवार्य कर दिया गया है, उनमें हिन्दी का प्रयोग चल तो पड़ा है और उससे आगामी वर्षों में उसके और अधिक विस्तार की आशा भी की जा सकती है, पर इससे एक चिन्ता की स्थिति भी उत्पन्न होती जा रही है जो कि हिन्दी प्रयुक्त की जा रही है वह भी एक 'विशिष्ट वर्ग' की ही भाषा बनती जा रही है। सामान्य जनजीवन की भाषा होने की जो आशा उससे की जानी चाहिए, वह इस समय कम ही पूरी हो रही है।

सरकार के निर्णयों के अनुसार संसद में प्रयुक्त किये जाने वाले सभी कागजों, रिपोर्टों आदि का हिन्दी और अंग्रेजी दोनों में होना आवश्यक है। इसी प्रकार सामान्य आदेश, सूचना, अधिसूचना, संकल्प, टेण्डर, नोटिस आदि का भी दोनों भाषाओं में प्रकाशन किया जाना आवश्यक है। सरकारी मुद्रणालयों को भी आदेश दे दिये गये हैं कि वे उन्हें फार्मों, रजिस्टरों आदि को छापें जो दोनों भाषाओं में छपने को भेजे जायें। इस प्रकार अनेक चीजें अंग्रेजी के साथ-साथ हिन्दी में भी छपने तो लगी हैं पर केवल अनुवाद के रूप में। उन्हें मूल रूप में प्रस्तुत करने वाले विशेषज्ञ अब भी अधिकांश अंग्रेजी में ही प्रस्तुत करते हैं और विषय से अल्प परिचित हिन्दी के अनुवादक को हिन्दी में अनुवाद करने का काम सौंपा जाता है। उसे समय भी प्राय: कम दिया जाता है और प्रेस को भेजने की सदा जल्दी रहती है। अनुवादक कोशों की सहायता से हड़बड़ी में जैसा हिन्दी रूपान्तर प्रस्तुत कर देता है वही प्रेस को भेज दिया जाता है और कुछ मामलों में तो समय इतना कम होता है कि प्रूफ की भूलें भी रह जाती हैं। इसलिए स्वाभाविक है कि अनुवाद की वह भाषा अटपटी, दुरूह, अनगढ़ और बोझिल हो जाती है।

पर अनुवाद की भाषा के अटपटी, अनगढ़, दुरूह और बोझिल होने का कारण सदा जल्दबाजी और हड़बड़ी ही नहीं होता। उसका एक कारण यह भी है कि मूल और अनुवाद की भाषाओं की प्रकृति अलग-अलग होती है और मूल की भाषा अनुवादक के मन-मस्तिष्क पर इतनी हावी होती रहती है कि वह उसके शब्दों, मुहावरों और विन्यास को अनुवाद की भाषा में भी उतार बैठता है जो मूल पाठ से परिचित होने के कारण उसे तो समझ में आ जाता है, पर उन लोगों को समझ में नहीं आता जिनके सामने केवल हिन्दी का पाठ है। निस्सन्देह ऐसा हिन्दी रूपान्तर निरर्थक है। अंग्रेजी के साथ हिन्दी में भी सामग्री प्रस्तुत करने की रस्म तो जरूर पूरी हो जाती है पर इससे अधिक उसका उपयोग नहीं हो सकता। उलटे एक सशक्त भाषा पर यह आक्षेप लगता है कि उसमें भावों को अभिव्यक्त करने की क्षमता ही नहीं है।

यह सही है कि देश ने शासन का जो ढाँचा स्वीकार किया है यह अधिकतर अंग्रेजी शासनकाल का ही ढाँचा है और उसकी अनेक संकल्पनाएं ऐसी हैं जिनसे अंग्रेजी शासनकाल में

पहले का भारत परिचित नहीं था। इसलिए यह स्वाभाविक है कि उन संकल्पनाओं के लिए भारतीय भाषाओं में शब्द नहीं थे। पर अधिकांश भारतीय भाषाओं में संस्कृतमूलक शब्दावली को अपनाने की प्रवृत्ति रही है और संस्कृत में धातु, उपसर्ग, प्रत्यय आदि की सहायता से शब्द बनाने की अद्भुत क्षमता है। दूसरे, भारतीय भाषाओं में विदेशी शब्दों को पचाने की भी प्रबल क्षमता है। इसलिए जहाँ अच्छा शब्द बनाने में कठिनाई हो वहाँ उदारता से ग्रहण किया जा सकता है। हाँ, निर्माण की प्रक्रिया को इतना खींचना उचित नहीं कि विदेशी मूल का कोई शब्द हमारी भाषा का अंग बन चुका हो तो तब भी उसे निकालकर नये कृत्रिम शब्द का प्रयोग किया जाये। खैर, शब्दावली निर्माण के काम के लिए भारत सरकार ने उपयुक्त आयोगों, समितियों आदि का गठन कर रखा है और अनुवादक उनमें दिये गये पर्यायों का ही प्रयोग करें तभी उचित होगा। यदि प्रत्येक अनुवादक अपने-अपने पर्याय गढ़ता जाए तो भाषा-विषयक भ्रान्ति काफी अहितकर हो सकती है। उदाहरणार्थ-अंग्रेजी के dismissal (from service), removal (from service) termination (of service) और discharge 'from service' जैसे शब्दों के अर्थों में सूक्ष्म अर्थभेद होने के कारण उन सबके लिए एक-एक पर्याय का निर्धारण करके सदा उन्हीं पर्यायों का प्रयोग उचित होगा।

आयोगों और समितियों द्वारा निर्धारित प्रामाणिक पर्यायों का प्रयोग भी सोच-समझकर करने की आवश्यकता होती है। एक तो हिन्दी का कोई शब्द अपने अंग्रेजी पर्याय की सभी अर्थच्छायाओं का द्योतक नहीं होता। इसलिए यह ध्वनि रखना आवश्यक होता है कि अंग्रेजी के शब्द की किस अर्थच्छाया का प्रासंगिक प्रकरण में प्रयोग हुआ है और उस छाया-विशेष का द्योतक उस हिन्दी पर्याय से कहाँ तक हो पायेगा। यदि प्रसंग-विशेष में वह पर्याय ठीक नहीं बैठ रहा हो तो उसके प्रयोग का आग्रह कभी नहीं किया जाना चाहिए।

अर्थच्छाया का ध्यान रखने के इस सिद्धान्त को भी कुछ लोग बहुत दूर तक खींच ले जाते हैं और आग्रह करते हैं कि सभी अर्थच्छायाओं के लिए अलग-अलग पर्यायों का प्रयोग किया जाये। उदाहरण के लिए, प्रायः यह सुनने को मिलता है कि हिन्दी का 'अनुभाग' शब्द तो मन्त्रालयों या कार्यालयों के 'section' के लिए है। इसलिए रेलवे, राजपत्र, पुस्तक आदि के 'section' के लिए 'अनुभाग' का प्रयोग ठीक नहीं है। यदि इन सबके भाग, प्रभाग होने में कठिनाई नहीं है तो 'अनुभाग' में क्या गड़बड़ी हो जायेगी? सच तो यह है कि 'भारतीय दण्ड संहिता' के 'section' के लिए भी 'अनुभाग' पर्याय चलाया गया होता तो वह 'धारा' से अधिक ही उपयुक्त रहा होता।

यह भी ध्यान रखने की आवश्यकता है कि प्रामाणिक कोशों का निर्माण प्रयोक्ताओं और अनुवादकों की सहायता के लिए है, उनके सिर पर पर्याय थोपे जाने के लिए नहीं। अर्थात् प्रयोक्ता या अनुवादक जहाँ अपनी बात कहने में अटके और उसे उपयुक्त पर्याय न सूझे वहाँ वह कोश की सहायता ले और दिये हुए पर्याय का ही प्रयोग करे। कोशों का उद्देश्य यह नहीं है कि अंग्रेजी के मूल वाक्य में जितने शब्द हैं उन सभी के पर्याय देखकर ऐसा वाक्य बनाया जाये जिसमें सभी पर्यायों का प्रयोग हो जाये। प्रयोक्ता को तो मूल की भावना को सही-सही रूप में व्यक्त करने के लिए हिन्दी का वाक्य बनाना है, न कि प्रत्येक शब्द के प्रामाणिक पर्याय का उपयोग करने के लिए। नियमों और विधियों के अनुवादों में प्रायः यह आग्रह किया जाता है कि उनके प्रत्येक शब्द, पद, अभिव्यक्ति और यहाँ तक कि विराम-चिह्न तक की उपेक्षा नहीं की जा सकती। वास्तविकता यह है कि शब्द, पद, अभिव्यक्ति या विराम-चिह्न का महत्त्व नहीं है, महत्त्व तो उनसे द्योतित अर्थ का है। उन सभी तत्त्वों के सही-सही भाषान्तरण हिन्दी में कर देने पर भी नियम या विधि की समेकित भावना न आ पाई तो अनुवाद निरर्थक ही होगा। पर यदि एक-आध शब्द का पर्याय न देने पर भी मूल भावना अक्षत रह जाए तो अनुवाद ठीक ही होगा। अनुवाद चाहे विधिक नियमावली का हो चाहे विधि-इतर का, आवश्यकता इस बात की है कि मूल में जितनी भावना निहित है वह पूरी भाषान्तरित हो। प्रत्येक शब्द का पर्याय होना आवश्यक नहीं है। कहीं-कहीं तो प्रत्येक शब्द का भाषान्तरण

हास्यास्पद भी हो जाता है। उदाहरण के लिए, अंग्रेजी का एक वाक्य है, "The existing rules regulating this issue of identity card, inter alia, provide that loss of indentity card would entail a penalty of rupees five. It has now been decided to raise the amount to rupees ten."

इस वाक्य में "regulating, inter alia, provide, raise, आदि शब्दों के निर्धारित पर्यायों का ही प्रयोग हो, यह आवश्यक नहीं है। कही गई बात केवल इतनी है कि 'पहचान-पत्र' जारी करने सम्बन्धी वर्तमान नियमावली के अनुसार पहचान-पत्र खो जाने पर पाँच रुपये अर्थदण्ड होता था जो भविष्य में दस रुपये होगा। इस बात को कहने के लिए यह अनुवाद ठीक नहीं लगता है कि 'पहचान-पत्र' के जारी करने को विनियमित करने वाली विद्यमान नियमावली और बातों के साथ यह उपबन्ध करती है कि पहचान-पत्र के खोये जाने का अपरिहार्य परिणाम पाँच रुपये का अर्थदण्ड होगा। अब यह निश्चय किया गया है कि यह राशि बढ़ाकर दस रुपये कर दी जाये।

इसका अनुवाद यदि यह किया जाये तो काफी होगा कि 'पहचान-पत्र' जारी करने से सम्बन्धित वर्तमान नियमों के अनुसार पहचान-पत्र खो जाने पर पाँच रुपये अर्थदण्ड देना होता है, पर अब यह निश्चय किया गया है कि यह राशि बढ़ाकर दस रुपये कर दी जाये।

अस्तु, इस प्रसंग को यहीं छोड़कर हम प्रशासन में प्रयुक्त भाषा के अलग-अलग क्षेत्रों पर विचार करते हैं; जैसे-कार्यालयों में टिप्पणी और पत्र-व्यवहार, आदेश और अधिसूचना, निर्णय और रिपोर्ट, बजट और लेखा-पद्धति, टेण्डर और करार, विधि और नियम आदि की भाषा। इनमें कुछ क्षेत्रों की भाषा के स्वरूप बहुत निर्धारित और नपे-तुले होते हैं। कुछ में अभिव्यक्ति करने वालों को छूट होती है। उसी अनुपात में अनुवादकों पर भी प्रतिबन्ध या छूट की व्यवस्था होनी चाहिए। प्राय: लगता है कि या तो उन्हें छूट दी नहीं जाती या वे उसका उपयोग करना नहीं जानते। हम पहले उन क्षेत्रों को लेंगे जिनमें छूट ली जा सकती है।

कार्यालयों में होने वाले पत्र-व्यवहार में प्रतिबन्ध कुछ हद तक ही होता है, सामान्यत: छूट होती है। हाँ, पत्र-व्यवहार कानूनी दाँवपेच वाले भी हो सकते हैं पर ऐसे प्रसंग कम होते हैं। सामान्यत: पत्र-व्यवहार सूचनापरक होते हैं।

इनमें अर्द्ध-सरकारी पत्र सरकारी काम के प्रसंग में लिखे होने पर भी व्यक्तिगत पत्र की शैली के होते हैं। प्रारम्भ 'प्रिय श्री/श्रीमती' आदि से होता है। अन्त में पत्र-लेखक अंग्रेजी में 'yours sincerely' लिखता है। इसका हिन्दी पर्याय केवल 'आपका' चल पड़ा है और ठीक है। सामान्यत: सरकारी पत्रों में लिखे जाने वाले 'भवदीय' में औपचारिकता प्रतीत होती है जो अंग्रेजी के 'yours faithfully' में भी निहित है। अर्द्धसरकारी पत्र विशेष ध्यान देने और निजी रुचि लेने का आग्रह करने के लिए होता है। इसलिए इसमें अंग्रेजी का शब्दानुवाद प्रस्तुत करना जरा भी ठीक नहीं होता। मूलत: हिन्दी में मित्र को जिस शैली में पत्र लिखें, उस शैली में लिखना चाहिए। वाक्यों का क्रम उलट-पलट भी करना पड़े तो कोई हर्ज नहीं, भाषा की सहजता रहनी चाहिए। उदाहरणार्थ, यदि अंग्रेजी में लिखते हैं, "I would like to draw your personal attention to the letter written in this connection to your office and its two subsequent reminders which are lying unattended so far and request you to see that the information is supplied immediately." तो इसे हिन्दी में इस प्रकार कहते हैं-"इस विषय में आपके कार्यालय को तीन पत्र लिखे जा चुके हैं। पर अभी तक किसी का भी उत्तर नहीं मिला है। इसलिए आपसे निवेदन कर रहा हूँ कि इस मामले में व्यक्तिगत रुचि लें और आवश्यक सूचना भिजवाने की कृपा करें।"

माना कि इसमें मूल अंग्रेजी से काफी अन्तर है, पर पत्र का उद्देश्य सफल होने की अधिक आशा है। इसी प्रकार अन्त में एक वाक्य प्राय: लिखा जाता है-"A line in reply will be appreciated." इसका शाब्दिक अनुवाद न करके, 'उत्तर की प्रतीक्षा रहेगी', 'उत्तर भिजवाने की कृपा करें', 'उत्तर देकर अनुग्रहित करें' आदि कुछ भी लिखा जा सकता है।

अर्द्ध-सरकारी पत्र में सारी बात ऐसी सहज, सुबोध और स्पष्ट शैली में लिखी जानी चाहिए कि पढ़ने वाले को महसूस हो जाये कि अर्द्ध-सरकारी पत्र की आवश्यकता क्यों पड़ी। अनुवाद के चक्कर में यदि बात स्पष्ट नहीं होगी तो ऐसा पत्र लिखना निरर्थक होगा।

सामान्य सरकारी पत्र प्राय: 'With reference to your letter no. so & so dated so & so, I am to say' या 'I am directed to say' अथवा 'I am to' या 'I am directed to refere to your letter No. so & so and to say' आदि से आरम्भ होते हैं। ये सरकारी भाषा से अपरिचित साधारण अंग्रेजीविज्ञ को भी अजीब लगते हैं। इनका शब्दानुवाद करना समीचीन नहीं। उत्तर इस प्रकार बना सकते हैं, आपका अमुक तारीख का अमुक संख्यक पत्र मिला। उत्तर में निवेदन है कि 'या इस विषय में मुझे यह कहना है कि' या 'इस विषय में मुझे यह कहने का निर्देश हुआ है कि' आदि। ऐसे पत्रों में प्राय: 'I am to add', 'I am further to add' आदि भी होते हैं। इनका अनुकरण करने की आवश्यकता नहीं। इन उक्तियों को छोड़कर भी बात कही जा सकती है। जरूरी ही समझें, तो 'यह भी निवेदन है', 'इसके अलावा यह भी निवेदन है' कह सकते हैं। 'मुझे यह कहने का निर्देश हुआ है' हिन्दी के पत्रों में खटकता है और सच बात यह है कि इस पृष्ठभूमि से अपरिचित अंग्रेजी के पाठक को भी। 'I am directed to say' खटकता ही है। पर ऐसा करना इसलिए जरूरी है कि कार्यालय-पद्धति में यह स्पष्ट आदेश है कि 'उन सभी पत्रों में जो किसी विभाग से भेजे जाते हैं और भारत सरकार के आदेशों या विचारों को व्यक्त करने के लिए लिखे जाते हैं, यह साफतौर पर बता देना चाहिए कि वे सरकार के आदेश से लिखे गये हैं।'इसके अलावा अन्य विभागों से पत्र-व्यवहार करने अथवा अपने ही विभाग के कर्मचारियों से सूचना माँगने की एक और पद्धति है, जिसे कार्यालय-ज्ञापन कहते हैं। इस पद्धति का प्रयोग सम्बद्ध तथा अधीनस्थ कार्यालयों के साथ पत्र-व्यवहार करने में भी किया जाता है। इसके विषय में कार्यालय-पद्धति का कहना है कि यह अन्य पुरुष में लिखा जाता है। इसका हिन्दी रूपान्तर भी प्राय: अटपटा लगने वाला होता है। 'अधोहस्ताक्षरी को यह कहने का निर्देश हुआ है कि वह अमुक कार्यालय के अमुक संख्यक कार्यालय-ज्ञापन के सन्दर्भ में यह सूचित करे कि' आदि। मेरे विचार से इस प्रकार की भाषा से बचा जा सकता है। कार्यालय पद्धति की अपेक्षाएं केवल दो ही हैं-(1) एक यह है कि कार्यालय-ज्ञापन अन्य पुरुष में हो, (2) दूसरी यह है कि 'निर्देशानुसार सूचित करने' का उल्लेख हो। इन दोनों शर्तों को पूरा करते हुए भी हिन्दी की प्रकृति के अनुकूल वाक्य-रचना की जा सकती है, 'अमुक कार्यालय का अमुक संख्यक कार्यालय-ज्ञापन मिला था। इसके विषय में निर्देशानुसार यह सूचित करना है कि' आदि।

पत्र-व्यवहार की इन शैलियों के अतिरिक्त संकल्पों, आदेशों आदि की भी भाषा-शैली अंग्रेजी में सुनिश्चित-सी होती है और उसकी उस शैली का अक्षरश: हिन्दीकरण किया जाए तो अच्छा प्रतीत नहीं होगा। उसमें मूल की भावना की रक्षा करते हुए अभिव्यक्ति की छूट ली जा सकती है। आदेश का एक प्रचलित नमूना है, 'राष्ट्रपति वित्तीय शक्तियों के प्रत्यायोजन की नियमावली के नियम 10 के अधीन ला-वसूल केवल 200 रु., जो कि इस विभाग की निम्नलिखित वस्तुओं की कीमत है, को बट्टेखाने में डालने की मंजूरी देते हैं।' इसमें मूल के निकटतम रहने का प्रयत्न किया गया है जो काफी खटकता है। इसे इस प्रकार अधिक स्पष्टता से कहा जा सकता था, "इस विभाग की निम्नलिखित वस्तुएं अब इस हालत में हैं कि उनकी 200 रुपये कीमत वसूल नहीं की जा सकती।

इसलिए राष्ट्रपति ने वित्तीय शक्तियों की नियमावली के नियम 10 के अधीन वह रकम बट्टेखाते में डालने की मंजूरी दे दी है।"

कार्यालयों की वार्षिक रिपोर्टों में वर्ष-भर में किये गये कामों का लेखा-जोखा होता है। उद्देश्य विवरण प्रस्तुत करना होता है। इसलिए शब्दश: अनुवाद करते जाना प्राय: भद्दा लगता है। ऐसी सामग्री के अनुवाद में अच्छा यही रहता है कि पूरे पैराग्राफ को पढ़कर उसके पूरे भाव को स्वतन्त्र रूप से हिन्दी में व्यक्त किया जाए। पर ऐसे नमूने प्राय: देखने को मिलते हैं जिनमें प्रत्येक शब्द का पर्याय दिया जाता है। उदाहरणार्थ, 'during the year under report' का अनुवाद प्राय: 'रिपोर्टाधीन वर्ष के दौरान' मिलता है। यही भाव 'इस वर्ष में' से व्यक्त हो सकता था। इसी प्रकार 'during this period' का अनुवाद भी 'इसी अवधि' में किया जा सकता है। पर लोग प्राय: 'इस अवधि के दौरान' लिखते हैं। कुछ लोगों को भ्रम है कि 'दौरान' जैसे फारसी मूल के शब्दों के प्रयोग से ही भाषा कुछ सरल हो जाती है। हो सकता है कि कुछ लोगों के बारे में यह बात सही हो। पर उनके लिए 'अवधि' शब्द बेकार है। 'इस दौरान' का वही अर्थ है जो 'इस अवधि में' का है। इसलिए 'अवधि' और 'दौरान' दोनों की जरूरत नहीं है। पर लिखने वाले तो 'इस अवधि के दौरान में' तक लिखते हैं। यह अति है।

लेखा-परीक्षा रिपोर्टों में अंग्रेजी वाक्य-विन्यास की आवश्यक नकल के नमूने देखने को मिलते हैं। "The expenditure during this year was forty millions as against thirty millions last year." का अनुवाद प्राय: इस रूप में मिलता है-"इस वर्ष का व्यय पिछले वर्ष के 300 लाख के मुकाबले 400 लाख रुपये था।" इसे इस प्रकार कहें तो अधिक अच्छा रहेगा 'इस वर्ष 4 करोड़ रुपया व्यय हुआ जबकि पिछले वर्ष 3 करोड़ ही हुआ था।'

ऊपर ऐसी अनुवाद-सामग्री का विवेचन हुआ है जिसमें छूट सम्भव है। अब हम उस सामग्री को लेंगे जिसमें प्रत्येक शब्द में निहित भावना का ध्यान रखना आवश्यक है। यहाँ भी यह स्पष्ट करना उचित होगा कि महत्त्व 'निहित भावना' का है, 'शब्द' का नहीं। विधि, नियम, टेण्डर, करार, सन्धि आदि के अनुवाद में मूल भाषा में प्रत्येक शब्द के सुनिश्चित अर्थ का ध्यान रखना तो जरूरी है, पर इतना ही जरूरी यह भी है कि कही गई बात दूसरे पक्ष की समझ में भी आये। यह तो मानना होगा कि इन विषयों की भाषा में एक शब्द का गलत प्रयोग काफी अनर्थ का कारण बन सकता है। पर इनकी भाषा की सम्पूर्ण गरिमा को मानते हुए भी यह नहीं माना जा सकता कि इनके प्रत्येक शब्द का इतना महत्त्व है कि उसके पर्याय के रूप में गरिमामय संस्कृत पर्याय का होना जरूरी है। अंग्रेजी के बहुत साधारण शब्द 'hereinafter', 'here to for', 'hereby' आदि में कोई ऐसी विधिक गरिमा नहीं लगती कि उनके एतस्मिन् पश्चात्, अधुनापर्यन्त, एतद्द्वारा जैसे नये प्रयोग संस्कृत का सहारा लेकर चालू किये जायें। "एतस्मिन् पश्चात्" तो संस्कृत की दृष्टि से सर्वथा अशुद्ध प्रयोग लगता है और कोई संस्कृतज्ञ ऐसा प्रयोग कभी नहीं करेगा। इस बात को नहीं माना जा सकता कि अंग्रेजों के मुहावरे को ज्यों का त्यों हिन्दी में नहीं उतारा जायेगा तो विधि आदि की गरिमा नष्ट हो जायेगी और अकारण ही किसी को भारी हानि उठानी पड़ जायेगी।

"It is, therefore, hereby enacted as follows.' का अनुवाद "अत: यह एतद्द्वारा निम्न प्रकार से अधिनियमित किया जाता है" तो वैसा ही लगता है, जैसे : 'It is raining' का अनुवाद 'यह बरस रहा है' करना। नियमावलियों में भी 'शब्द' की प्रधानता न होकर उसमें निहित 'अर्थ' की ही प्रधानता है। इसकी पुष्टि में एक उदाहरण पर्याप्त होगा : अंग्रेजी विधि में 'shall' और 'may' दो सर्वथा भिन्न परिस्थितियों में प्रयुक्त होने वाले शब्द हैं। 'shall' से व्यक्त होने वाला विधान बाध्यकारी होता है और 'may' वाला सिफारिश मात्र। इसलिए इनका अनुवाद सतर्क होकर करना चाहिए। दोनों का एक-सा अनुवाद करना अनर्थकारी हो सकता है। पर यह बात

भी सभी सन्दर्भों में सही नहीं है। These rules shall be called the Paddy Procurement Rules. कहे, चाहे 'These may be called the Paddy Procurements Rules' कहे, कोई अन्तर नहीं होगा। इन दोनों वाक्यों का हिन्दीकरण अलग-अलग करना अनावश्यक होगा। नियमों या अधिनियमों का नामोल्लेख करने की हिन्दी में एक पद्धति सुनिश्चित कर लें तो अच्छा होगा, पर अंग्रेजी में जितने प्रकार से उल्लेख होता है उतने ही प्रकार से अंग्रेजी का अनुसरण करते हुए भेद रखना उचित नहीं है। अच्छा तो यही होगा कि सीधे ही नाम का उल्लेख करें-

'इस अधिनियम का नाम ...... है।'

कहीं-कहीं तो अंग्रेजी मूल के शब्दों की सर्वथा उपेक्षा करके केवल उसमें बताई हुई बात का उसी हद तक उल्लेख करना होता है जिस हद तक वह हिन्दी पाठ पर लागू हो। ऐसा विधिक और विधि-इतर सभी नियमों में होता है। भारतीय दण्ड संहिता का एक उदाहरण देखें-

"The pronoun 'he' and its derivatives are used of any person, whether male or female."

इसमें अंग्रेजी व्याकरण के कारण उत्पन्न हुई परिस्थिति का उल्लेख है जो अधिनियम विशेष में सर्वत्र लागू की गई है। अंग्रेजी में he, his और him के स्त्रीलिंग रूप she और her है। इसलिए यह उल्लेख करना आवश्यक था। हिन्दी में 'वह' और 'उस' तो दोनों लिंगों का द्योतन करते हैं, पर क्रियाओं और विशेषणों में अन्तर होता है। ऐसी परिस्थिति में हिन्दी अनुवादक भी पुल्लिगवाचक क्रियाओं और विशेषणों का प्रयोग करता है और उनमें स्त्रीलिंग का अर्थ शामिल करता है। इसलिए इस व्यवस्था का निर्देश करने के लिए वह सर्वनाम 'वह' की बात न करके 'पुल्लिग वाचक' शब्दों से स्त्रीलिंग के भी द्योतित होने का उल्लेख करे तो सही निरूपण होगा। पर ऐसा उल्लेख करने से पहले एक बार आगे की सारी सामग्री को इस दृष्टि से देख लेना आवश्यक होगा कि अनुवाद में सब जगह यह बात निबाही भी गई है या नहीं।

सन्धियों, टेण्डरों, करारों आदि में सुनिश्चित अर्थ वाले शब्द का प्रयोग तो जरूरी है, पर अंग्रेजी के प्रत्येक शब्द के पर्याय देने का आग्रह ठीक नहीं। इसमें यह ध्यान रखना जरूरी है कि अंग्रेजी के संक्षेपाक्षरों के अनुकरण पर हिन्दी में भी संक्षेपाक्षर बनाने का आग्रह नहीं करना चाहिए।

अंग्रेजी का पूरी तरह अनुसरण करने का आग्रह करने वाले अनुवादकों ने हिन्दी के व्याकरणिक रूपों से भी छेड़छाड़ की है। हिन्दी में सामान्य और सतत कालों का भेद होता है। 'वह पढ़ता है' और 'वह पढ़ रहा है' का प्रयोग दो सर्वथा भिन्न स्थितियों का द्योतक है। 'वह पढ़ रहा है', तब कहा जाता है कि जब वह प्रत्यक्षत: पढ़ने के काम में लगा हुआ हो। 'वह पढ़ता है' उस व्यक्ति के सामान्य व्यवसाय का द्योतक है। इसका अर्थ है कि अभी उसने कोई धन्धा शुरू नहीं किया है, अभी तो छात्र है। इसी प्रकार 'यहाँ रंगाई का काम किया जाता है' और 'यहाँ रंगाई का काम किया जा रहा है' का स्पष्ट अर्थभेद है। पर सरकारी तन्त्र की भाषा में अंग्रेजी के अन्धानुकरण की प्रवृत्ति होने के कारण 'करता' है और 'किया जाता है' का प्रयोग वैसे स्थलों पर भी बहुत किया जाने लगा है जहाँ सामान्य प्रवृत्ति का द्योतन अभीष्ट नहीं है, घटना-विशेष का उल्लेख ही अभीष्ट है। 'राष्ट्रपति 'अमुक' को निदेशक के पद पर नियुक्त करते हैं' प्राय: राजपत्र में छपा मिलेगा। व्याकरण की दृष्टि से यह कहना तो ठीक है कि पद विशेष पर नियुक्ति राष्ट्रपति करते हैं, अन्य कोई नहीं। पर व्यक्ति विशेष की नियुक्ति का उल्लेख सामान्य वर्तमान के रूप से करना ठीक नहीं है। अभीष्ट है : घटना-विशेष की राजपत्र द्वारा सबको सूचना देना। यह सूचना तो 'राष्ट्रपति ने अमुक को निदेशक-पद पर नियुक्त किया है' लिखने पर अधिक अच्छी तरह दी जाती है। 'It is hereby notified for general information. It is hereby enacted as under' आदि के

भी ऐसे ही अनुवाद देखने में आते हैं-'अधिसूचित किया जाता है', 'अधिनियम किया जाता है' आदि।

यह प्रसंग इसलिए छेड़ा गया है कि सामान्यत: यह माना जाता है कि यदि अनुवाद की भाषा में वे सब व्याकरणिक रूप हों जो मूल की भाषा में हैं तो अनुवादक का काम सरल होता है, पर वस्तुत: काम सरल नहीं कठिन होता है और प्राय: समानान्तर व्याकरणिक रूप में अनुवाद करके भाषा को जटिल और बोझिल बना दिया जाता है। यह मानना होगा कि गुजराती और संस्कृत में अनुवाद करने वाले को 'मैं जाता हूँ' और 'मैं जा रहा हूँ' का भेद करने में कठिनाई नहीं होगी, यद्यपि उन दोनों भाषाओं में इस प्रकार के दो-दो रूप नहीं हैं। पर अंग्रेजी में व्याकरणिक समानता होते हुए भी अनुवाद गलत हो सकता है। उदाहरण के लिए, अंग्रेजी और हिन्दी दोनों में वाच्यभेद है और प्राय: भ्रष्ट अनुवाद इसलिए होते हैं कि अंग्रेजी के 'active' और 'passive' का भी हिन्दी में कर्तृवाच्य और कर्मवाच्य में ही अनुवाद प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाता है। वास्तव में अनुवादक इस बात की उपेक्षा कर जाता है कि हिन्दी में मूलत: इस बात को कैसे कहा गया होता?

अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद करते समय इस बात का ध्यान रखना बहुत जरूरी है कि अंग्रेजी के अनेक व्याकरणिक रूप ऐसे हैं कि हिन्दी अनुवाद में उनके लिए अलग-अलग प्रसंगों में अलग-अलग व्याकरणिक रूपों में से ही अनुवाद करना जरूरी होता है। अंग्रेजी में लिखी एक जाँच-रिपोर्ट का नमूना देखिए-

Posts were duly advertised. Applications were invited. They were properly scrutinised. Merit was taken into account. Seniority was not ignored. Due weightage was given to long experience.

इन वाक्यों के दो-दो अर्थ हो सकते हैं। 'पदों' का विज्ञापन निकाला जाता था, अर्जियाँ माँगी जाती थीं, उनकी ठीक से जाँच की जाती थी, योग्यता का ध्यान रखा जाता था, वरिष्ठता की उपेक्षा नहीं की जाती थी, आदि अर्थ एक प्रसंग में हो सकते हैं, जब किसी कार्यालय में सामान्यत: अपनाई जाने वाली प्रक्रिया का उल्लेख हो। पर यही रिपोर्ट यदि किसी विशेष मामले के बारे में है तो अर्थ होगा विज्ञापन निकाला गया था, अर्जियाँ माँगी गई थीं, ठीक से जाँच की गई थी आदि। कौनसा अनुवाद विशेष मामले में ठीक है, यह निर्णय तो प्रसंग को देखकर ही किया जा सकता है। कहीं-कहीं तो प्रसंग समझने के लिए पाँच-सात पृष्ठ भी देखने पड़ सकते हैं और काम की शीघ्रता को देखते हुए पृष्ठों को दो-तीन अनुवादकों में बाँटना भी पड़ सकता है। पर यह कर्त्तव्य अनुवादक का है कि वह ऐसा प्रसंग आते ही समझ जाए कि बिना प्रसंग समझे अनुवाद करने लगना खतरनाक हो सकता है। ऐसे प्रसंगों में अनुवाद-प्रशिक्षण की विशेष आवश्यकता होती है। प्रशिक्षकों को भाषा-विशेष के वाक्य-रूपों की विस्तृत जाँच करके यह विवरण तैयार करना होता है कि कैसे स्थलों पर भ्रम की गुंजाइश है? ऐसे स्थल जहाँ तक सम्भव हों, गिनती करके छात्रों को बता देने चाहिए। इस बात पर भी जोर देने की आवश्यकता है कि जहाँ दोनों भाषाओं में व्याकरणिक रूपों की समानता है वहाँ समान व्याकरणिक रूप से अनुवाद कर देना गलत भी हो सकता है। अनुवादक का मुख्य काम मूल में निहित सम्पूर्ण भावना को सहज रूप से भाषान्तरित करना है, समान व्याकरणिक रूप की खोज करके उसमें व्यक्त करना नहीं। यह तथ्य जितना किसी अन्य अनुवाद के विषय में सही है उतना ही विधिक तथा विधि-इतर सरकारी साहित्य के विषय में भी।

नियमों के अनुवाद में भी स्पष्टता और सुनिश्चितार्थता के सिद्धान्त को इतना अधिक खींचना उचित नहीं जो स्पष्टार्थता की जगह दुर्बोधता की ओर ले जाए। इस बात को नहीं भूलना चाहिए कि प्रसंग भी अर्थ निश्चित करता है और कुछ अवकाश उसके लिए भी छोड़ना चाहिए। अंग्रेजी के समाचार-पत्रों में प्राय: ऐसे उदाहरण देखे जा सकते हैं-

'Mohan Lal was sentenced to death for the cold blooded murder of his brother Sohan Lal by justice A'.

इस वाक्य में यह अर्थ समझने की गुंजाइश तो जरूर है कि सोहनलाल की हत्या तो की न्यायाधीश 'A' ने और फाँसी की सजा पा गया सोहनलाल का भाई मोहनलाल। पर ऐसा अर्थ कोई नहीं समझता बिना प्रसंग के। और प्रसंग को तो अंग्रेजी के प्रारूपकार भी इतना महत्त्व देते हैं कि शब्द-विशेष की परिभाषा देते समय भी Unless contrary appears from the context का पुछल्ला लगा ही देते हैं।

अंग्रेजी और हिन्दी भाषाओं का इस दृष्टि से तुलनात्मक विवेचन करने की बहुत आवश्यकता है कि एक भाषा से दूसरी में अनुवाद करते समय किन परिस्थितियों में समानान्तर वाक्य विन्यास अनुवाद को सुकर बनाता है, किनमें दुर्बोध और जटिल बना देता है और किनमें निरर्थक बना डालता है? यह भी जाँच आवश्यक है कि किन परिस्थितियों में अर्थ-भ्रम की गुंजाइश होती है। ऐसे विश्लेषण को पुस्तक रूप में प्रकाशित किया जा सके तो अनुवादकों का बहुत उपकार हो सकेगा। अनुवादकों की आवश्यकताओं से परिचित भाषाशास्त्री इस दिशा में प्रयत्न करें तो अनुवादकों के मार्गदर्शन के लिए उपयोगी सामग्री तैयार हो सकेगी।

वैचारिक या ज्ञान-प्रधान साहित्य

आज का युग प्रधानतया वैज्ञानिक युग है, अत: आज वैज्ञानिक क्षेत्र में लगातार अध्ययन, अनुसन्धान, चिन्तन एवं लेखन हो रहा है। इसी के कारण अंग्रेजी एवं विश्व की अन्य प्रगतिशील भाषाओं में प्रचुर मात्रा में ज्ञान-प्रधान साहित्य रचा जा रहा है। इस साहित्य को हिन्दी में अनूदित करते समय अनुवादक के सामने कई समस्याएँ आती हैं, उनका संक्षेप में विवरण निम्न तरह है-

1. **ज्ञानात्मक साहित्य (मौलिक या अनूदित) का अभाव-** ज्ञानात्मक साहित्य मानव सभ्यता के इतिवृत्त का अभिन्न अंग है एवं क्योंकि ज्ञान-विज्ञान की अभिवृद्धि संचित अनुभवों को भूमिका पर होती है, इसलिए वह स्वयं विज्ञान के भी अध्ययन का मूलभूत तत्व है। इसी नाते ज्ञान-प्रधान साहित्य की विशेष महत्ता होती है।

डॉ. दौलतसिंह कोठारी के शब्दों में 'इस समय प्राय: प्रति वर्ष लगभग दस लाख वैज्ञानिक तथा तकनीकी निबन्ध एवं पचास हजार पुस्तकें, उतने ही प्रतिवेदन प्रकाशित होते हैं और अनुसंधान के परिणामों के सम्प्रेषण एवं वैज्ञानिक ज्ञान के आदान-प्रदान की दो सबसे ज्यादा व्यापक भाषाएँ हैं-अंग्रेजी एवं रूसी। वैज्ञानिक साहित्य का पचास प्रतिशत भाग अंग्रेजी में प्रकाशित होता है। इस प्रचुर परिमाण की तुलना में अनूदित ज्ञानात्मक साहित्य का परिमाण नगण्य ही है। इसी अभाव के कारण हिन्दी में वैज्ञानिक चिन्तन एवं लेखन की परम्परा स्थापित नहीं हो सकी है तथा यह ज्ञान-प्रधान साहित्य के अनुवाद की प्रथम और प्रधान बाधा है।'

2. **उचित परिप्रेक्ष्य का अभाव-** ज्ञान-प्रधान साहित्य के निर्माण का प्रश्न-देश के राजनीतिक, सामाजिक एवं बौद्धिक उत्कर्ष के साथ जुड़ा है। इसे राष्ट्रीयता तथा भाषाओं के प्रश्न के साथ जोड़कर देखा जाना चाहिए। जब तक इस दृष्टि का उन्मेष नहीं होगा, उसकी वांछित श्रीवृद्धि नहीं होगी (खेद है कि हमारे देश में अभी सरकारी या गैर-सरकारी किसी भी क्षेत्र में इस दृष्टिकोण का विकास नहीं हो पाया है)।

3. **अनुवाद हेतु पुस्तकों का चयन-** स्वाधीनता के बाद हिन्दी में अनूदित ज्ञानात्मक ग्रन्थों की सूची पर दृष्टि डालते ही यह स्पष्ट हो जाता है कि उनमें पाठ्य-पुस्तकों तथा छात्रोपयोगी ग्रन्थों की भरमार है। इस तरह की पुस्तकों का प्रकाशन व्यावसायिक दृष्टि से उपयोगी होता है क्योंकि उनकी बिक्री सुनिश्चित होती है। इन पुस्तकों के अनुवाद तथा प्रचार की उपयोगिता को तो अस्वीकार

नहीं किया जा सकता, पर हिन्दी में सिर्फ उन्हीं की भरमार जरूर शोचनीय है (यह भी इतना ही जरूरी है कि ज्ञान-प्रधान गौरव-ग्रन्थों को अविलम्ब अधिक-से-अधिक संख्या में अनूदित किया जाए।) इस तरह के ग्रन्थ प्राचीन होकर भी चिन्तन की प्रगति-यात्रा के प्रधान सीमा-सोपान होते हैं। अत: उनका सार्वकालिक महत्व होता है तथा इन रचनाओं के प्रामाणिक अनुवादों के अभाव में किसी भाषा को सचमुच सम्पन्न नहीं माना जा सकता है।

4. **स्वत्वाधिकार या अनुवाद-अधिकार की समस्या-** अंग्रेजी एवं अन्य भाषाओं में प्रकाशित गौरव-ग्रन्थों के प्रकाशन-अधिकार सुरक्षित हैं। वे नहीं चाहते कि अन्य प्रकाशक उन ग्रन्थों को यथावत् या भाषाभेद से प्रकाशित कर दें। इससे उनको व्यावसायिक क्षति होती है। अत: विशेष गौरव-ग्रन्थों के अनुवाद की जरूरतों का अनुभव पूरी गम्भीरता से किये जाने पर भी सरकारी, गैर-सरकारी अभिकरण, अपनी इच्छा से उन ग्रन्थों का अनुवाद नहीं करा पाते हैं। अब सरकार द्वारा इस दिशा में कुछ ऐसे कदम उठाये गये हैं जिनसे अपेक्षित गौरव-ग्रन्थों का प्रकाशनाधिकार प्राप्त किया जा सकेगा तथा उनके अनुवाद हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषाओं में किये जा सकेंगे।

5. **वैज्ञानिक लेखन-परम्परा का अभाव-** जब से हिन्दी वाङ्मय में व्यापक रूप से प्रयुक्त होने लगी है, तभी से देश की ऐतिहासिक, राजनीतिक, सामाजिक आदि परिस्थितियाँ ऐसी रही हैं कि विविध विज्ञानों एवं विधाओं को कभी प्रोत्साहन नहीं मिल सका। इस दुर्दैवग्रस्त भाषा हेतु परिस्थितियाँ किसी भी दिशा में एवं किसी भी स्तर पर अनुकूल नहीं रही हैं। ज्ञान के साहित्य के सन्दर्भ में तो यह स्थिति और भी चिन्तनीय है। अत: हिन्दी में वैज्ञानिक लेखन-परम्परा का अभाव बना रहा है।

6. **शास्त्रीय भाषा के निश्चित स्वरूप का अभाव-** ज्ञान-प्रधान साहित्य का विज्ञानविद् लेखक, अनुवाद की भाषा के स्तर पर एक हीनता-ग्रन्थ से ग्रस्त होता है तथा इस आशंका से कि कहीं कोई यह न सोचे कि उसे हिन्दी नहीं आती, जाने-अनजाने में संस्कृत शब्दावली की शरण में चला जाता है। वह संस्कृतनिष्ठ हिन्दी को अच्छी हिन्दी का पर्याय मान बैठता है। वह हिन्दी की प्रकृति को संस्कृत के बोझ से दबाकर उसे पंगु बना देता है। उसके द्वारा प्रयुक्त शब्द, शब्द-समुच्चय तथा अभिव्यंजनाएँ जिस साँचे में ढलती हैं, वह निश्चय ही हिन्दी का साँचा नहीं होता है। वैज्ञानिक धरातल पर हमारा पिछड़ापन भी हमारी भाषा के शास्त्रीय रूप के विकास में बाधक रहा है।

7. **प्रतीकों तथा संकेतों के अनुवाद की समस्या-** वैज्ञानिक साहित्य में प्रतीकों तथा संकेतों का प्रयोग बहुत ज्यादा किया जाता है। वैज्ञानिक समीकरणों, सूत्रों आदि में कई तरह के प्रतीक काम में लाये जाते हैं। अंग्रेजी के अपने अथवा अंग्रेजी में प्रयुक्त अन्य भाषा-वैज्ञानिक प्रतीकों एवं संकेतों की संख्या बहुत ज्यादा है। इस साहित्य को हिन्दी में अनूदित करते समय ये प्रतीक बाधा बनकर सामने आते हैं। इनका अनुवाद न किये जाने पर भाषा अंग्रेजी के प्रभाव से आक्रान्त हो जाती है। अगर इनका हिन्दी में अनुवाद कर दिया जाता है तो हिन्दी का वह प्रति प्रतीक अप्रचलित एवं नया होने के कारण इस साहित्य के पठन-पाठन में बाधक हो जाता है। इस समस्या के विभिन्न पहलुओं पर विचार करके शिक्षा-मंत्रालय ने यह निर्देश दिया है कि वैज्ञानिक प्रतीकों तथा संकेतों का हिन्दी में भी यथावत् प्रयोग किया जाना चाहिए।

8. **सन्दर्भ-ग्रन्थों का अभाव-** वैज्ञानिक ग्रन्थों के अनुवादक को किसी एक विषय के ग्रन्थ का अनुवाद करते समय ऐसे कई सन्दर्भों का भी सामना करना पड़ा है जिनका संबंध उसी विषय-विशेष के साथ न होकर अन्य सम्बद्ध विषयों के साथ होता है। उससे यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि वह उन सभी विषयों में पारंगत हो। ऐसी स्थिति में वह अपना कार्य सुगमतापूर्वक तभी कर सकता है जब कि उसे ऐसे सन्दर्भ-ग्रन्थ सुलभ हों जो उक्त प्रसंगों में मददगार हो सकते हैं। हिन्दी में अभी इस तरह के सन्दर्भ-ग्रन्थों का अभाव है। अत: हमारे अनुवाद प्रामाणिक नहीं हो पा रहे हैं।

9. पारिभाषिक शब्दावली का अभाव तथा उसकी अनेकरूपता- पारिभाषिक शब्दावली वैज्ञानिक साहित्य की आधारशिला होती है। वस्तुत: सम्पूर्ण वैज्ञानिक चिन्तन एवं लेखन उसी पर आधारित होता है। अत: सभी विकसित भाषाएँ यह प्रयास करती हैं कि उनका पारिभाषिक शब्द-भण्डार अधिक-से-अधिक समृद्ध एवं अधुनातन (अप-टू-डेट) हो। इससे उन भाषाओं में वैज्ञानिक साहित्य के संवर्द्धन को बल मिलता है। भारत के स्वाधीन होने पर यह समस्या हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषाओं के सामने भी उपस्थित हुई। प्रश्न यह था कि क्या अन्तर्राष्ट्रीय या अंग्रेजी शब्दावली को-जो स्वाधीनता-प्राप्ति के समय भारत में प्रचलित थी-वैज्ञानिक कार्य-साधन हेतु ज्यों-का-त्यों ग्रहण कर लिया जाए अथवा समस्त पारिभाषिक शब्दों के भारतीय पर्याय स्थिर किये जायें या यह प्रयास किया जाये कि आवश्यकतानुसार ज्यादा प्रचलित शब्दों को अंग्रेजी से ज्यों-का-त्यों ले लिया जाए एवं शेष संकल्पनामूलक पारिभाषिक शब्दों के भारतीय पर्याय निर्धारित कर दिये जायें। भारत सरकार के शिक्षा-मन्त्रालय ने यह कार्य अपने हाथ में लिया। शुरू में यह निश्चय किया गया कि निश्चित किये जाने वाले भारतीय पारिभाषिक शब्द सभी भारतीय भाषाओं में यथावत् ग्रहण किये जायेंगे, पर आगे चलकर विभिन्न भारतीय भाषाओं में अपने-अपने ढंग से पारिभाषिक शब्द निर्धारित किये जाने लगे। हिन्दी की जो पारिभाषिक शब्दावली तैयार की जा चुकी है उसका स्तर स्नातक-स्तर का है। इसका तात्पर्य यह हुआ कि अभी हमारे पास बहुत हीं कम पारिभाषिक शब्द हैं। उच्चतर विचारों का भार वहन करने में समर्थ भारतीय शब्दावली के निर्धारण का कार्य अभी शेष है।

पारिभाषिक शब्दावली के क्षेत्र में एक चिन्ताजनक बात है : शब्दों की अनेकरूपता। पारिभाषिक शब्द-निर्धारण का कार्य विभिन्न राज्यों तथा केन्द्रीय सरकार द्वारा स्वतंत्र रूप से किया जा रहा है। कई अवसरों पर यह कार्य गैर-सरकारी क्षेत्र के लेखक एवं प्रकाशक भी अपने-अपने ढंग से कर रहे हैं। इसी के परिणामस्वरूप प्राय: एक ही पारिभाषिक शब्द के एक से ज्यादा हिन्दी पर्याय सामने आते हैं। इस सम्पूर्ण कार्य में समन्वय न होने से वे सभी पर्याय प्रयुक्त हो रहे हैं। इससे वैज्ञानिक साहित्य के लेखन तथा अनुवाद का कार्य भी अपेक्षित गति से नहीं हो पा रहा है।

10. **अनुवादकों का अभाव-** वैज्ञानिक साहित्य के अनुवादकों का अभाव एक गम्भीर समस्या है। वैज्ञानिक साहित्य के अनुवादक से यह अपेक्षित है कि वह विषयविद् भी हो तथा भाषाविद् भी। आज हमारे देश में वैज्ञानिक चिन्तकों एवं लेखकों की जो वरिष्ठ पीढ़ी है, उनके अध्ययन और अनुसन्धान का माध्यम अंग्रेजी भाषा रही है। अत: वे अपने भावों को जितनी सुगमता तथा प्रभावी रीति से अंग्रेजी में व्यक्त कर सकते हैं उतनी सुविधा से हिन्दी में नहीं कर सकते। अनुवाद-कार्य में उनके सहयोग से वंचित रहा नहीं जा सकता। इसलिए वैज्ञानिक साहित्य के अनुवाद में अब प्राय: सहयोगपरक अनुवाद की पद्धति अपनाई जाती है। इस पद्धति में विषयवेत्ता तथा भाषावेत्ता मिलकर अनुवाद करते हैं। यहाँ भी दो प्रश्न उपस्थित होते हैं-(1) क्या विषद्विद् अनुवाद करे तथा भाषाविद् उसका सुधार-परिष्कार करे? (2) अनुवाद भाषाविद् द्वारा किया जाये एवं उसका संशोधन या पुनरीक्षण विषयविद् द्वारा किया जाये। इस संबंध में ज्यादा वांछनीय मार्ग यह है कि पहला विकल्प अपनाया जाये। इस विकल्प के हल सन्तोषप्रद रहे हैं। अत: अब ज्यादातर अनुवाद-अभिकरण इसी पद्धति से काम ले रहे हैं।

11. **लोकहित-भावना का अभाव-** वैसे तो सम्पूर्ण साहित्य-सृजन-भले ही वह कितना भी स्वान्त सुखाय क्यों न हो? किसी-न-किसी अंश तक लोकहित भावना से अनुप्राणित होता है, पर अनुवाद के सन्दर्भ में तो यह बात और भी ज्यादा सत्य है। अनुवादक अपने लिए नहीं, ऐसे लोगों हेतु अनुवाद करता है जो उन दो भाषाओं में से सिर्फ एक जानते हैं जिन पर उसे अधिकार प्राप्त है। अत: उसका कार्य तब तक फलीभूत नहीं हो सकता जब तक कि वह लोकहित भावना से अपने इस दायित्व का निर्वाह न करे। खेद की बात है कि स्वाधीनता के बाद साहित्य के क्षेत्र में लोकहित

की भावना का स्थान व्यावसायिकता लेती जा रही है। साहित्य संवर्द्धन की दृष्टि से यह बहुत ही अशुभ लक्षण है। कटु होकर भी यह कथन असत्य नहीं है कि स्वाधीनता पूर्व का हिन्दी लेखक हिन्दी-सेवी था, आज का हिन्दी लेखक हिन्दी-जीवी हो गया है।

12. **संगठन तथा समन्वय का अभाव-** ज्ञान-प्रधान साहित्य वस्तुत: उपयोगी साहित्य होता है। उसका प्रणयन एवं प्रचार ऐसे संगठित तथा समन्वित ढंग से किया जाना चाहिए जिससे हिन्दी भाषा-भाषी समाज समग्रत: लाभान्वित हो सके। इस दृष्टि से हिन्दी के वैज्ञानिक साहित्य के क्षेत्र में निराशा ही ज्यादा पाई जाती है। इतना ही नहीं कि सरकार एवं गैर-सरकारी कार्य के मध्य कोई तालमेल नहीं है वरन् स्वयं सरकारी कार्य में भी आयोजन संगठन तथा समन्वय का अभाव है। इन्हीं कारणों से हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य का अनुवाद अपेक्षित गति से नहीं हो पा रहा है।

अनुवादक

अनुवाद करने वाले को 'अनुवादक' कहते हैं। इसे अंग्रेजी भाषा में 'ट्रांसलेटर' भी कहते हैं। अनुवादक स्रोत भाषा की सामग्री को लक्ष्य भाषा में पुन: प्रस्तुत करता है। ऐसा करते समय उसे अत्यंत सावधानी बरतना जरूरी होता है। जो अनुवादक मूल भाषा को पाठ्य भाषा में अविरल भाव रूप में प्रस्तुत करता है उसे अच्छा अनुवादक कहते हैं।

इटली में यह कहावत प्रचलित है कि "अनुवादक विश्वासघाती होते हैं।" इसका तात्पर्य यह है कि अधिकतर अनुवादक अनुवाद के प्रति सजग नहीं रहते हैं, ऐसी स्थिति में अनुवादक को पूर्ण सावधानी रखनी चाहिए।

श्रेष्ठ अनुवादक की विशेषताएं

1. अच्छे अनुवाद में भाषा सुबोध होनी चाहिए।
2. भाषा गतिशील या प्रवाहमय होनी चाहिए।
3. शब्दों के अर्थ वास्तविकता तथा शुद्धता लिए होने चाहिए।
4. लक्ष्य भाषा में स्रोत भाषा के समान ही ज्यों का त्यों भाव आना चाहिए।
5. अनुवाद करते समय मूल रचना सुरक्षित रखी जाए अर्थात् न सिर्फ शाब्दिक अनुवाद, बल्कि भावार्थ भी होना चाहिए।
6. इसमें अनुवाद की जाने वाली विषय-वस्तु के बारे में अच्छा ज्ञान होना चाहिए।
7. दोनों भाषाओं पर पूरा अधिकार हो।
8. दोनों भाषाओं की वाक्य रचना का समुचित व्याकरणिक ज्ञान होना चाहिए।
9. इसमें अनुवाद करते समय समानार्थी शब्दों का ज्ञान होना चाहिए।

अनुवाद प्रक्रिया

1. एक अच्छे अनुवाद की भाषा सरल, सुबोध, स्पष्ट तथा प्रांजल होना चाहिए।

2. स्रोत भाषा के मूलभाव लक्ष्य भाषा में पूर्णरूपेण आना चाहिए।

3. शब्दों के अर्थ शुद्ध, तथ्यपरक तथा वास्तविक होने चाहिए।

4. अनुवाद सजीव और उपयुक्त होना चाहिए।

5. शब्दानुवाद के बजाय भावानुवाद होना चाहिए।

6. स्रोत भाषा के संदर्भित शब्दों का लक्ष्य भाषा में अनुवाद करते समय युक्तिसंगत निर्णय लेना चाहिए।

अच्छे अनुवादक के गुण

एक अच्छे अनुवादक में निम्न गुण होने चाहिए।

1. *एक अच्छे अनुवादक को स्त्रोत-भाषा तथा लक्ष्य-भाषा दोनों का अच्छा ज्ञान होना चाहिए। उसे स्त्रोत भाषा की प्रकृति एवं परिवेश और उनकी सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से पूर्णत: परिचित होना चाहिए।*
2. *एक अच्छे अनुवादक की अभिव्यक्ति, सुबोध, प्रांजल, भावपूर्ण तथा प्रवाहमयी होनी चाहिए।*
3. *उसमें स्तोत्र भाषा में कथित अभिव्यक्ति को ज्यों की त्यों लक्ष्य भाषा में पेश करने की योग्यता, दक्षता तथा प्रतिभा होनी चाहिए। उसे मूल भावों की रक्षा करने में सक्षम होना चाहिए।*
4. *अच्छे अनुवादक को यह प्रयास करना चाहिए कि मूल रचना की शैली सुरक्षित रहे। अनुवाद की भाषा अथवा लक्ष्य भाषा यथासंभव स्त्रोत भाषा की प्रकृति के अनुरूप होनी चाहिए।*

उसे स्त्रोत भाषा तथा लक्ष्य भाषा दोनों की संरचना का पूर्ण व्यावहारिक ज्ञान होना चाहिए।

(अ) कार्यालयी अनुवाद

अनुवाद के क्षेत्र में कार्यालयी अनुवाद का बहुत महत्व है। कार्यालयी अनुवाद साहित्यिक अनुवाद से सर्वथा भिन्न होता है। दोनों तरह के अनुवाद की सामग्री की प्रकृति में काफी अंतर होता है। इन दोनों तरह के अनुवाद की समस्याओं में भी अंतर होना स्वाभाविक है। साहित्यिक अनुवाद की समस्याएं पुन: सृजन के स्तर पर होती हैं जबकि कार्यालयी अनुवाद की प्रकृति शब्दों अथवा वाक्यों के प्रतिस्थापन के स्तर पर होती है। दोनों तरह के अनुवाद में भाषा का स्वरूप भी बदल जाता है। कार्यालयी अनुवाद में भाषा की प्रयुक्तियाँ मुख्यत: पारिभाषिक, अमिधामूलक तथा सुनिश्चित अर्थ रखने वाली होती हैं। कार्यालयी अनुवाद में अनुवादक को निम्न बातों का ध्यान रखना पड़ता है-शब्द-चयन, भाषा की प्रकृति, शब्द-प्रयुक्ति, भाषा में क्लिष्टता न हो, अनुवाद में अर्थ का अनर्थ न हो, पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग तथा अनुवादक को विषय का समुचित ज्ञान।

(ब) वैज्ञानिक एवं तकनीकी अनुवाद

आज विकासशील देशों के लिए वैज्ञानिक तथा तकनीकी साहित्य का अनुवाद एक निश्चित आवश्यकता है। देश का सामान्य स्तर ऊंचा उठाने हेतु अंधविश्वास को दूर करने तथा वैज्ञानिक पृष्ठभूमि तैयार करने हेतु अनुवाद बहुत सहायक हो सकता है। अपनी भाषाओं में मौलिक लेखन के लिए भी अनुवाद कार्य एक पृष्ठभूमि तैयार करता है तथा विकसित होती जाती शब्दावली का भी वह परीक्षण करता जाता है। वैज्ञानिक तथा तकनीकी साहित्य के अनुवाद में कुछ व्यावहारिक समस्याएं आती हैं जिनका समाधान परस्पर चर्चा एवं विचार गोष्ठियों द्वारा किया जा सकता है। वैज्ञानिक तथा तकनीकी क्षेत्र में निरंतर विकास के कारण नित्य नये तथ्य प्रकाश में आते रहते हैं। उन्हें समझने-समझाने के लिए प्राय: नये शब्दों का निर्माण कर लिया जाता है। इन शब्दों की समीचीन व्याख्या तथा उनके समतुल्य हिन्दी शब्द बनाने की जरूरत होती है। व्यवहार में प्रयोग से ही नये शब्द चलन में आते हैं। तकनीकी क्षेत्र में जरूरी है कि उच्च स्तरीय विज्ञान-प्रशिक्षण पाठ्यक्रम हिन्दी में होना चाहिए। भौतिकी, रसायन, गणित, कंप्यूटर विज्ञान, इलेक्ट्रॉनिकी, इंजीनियरी आयुर्विज्ञान, प्रबंधन विज्ञान आदि में यह पाठ्यक्रम चलाया जाना चाहिए।

वैज्ञानिक तथा तकनीकी साहित्य का अनुवाद करते समय यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि इसकी भाषा सरल सुबोध स्पष्ट और असंदिग्ध हो। यह अपनी भाषा की उच्चारण प्रकृति एवं व्याकरण के नियमों के भी अनुकूल हो। इसमें समान संकल्पना हेतु समान शब्दों का प्रयोग किया जाना चाहिए। किसी भी तरह के पूर्वाग्रह का इस तरह के अनुवाद की भाषा पर प्रभाव दृष्टिगोचर नहीं होना चाहिए अन्यथा अनुवाद की भाषा क्लिष्ट होकर रह जायेगी।

वैज्ञानिक तथा तकनीकी क्षेत्र में अनुवादक को निम्न बातों का ध्यान रखना जरूरी है-अनुवादक का दोनों भाषाओं पर अधिकार, वैज्ञानिक भाषा की सरलता तथा स्पष्टता, पारिभाषिक शब्दावली का ज्ञान, अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रचलित पारिभाषिक शब्दावली, विदेशी भाषाओं के प्रयोग, विदेशी शब्दों का हिन्दी उच्चारण के अनुरूप ढालना, वैज्ञानिक शब्दों के हिन्दी पर्याय तथा वैज्ञानिक शब्दों का लिप्यंतरण।

(स) वाणिज्यिक अनुवाद

आज हर व्यक्ति तथा समाज के लिए ही नहीं, वरन् हर राष्ट्र के लिए भी वाणिज्य-क्षेत्र का अपना विशेष महत्व है। वैयक्तिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय उन्नति के जितने भी मुख्य कारक हैं, वाणिज्य उन्हीं में से एक है। वैज्ञानिक एवं औद्योगिक विकास के साथ-साथ अपनी पूर्ववर्ती शताब्दियों की तुलना में बीसवीं शताब्दी में वाणिज्य का विकास भी अपूर्व हुआ है। मनुष्य की मूलतः उद्योगशील वृत्ति, व्यापार के लिए अनुकूल माहौल की प्राप्ति तथा यातायात के साधनों की निर्मिति, ये कारण हैं जिन्होंने दुनिया के कोने-कोने में व्यापार हेतु अच्छी जमीन प्रदान की। अब व्यापार का क्षेत्र गली-मुहल्ले तक ही सीमित नहीं रहा, वह तो राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर तक बढ़ गया है। अब अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर व्यापार विषयक नई नीति बनने एवं यातायात के साधन उपलब्ध होने के कारण हमारे यहाँ की कई चीजें दुनिया के बाजार में आसानी से पहुँच रही हैं तथा दुनिया के बाजार की चीजें हमारे यहाँ के बाजारों में आ रही हैं। खास कर तब से कि जब से भौतिक विकास को ही सही विकास मानने वाले इस युग में वाणिज्य का महत्व बढ़ गया है। सुविधाभोगी पीढ़ी में साधनों का जुगाड़ करने में इन दिनों में मानो होड़-सी लगी है। आजकल नई से नई चीजों का निर्माण तथा बाजार में उनका आगमन, जनसंचार माध्यमों से दिया गया उनका विज्ञापन एवं उनको खरीदने के लिए मध्यवर्गियों तथा निम्नवर्गियों में बढ़ता हुआ आकर्षण का जाल अब दुनिया के कोने-कोने तक फैला हुआ नजर आता है। पर दुनिया के सारे देशों की भाषा एक न होने के कारण आज वाणिज्य-क्षेत्र में अनुवाद को असाधारण महत्व प्राप्त हुआ है। इसलिए अब वाणिज्यानुवाद की आवश्यकता उत्तरोत्तर बढ़ती हुई नजर आ रही है। संयुक्त राष्ट्र संघ, यूनेस्को, विश्व बैंक, बहुराष्ट्रीय कंपनियों जैसी कई अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं, राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय फिल्म महोत्सवों एवं ओलंपिक जैसे खेलों आदि के कारण वाणिज्यानुवाद की माँग और जरूरत बढ़ती जा रही है।

वाणिज्य साहित्य के हिन्दी अनुवाद को पढ़ने वाले कर्मचारियों-अधिकारियों के हिन्दी के ज्ञान का स्तर एक समान नहीं होता है। कुछ कर्मचारियों को हिन्दी का बहुत ही कम ज्ञान होता है; कुछ को हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान होता है; कुछ ऐसे भी कर्मचारी होते हैं, जिन्हें हिन्दी में प्रवीणता होती है। अतः पाठक वर्ग का ध्यान रखे बिना अनुवाद करने से प्रयोजन की सिद्धि नहीं होगी। विषयानुकूल अनुवाद होने पर भी वह उपयोगी तभी होगा जब पाठक उसे समझ लें।

जिस तरह वाणिज्य-क्षेत्र अब व्यापक रूप में दिखाई देता है, उसी तरह वाणिज्य-साहित्य की सामग्री में भी व्यापकता दिखाई देती है। अतः वाणिज्य अनुवाद की सामग्री भी अनुवाद हेतु पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। वाणिज्य-अनुवाद के अंतर्गत व्यापार, उद्योग-धंधे, बैंक, फिल्म, पर्यटन एवं विज्ञापन आदि आते हैं। वर्तमान युग में इस अनुवाद के मुख्य क्षेत्र बैंकिंग तथा विज्ञापन में दिखाई देते हैं। वाणिज्य-अनुवाद में व्यापार से संबंधित दस्तावेज, व्यावसायिक पत्र, यथा-माँग पत्र,

भुगतान संबंधी पत्र, शिकायत पत्र, क्षतिपूर्ति पत्र, निविदायें, नियमावली, निर्देश, उद्घोष तथा तत्संबंधी सभी तरह की सामग्री आती है। वाणिज्य अनुवाद की सामग्री अन्य विषयों की सामग्री की तुलना में जनसाधारण के लिए होती है। इसलिए जनसाधारण की भाषा का प्रयोग वाणिज्य तथा बैंक अनुवाद की विशेषता होती है। इसकी भाषा में अर्थ-विशेष तथा भाव-विशेष के सूचक शब्दों तथा अन्य वाणिज्यिक अभिव्यक्तियों का प्रयोग आम आदमी की भाषा का अभिन्न अंग हुआ करता है। वाणिज्य साहित्य के अनुवाद में कभी-कभी "Negotiable instrument", "Preference Share", "Banking principle", "Bucket shop", "Bull regging", जैसी विशिष्ट शब्दावली का शब्दानुवाद करने पर अर्थ का अनर्थ होने की संभावना बनी रहती है। इस समस्या के समाधान हेतु अनुवादक को भावानुवाद की पद्धति अपनानी चाहिए ताकि उनमें निहित अर्थ को आसानी से सभी लोग समझ सकें। साथ ही संदर्भगत अर्थ को पकड़ने का प्रयत्न भी करना चाहिए।

वाणिज्यिक अनुवाद में ध्यान रखना जरूरी है-भाषा की सहजता तथा बोधगम्यता, वाणिज्यिक शब्दावली में संक्षिप्ताक्षर, वाणिज्यिक शब्दावली के अनुवाद, वाणिज्यिक शब्दावली में अनेक रूपता तथा वाणिज्यिक शब्दावली में अनेक रूपता तथा वाणिज्यिक शब्दावली में लिप्यंतरण।

(द) विधिक अनुवाद

भारतीय संविधान में हिन्दी को राजभाषा का दर्जा दिया जाना ही आज विधि साहित्य के अनुवाद की अनिवार्यता का कारण है। हिन्दी देश की आम जनता की भाषा है। अत: न्यायालय में हिन्दी का प्रयोग कोई गौरव की बात नहीं वरन् एक अनिवार्यता है। विधि साहित्य का अनुवाद उतना सरल तथा आसान नहीं है जितना कि प्रतीत होता है। विधि के क्षेत्र में हिन्दी का प्रचार तथा व्यापक प्रयोग होने पर वह स्वयं सरल और स्वाभाविक लगने लगेगी एवं तब उसका स्वरूप सामान्य न्यायिक आकांक्षाओं के ज्यादा अनुकूल होगा।

विधिक अनुवाद में अनुवादक को निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए-विधि-अनुवाद में मौलिक प्रारूपण, विधि-अनुवाद की भाषा की प्रकृति, विधिक शब्दावली में एकरूपता, विधिक शब्दावली में विशिष्ट अर्थवत्ता, विधि की मानक शब्दावली तथा विधि की शब्दावली में अंग्रेजी शब्दावली का प्रयोग।

हिन्दी की प्रयोजनीयता में अनुवाद की भूमिका

जैसा कि हम जानते हैं कि हिन्दी के विकास तथा प्रयोजन में अनुवाद का बहुत बड़ा योगदान है। प्रारंभ से ही हिन्दी में संस्कृत के ग्रंथों का अनुवाद होता आया है। हिन्दी के व्याकरण पर भी संस्कृत के व्याकरण का बड़ा व्यापक प्रभाव पड़ा है। वेद, पुराण, रामायण, उपनिषद, ब्राह्मण ग्रंथ, न्याय सूत्र, महाभारत इत्यादि का हिन्दी में रूपांतरण तथा अनुवाद हुआ है जिसके कारण हिन्दी साहित्य समृद्ध हुआ।

संस्कृत के बाद उर्दू साहित्य तथा उर्दू के अनेक ग्रंथों का अनुवाद हुआ। मुगल शासन के समय कार्यालयों, न्यायालयों की भाषा उर्दू थी एवं उसका व्यापक प्रभाव हिन्दी की प्रयोजनीयता में था।

भारत की कई भाषाओं-तमिल, तेलगु, बंगला, पंजाबी, मराठी इत्यादि के साहित्य के अनुवाद ने हिन्दी को समृद्ध ही नहीं किया उसकी प्रयोजनशीलता को भी प्रभावित किया है। बंगला के श्रेष्ठ साहित्यकारों ने रवीन्द्रनाथ टैगोर, शरतचंद्र, बंकिमचंद्र, विमल मित्र इत्यादि कई लेखकों के साहित्य को बहुत प्रभावित किया है। इन सभी भाषाओं के लेखकों का प्रभाव हिन्दी पड़ता रहा है। उर्दू साहित्य के प्रमुख रचनाकार प्रेमचंद रहे हैं तथा उनकी रचनाओं से समस्त जगत परिचित हैं। देवकी

नंदन खत्री के उपन्यासों को पढ़ने हेतु हजारों लोगों ने हिन्दी सीखी तथा प्रयोग किया। समय-समय पर रचित साहित्य का प्रभाव भी पड़ता रहा।

प्रशासन में अनुवाद के कारण हिन्दी की प्रयोजनता में वृद्धि हुई। सर्वप्रथम मुगलों के शासन काल में अनुवाद का प्रभाव पड़ा। तत्पश्चात् अंग्रेजों के शासन में भी यह निरंतर पड़ता रहा। मुगलकाल में फारसी शासन की भाषा थी। अंग्रेजों के शासन काल में अंग्रेजी स्वीकृत हुई। लोग अंग्रेजी न जानने के कारण परेशान होते थे। उन्हें अपनी अर्जी कचहरी में पेश करने हेतु भी अंग्रेजी अनुवाद का सहारा लेना पड़ता था।

भारत जब स्वतंत्र हो गया तब संविधान के निर्माताओं ने प्रशासन की भाषा के विषय में भी प्रावधान बनाया। तद्नुसार राज्यों का भीतरी प्रशासन राज्य की भाषा में करने की व्यवस्था हुई। उनमें भी ऐसा प्रबंध अपेक्षित है जिससे अल्पमत वालों को असुविधा या नुकसान न हो। पूरे देश के प्रशासन के लिए हिन्दी को राजभाषा स्वीकार किया गया। हिन्दीत्तर-भाषी लोगों के लिये हिन्दी में प्रशासकीय पत्र-व्यवहार की कठिनाई महसूस करते हुये कुछ वर्षों तक अंग्रेजी को सह-राजभाषा के रूप में स्वीकार करने का भी प्रावधान है। इस प्रावधान के कारण प्रशासन के क्षेत्र में अनुवाद अनिवार्य हो गया।

प्रशासनिक भाषा के अनुवाद पर विचार करने हेतु प्रशासन-कार्य के विभिन्न विभागों को अलग-अलग समझना अधिक सुविधाजनक रहेगा। हर सरकारी विभाग के संचालन के लिये आधारभूत प्रशासनिक नियम-संहिता या कोड होता है। सरकार के सारे विभागों के लिये सामान्यत: लागू होने वाले नियमों के संकलन भी होते हैं, जैसे-सरकारी सेवा नियम, सरकारी वित्त नियम आदि। इन नियमावलियों की भाषा शुद्ध प्रशासनिक भाषा है जो विशेष वैधानिक महत्व रखती है। इतनी आजादी तो जरूर हो सकती है कि अंग्रेजी की जटिलता को हिन्दी में दूर करें तथा हिन्दी की प्रकृति का निर्वाह करें। पर मूल का कोई महत्वपूर्ण अंश छूट नहीं जाना चाहिए। ऐसी नियमावलियां वर्षों में, त्रुटियों-कमियों का संशोधन करते-करते अंतिम रूप में प्रस्तुत होती हैं। फिर भी संशोधन स्वीकार किये जाते हैं। इसलिये मूल के पूरे भाव का प्रस्तुतीकरण अनुवाद में अपेक्षित है।

जैसा कि श्री काशीराम शर्मा ने लिखा है, यदि हर अनुवादक अपने-अपने हिन्दी पर्याय पढ़े तो भाषा-विषयक भ्रांति बड़ी अहितकर हो सकती है। उदाहरणार्थ अंग्रेजी के dismissal (from service), removal (from service), termination (of service) और discharge (from service) जैसे शब्दों के अर्थों में सूक्ष्म अर्थभेद होने के कारण उन सब के लिये अलग-अलग पर्याय का निर्धारण करके सदा उन्हीं पर्यायों का प्रयोग करना उचित होगा।

प्रशासनिक अंग्रेजी की वाक्य-संरचना काफी टेढ़ी रहती है। साहित्य-प्रेमियों को इसकी शैली बड़ी विकट लग सकती है। इस संरचना के बुनियादी तत्वों का विश्लेषण उपयोगी है। पहली बात यह है कि सरकारी अधिकारी सरकार की ओर से पत्र-व्यवहार करता है। उसका कोई व्यक्तिगत संबंध पत्र-प्राप्ता के साथ नहीं है। वह पत्र के प्रारंभ में यही सूचित करता है कि मैं सरकार या अपने प्रमुख अधिकारीगण-जो भी संगत हो-आदेश से यह पत्र लिखता हूं-I am directed to say (मुझे यह सूचित करने का निदेश हुआ है) अभिव्यक्ति का यही मतलब है। ऐसे पत्र में अन्य पुरुष और कर्मवाच्य का प्रयोग अधिक मिलेगा।

प्रशासनिक भाषा के वाक्य प्राय: लंबे तथा संश्लिष्ट होते हैं। सरकारी पत्र-व्यवहार में कानून के कई प्रावधानों का निर्वाह करना पड़ता है।

जनसंचार के माध्यमों के अनुवाद

जन संचार का अर्थ है किसी संदेश का प्रसारण करना अथवा फैलाना। विश्व में अपने विचारों, समाचारों, प्रौद्योगिकी तथा वैज्ञानिक आविष्कारों, विभिन्न माध्यमों का प्रसार अत्यंत आवश्यक है। संचार के द्वारा हमारा विश्व एक हो गया है। समस्त विश्व के नये-नये रूप, मनोरंजन के साधन, खेलकूद का प्रसारण हम एक स्थान पर बैठे-बैठे देख सकते हैं। जन संचार के माध्यमों को हम तीन रूप में विभक्त कर सकते हैं-

1. **विद्युतीय या इलेक्ट्रॉनिक माध्यम**-*जो इस तरह हैं*-(i) *आकाशवाणी*, (ii) *दूरदर्शन*, (iii) *दूरभाष या टेलीफोन*, (iv) *फैक्स*, (v) *तारे या टेलीग्राफ।*

2. **अन्य माध्यम**- *जो इस तरह हैं*- (i) *समाचार पत्र*, (ii) *पत्र सूचना कार्यालय*, (iii) *प्रकाशन विभाग*, (iv) *सिनेमा या चलचित्र*, (v) *डाक प्रणाली।*

3. **अंतरिक्ष विज्ञान**-(i) *कंप्यूटर*, (ii) *ई-मेल*, (iii) *अंतरिक्ष में छोड़े गये यान या उपग्रह।*

इन सभी माध्यमों से अनुवाद की प्रक्रिया निरंतर चल रही है जो इस तरह है-

1. **आकाशवाणी**- आकाशवाणी के कार्यक्रम हिन्दी, अंग्रेजी ही नहीं भारत की कई भाषाओं एवं विदेशों की कई भाषाओं जैसे- फ्रेंच, पोर्चगीज, जर्मनी इत्यादि सभी विदेशों की भाषा में प्रसारित होते हैं। इन कार्यक्रमों के अनुवाद निरंतर हो रहे हैं तथा इनका प्रसारण हिन्दी में धड़ल्ले से हो रहा है। इनकी पटकथा, कहानियां, गीत, समाचार, इत्यादि समस्त विधाओं का अनुवाद हो रहा है।

2. **दूरदर्शन**- दूरदर्शन एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा समाचार, चलचित्र, गीत, नाटक इत्यादि लाखों प्रकार के कार्यक्रमों का प्रसारण होता है। विश्व की सभी चैनलों, जैसे स्टार प्लस, बी.बी.सी., जी.टी.वी., सी.टी.वी., ओ.टी.वी., दिल्ली दूरदर्शन इत्यादि चैनलें अपना प्रसारण कर रही हैं। इंटरनेट एवं केबल के द्वारा सब एक साथ मिल गये हैं। दूरदर्शन के कार्यक्रम विश्व की अनेक भाषाओं में प्रसारित होते हैं तथा उनका अनुवाद एवं रूपांतर हिन्दी में सतत हो रहा है। कई भाषाओं के कार्यक्रम अब हिन्दी में अनुदित होते रहते हैं। यह अनुवाद प्रक्रिया बड़े वृहद रूप में चल रही है।

3. **दूरभाष**- टेलीफोन की डायरेक्ट्री हिन्दी तथा अंग्रेजी में उपलब्ध है। इससे संबंधित सभी प्रकाशनों का अनुवाद हिन्दी में हो गया है एवं दिनों दिन हो रहा है।

4. **फैक्स**- फैक्स मशीन द्वारा अनुवाद भी दिया जाता है तथा इसके साहित्य का अनुवाद हिन्दी में हो गया है।

5. **तार**- अब तार हिन्दी में भेजे जाने लगे हैं तथा इसके साहित्य का अनुवाद हिन्दी में हो रहा है।

6. **समाचार पत्र**- ये सभी भाषाओं में होते हैं। समाचारों के अनुवाद हिन्दी में होते हैं। अन्य साहित्य का अनुवाद भी हिन्दी में हो रहा है।

7. **पत्र सूचना कार्यालय**- केन्द्रीय एजेंसी द्वारा अनुदित होकर पत्र भेजे जाते हैं। इनका प्रयोग बहुलता से हो रहा है। ये सूचनायें देशी-विदेशी, दैनिक समाचार पत्रों, समाचार पत्रिकाओं, समाचार एजेंसियों, रेडियो तथा दूरदर्शन संगठनों को भेजी जाती हैं। भारत में चार समाचार एजेंसियां हैं-1. प्रेस ट्रस्ट ऑफ इंडिया, 2. यूनाइटेड न्यूज ऑफ इंडिया, 3. समाचार भारती, 4. हिन्दुस्तान समाचार। ये एजेंसियां भी अपने कार्यालयों में हिन्दी का अनुवाद करती रहती हैं।

8. **प्रकाशन विभाग-** इस विभाग द्वारा राष्ट्रीय महत्व के विषयों पर हिन्दी-अंग्रेजी तथा अन्य भाषाओं में पुस्तकें एवं पत्रिकायें प्रकाशित करता है। उनका विक्रय देश विदेशों में होता है। इस विभाग द्वारा अनेक भाषाओं का अनुवाद हिन्दी में होता रहता है।

9. **सिनेमा या चलचित्र-** देश विदेश के कई चलचित्रों का अनुवाद हिन्दी में हो रहा है। उदाहरणार्थ-अंगूर नामक चलचित्र का अनुवाद शेक्सपियर के अंग्रेजी उपन्यास से किया गया। हजारों चलचित्रों का अनुवाद विभिन्न भाषाओं से हिन्दी में हो रहा है तथा कभी-कभी ये अत्यंत लोकप्रिय हो रहे हैं।

10. **डाक प्रणाली-** डाक प्रणाली में भी डाक से संबंधित अधिकांश कार्य अब हिन्दी भाषा में हो रहे हैं तथा अनुवाद द्वारा ही यह संपन्न हो रहा है।

11. **अंतरिक्ष विज्ञान-** इसमें कंप्यूटर अब हिन्दी में कार्य करने लगे हैं। कंप्यूटर के माध्यम से हिन्दी में अनुवाद किया जाने लगा है। इतना ही नहीं कंप्यूटर के माध्यम से ई-मेल कनेक्शन द्वारा विश्व के कई कार्यक्रम हिन्दी में हो रहे हैं। अब उसके लिये हिन्दी में फ्लापी बन रही है। कंप्यूटर संबंधी जानकारी के लिये हिन्दी में अनेक पुस्तकें अनुदित की गई हैं।

विज्ञापनों में हिन्दी अनुवाद का स्थान

विज्ञापन आज व्यवसाय तथा मानव जीवन का अभिन्न अंग बन गया है। लोगों को आकर्षित करने के लिये व्यावसायिक कंपनियां अनेक तरह के आकर्षक विज्ञापनों का निर्माण करवा रही हैं। विज्ञापन बनाने वाली संस्थायें रोज हजारों विज्ञापनों का निर्माण कर रही हैं। ये विज्ञापन संसार की प्राय: समस्त भाषाओं में हो रहे हैं। चूंकि लेनदेन सभी भाषाओं में होता है अत: कई भाषाओं के विज्ञापन दिनों दिन बनते हैं। समाचार पत्रों में विज्ञापन अनुदित होकर आ रहे हैं। इसके अतिरिक्त हजारों-लाखों पत्र-पत्रिकाओं में जो दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक, त्रैमासिक, अर्द्धवार्षिक एवं वार्षिक पत्र-पत्रिकाओं में अनुदित विज्ञापन हिन्दी में पढ़े या देखे जा जा सकते हैं। विदेशी प्रसाधनों, वस्तुओं के विज्ञापन हिन्दी में अनुदित होकर ही प्रकाशित होते हैं। ये विज्ञापन अन्य पुस्तकों, चलचित्रों, समाचारों के मध्य में, विभिन्न कार्यक्रमों में, दूरदर्शन तथा आकाशवाणी द्वारा किये जा रहे हैं। इन सबका विवरण संभव नहीं है। लाखों तरह के विज्ञापन निरंतर हिन्दी में अनुदित होकर प्रसारित हो रहे हैं। ये विज्ञापन कई बार तो अत्यंत मनोरंजक भी होते हैं तथा कई बार अतिशयोक्तिपूर्ण होते हैं। इन विज्ञापनों के लेखक बड़ी चतुराई से शब्द चयन करते हैं एवं पटकथायें लिखते हैं। हिन्दी भाषा-भाषियों की संख्या बहुत अधिक है। देश-विदेश सभी जगह भारतीय रहते हैं। अत: अनेक देशों तथा विदेशों में हिन्दी में अनुदित विज्ञापनों का प्रयोग एवं प्रसारण हो रहा है। व्यापारी एवं विज्ञापन जगत हिन्दी के महत्व तथा उसके जानकारों की संख्या से अवगत है। अत: इन विज्ञापनों में हिन्दी का अनुवाद अत्यंत महत्वपूर्ण हो गया है।

वाणिज्यिक अनुवाद

वर्तमान युग अर्थ या आर्थिक युग है। लोगों ने कहा भी है बाप भला ना भइया-सबसे बड़ा रुपइया। आज धन-वैभव या अर्थ भगवान का दूसरा रूप है। अर्थ प्रधान युग में वाणिज्य या व्यापार प्रमुख है। लोगों ने लिखा है-व्यापारे वसति लक्ष्मी: अर्थात् व्यापार या वाणिज्य में लक्ष्मी का निवास है। व्यापार तथा व्यवसाय के कई या असंख्य साधन हैं। व्यवसाय के लिये विश्व में कई कारखाने, व्यापारी समुदाय या कंपनियां, यातायात, औषधि या स्वास्थ्य सेवाएं, सभी कुछ इसके अंतर्गत आता है। यहां तक कि शिक्षा तथा धर्म भी व्यवसाय बन गया है। शिक्षा की लाखों संस्थायें आज व्यावसायिक बन गई हैं। सभी दूर व्यावसायिक पाठ्यक्रमों की धूम मच गई है। ये पाठ्यक्रम व्यावसायिक शिक्षा, तकनीकी शिक्षा, प्रौद्योगिकी शिक्षा, इंजीनियरिंग शिक्षा, कंप्यूटर शिक्षा, होटल व्यवस्था शिक्षा इत्यादि कई पाठ्यक्रमों में इस शिक्षा का बोलबाला है। महाविद्यालय, विश्वविद्यालय

इनका संचालन करते हैं। भारत में एवं विदेशों में स्थित हिन्दी भाषा-भाषियों के लिये वाणिज्यिक शिक्षा अत्यंत महत्वपूर्ण है तथा व्यवसाय के क्षेत्र में भी हिन्दी बहुत महत्वपूर्ण है। उसके लिये हिसाब या एकाउंट, पत्र व्यवहार, लेनदेन सभी कुछ हिन्दी में होता है। यह कार्य अनुवाद के माध्यम से ही होता है। बहुत बड़ी-बड़ी संस्थाओं में भी अब हिन्दी का प्रयोग हो गया है। अतः उनमें अनुवाद के माध्यम से ही कार्य होता है। भारतीयों द्वारा विदेश में स्थापित व्यापारिक संस्थाओं द्वारा अनुदित हिन्दी का प्रयोग होता है तो विदेशों की लाखों व्यावसायिक संस्थाएं भारत से व्यापार करती हैं तथा करना चाहती हैं। ऐसी स्थिति में हिन्दी का ज्ञान अत्यंत आवश्यक है। ये संस्थायें अपने कार्य हेतु अनुदित हिन्दी का प्रयोग करते हैं तथा पत्र व्यवहार करते हैं यह अनुवाद कई बार अत्यंत रोचक होता है। हर भाषा का कुछ न कुछ प्रभाव संबंधित अनुवाद पर पड़ता है एवं उन भाषाओं से प्रभावित हिन्दी का प्रभाव इनके पत्राचार तथा संचार व्यवस्था में पड़ता रहता है। तात्पर्य यह है कि वाणिज्यिक अनुवाद की भी कोई सीमा नहीं है। देश-विदेश की बहुसंख्यक वाणिज्यिक संस्थाओं में अनुदित हिन्दी का प्रयोग होता है। वाणिज्यिक विषय के लिये अनेक पुस्तकों का प्रकाशन भी हुआ है। विदेशी वाणिज्यिक पुस्तकों का प्रकाशन भी हिन्दी में अनुवाद के द्वारा हुआ है। आज संचार के साधनों ने समस्त विश्व को छोटा अथवा एक बना दिया है। यह सब भाषा के माध्यम से ही होता है। भाषाओं में हिन्दी अत्यंत महत्वपूर्ण है तो निश्चय ही वाणिज्य में अनुवादित हिन्दी का प्रयोग अवश्यंभावी है।

वैज्ञानिक एवं तकनीकी अनुवाद का क्षेत्र एवं परिभाषा

अनुवाद के विभिन्न क्षेत्रों में विज्ञान वर्तमान युग में सबसे गहरा तथा महत्वपूर्ण हो गया है। शिक्षा के प्राथमिक स्तर से विज्ञान पाठ्यक्रम का अंग है। प्रौढ़ शिक्षा के ग्रंथों में भी लोकप्रिय शैली में विज्ञान की सामग्री रहती है। शिक्षा के उच्चतम स्तर तक विज्ञान की पढ़ाई अब व्यापक रूप से चलती है।

विज्ञान की शिक्षा की बात कहते ही अंग्रेजी सर्वशक्तिमान होने की बात कई लोग कहते हैं लेकिन वे यह भूलते हैं कि संसार के अनेक देशों में वैज्ञानिक हुये हैं तथा उन्होंने अपने देश की भाषा में वैज्ञानिक निष्कर्ष लिखे हैं। यह सही है कि ऐसे ग्रंथों का अनुवाद अंग्रेजी में मिलता है। अंग्रेजी इस अनुवाद से सुपुष्ट हो सकी है। किसी भी भाषा का वैज्ञानिक साहित्य अनुवाद से धनी बनता है।

सरसरी दृष्टि से कहा जा सकता है कि अनुवाद रचना प्रधान है। विज्ञान के सिद्धांत, तथ्य, आविष्कार, प्रयोग, प्रयोग-विधि आदि का विवरण ही विज्ञान में प्राप्त होता है। शुद्ध वैज्ञानिक ग्रंथों में कल्पना की गुंजाइश नहीं है। द्वयार्थता या अलंकार आदि की भी बात नहीं उठती। स्रोत भाषा की सामग्री को लक्ष्य भाषा में ईमानदारी से तथा वैज्ञानिक शब्दों में प्रस्तुत करना ही विज्ञान के अनुवादक का काम है। यह प्रथम दृष्टि में सरल लगता है। लेकिन अनुवाद कार्य शुरू करते ही कठिनाइयां शुरू होती हैं। वैज्ञानिक साहित्य में सामान्य अर्थवाची शब्द कम रहते हैं और तकनीकी शब्दावली अधिक। जो तकनीकी है इनको हम इच्छानुसार नये-नये पर्यायवाची शब्दों से अनुदित नहीं कर सकते। अपनी लक्ष्य भाषा के वैज्ञानिक ग्रंथों अथवा तकनीकी शब्दकोषों में दिये हुये हैं। पर्यायवाची तकनीकी शब्दों का ही प्रयोग करना पड़ता है। वैज्ञानिक क्षेत्र की उक्तियां (रजिस्टर) बड़ी संख्या में हैं।

वैज्ञानिक शब्दों का क्षेत्र

वैज्ञानिक शब्दों में कुछ ठोस वस्तुओं के नाम हैं। कुछ क्रियाओं तथा संकल्पनाओं का बोध कराते हैं। उनका सूक्ष्म बोध कराने वाले शब्दों से ही अनुवाद करना चाहिए। जो पाठक स्रोत भाषा, विज्ञान-ग्रंथों से सुपरिचित हैं, उन्हें उनकी भाषा, शब्दावली आदि सरल लगते हैं। लेकिन एक

नई भाषा में उसके अपरिचित वैज्ञानिक, पारिभाषिक शब्दों में अनुवाद किया जाता है तो वह प्रारंभ में कठिन व दुरूह-सा लग सकता है। यह अनिवार्य है। अभ्यास करते-करते अनुदित सामग्री भी मूल भाषा की सामग्री की तरह परिचित हो जायेगी। जैसे-हमारे संचार माध्यमों के संपर्क से अब तापमान (Temperature), परमाणु ऊर्जा (Electronic Energy), उपग्रह (Satellite) आदि अनुदित शब्द हमारे लिये सुपरिचित हो गये हैं।

वैज्ञानिक एवं तकनीकी अनुवाद के स्वीकृत सिद्धांत

ये सिद्धांत निम्नलिखित हैं-

1. *वैज्ञानिक व तकनीकी लेखन में जो अंतर्राष्ट्रीय चिन्ह स्वीकृत हैं उन्हें ज्यों-का-त्यों स्वीकार किया जाये।*
2. *अन्य भाषाओं से यों स्वीकृत शब्दों का प्रयोग वाक्यों में करते समय लक्ष्य भाषा की प्रकृति के अनुसार उनका अनुकूलन करना चाहिए।*
3. *तकनीकी भाषा की संकररूपता अथवा विलक्षणता से घबराना नहीं चाहिए।*
4. *जहां वैज्ञानिक सामग्री का लोकप्रिय प्रस्तुतीकरण हो वहां लक्ष्य भाषा में प्रचलित अर्धतकनीकी शब्दों का प्रयोग किया जा सकता है।*
5. *आधुनिक विज्ञान के अनुवाद के दौरान विदेशी शब्द तथा तत्सम प्रत्यय, विदेशी भारतीय शब्दों की समास व्यवस्था आदि की जरूरत पड़ेगी। यह साहित्य या भाषायी शुद्धि के प्रेमियों को खटक सकता है। उनके भय से यदि भ्रमजनक तथा ढीली भाषा का प्रयोग किया जाये तो वैज्ञानिक अर्थबोध नहीं हो पायेगा।*
6. *जो अंतर्राष्ट्रीय संज्ञायें हैं उन्हें सिर्फ लिप्यंतरण करके भाषा में लाया जाये।*

विधि साहित्य और अनुवाद

पुराने जमाने में गांवों में पंचायतें होती थीं। वहां होने वाली बुरी घटनाओं, झगड़ों तथा लेनदेन के विषय में होने वाले मतभेदों पर पंचायत निर्णय करती थी। नैतिक तथा धार्मिक मान्यताओं तथा परंपराओं के अनुसार पंचायत फैसला करती थी। बड़ी घटनाओं पर राजा सुनवाई करते थे। उसकी भाषा देशभाषा होती थी। राजा धार्मिक क्षेत्र में दरबार के धर्म-पंडित से सलाह लेते थे। संस्कृत में अनेक धर्म-नीतिग्रंथ थे-मनुस्मृति, पराशरस्मृति आदि।

युगों के बदलते-बदलते कानून बने तथा उन कानूनों का पालन करने के लिये अधिकारी नियुक्त किये जाने लगे। मुगल राज में फारसी भाषा में प्रशासन चलता था। इसलिये कानून के क्षेत्र में फारसी-अरबी शब्दावली की बहुतायत होने लगी। इस देश में जब अंग्रेज कंपनी का शासन प्रारंभ हुआ तो अंग्रेजी अधिकारी नियुक्त होने लगे, तब कानून की चर्चा भी अंग्रेजी में होने लगी। अंग्रेज अधिकारी यहां की परंपरा आदि विशेष पंडितों से समझते थे। हिन्दू पंडित, मौलवी आदि धर्म की बातों पर न्यायालय में साक्ष्य तथा प्रमाण देते थे। इंग्लैंड की कानून-शासन प्रणाली यहां भी लाई गई। तभी तो यहां जज, जूरी तथा वकीलों की परंपरा चल पड़ी। अब जूरियों की व्यवस्था समाप्त हो गई है। वकीलों की संकल्पना नियमों के विशेषज्ञों के रूप में हुई थी। किसी मुकदमे के कानूनी मुद्दों पर जूरियों एवं जज को व्याख्या या स्पष्टीकरण देना वकील का काम था। अतएव वे उसी भाषा में बोलने के लिये बाध्य थे तो जजों को मालूम हो। अंग्रेज शासन के प्रारंभिक दिनों में देशी सज्जनों को मुंसिफ बनाते तो गनीमत थी। जिला जज, उच्च न्यायालय का जज आदि पदों पर अंग्रेज ही नियुक्त हो सकते थे। ऐसे माहौल में अंग्रेजी पूरे न्यायालयों की बहस भाषा बन गई। कानून की पुस्तकें, अदालत के कागजात, जज का निर्णय-सब अंग्रेजी में होने लगे। देशी भाषा में जो दस्तावेज

होते थे-चिट्ठी-पत्री रहती-उन सबको पेश करते थे। वकील उनका अनुवाद अंग्रेजी में करके पेश करते।

अंग्रेज अफसर अपनी भाषा में अंग्रेजी न जानने वाले भारतीयों के मुकदमे की पैरवी सुनते और अपनी भाषा में निर्णय सुनाते। ये निर्णय तटस्थ तथा उचित जरूर होते थे। फिर भी सरकार ने यह अनुभव किया कि कानून की बातें लोगों की भाषा में करनी चाहिए। इसलिये सन् 1797 ईस्वी में पार्लियामेंट ने यह विधान पारित कर दिया कि भारत संबंधी विधि के अनुसार भारतीय भाषाओं में प्रकाशित किये जायें। सन् 1803 ई. में यह आदेश दिया गया-

Every regulation with marginal notes shall be translated in the Persian Hindustanee language by the translators.

सन् 1830 ई. में न्यायालयों में फारसी के स्थान पर अंग्रेजी कर देने का प्रस्ताव हुआ। तब भी कुछ प्रांतों में क्षेत्रीय भाषाओं को ही न्यायालयों की सामान्य भाषा करने का औचित्य प्रस्तुत किया गया। आगे चलकर हर अधिनियम के पारित होने पर उसका अनुवाद भारत की सभी प्रमुख भाषाओं में किया जाने लगा। बीच-बीच में यह बात स्थापित होती, पर फिर भी जारी रहती।

हिन्दी की विधि शब्दावली का संग्रह तथा प्रकाशन का सर्वप्रथम श्रेय एच.एच. विल्सन को है। उन्होंने 1855 में 'ग्लोरी ऑफ जूडिशियल एंड रेवेन्यू टर्म्स' प्रस्तुत किया। उसके बाद कई व्यक्तियों ने इस दिशा में कार्य किया। 1961 ई. में राजभाषा (विधायी) आयोग की स्थापना हुई। इसका काम अखिल भारतीय मानक विधि शब्दावली तैयार करना था। सन् 1970 में विधि शब्दावली का प्रकाशन हुआ। उसका परिवर्धन होता आ रहा है। नया संस्करण 1984 में निकला है।

यह आयोग तथा कई अन्य विधि विशेषज्ञ परिषदें कानून संबंधी ग्रंथों का अनुवाद करती आई हैं। Indian Penal Code, Indian Evidence Act आदि मुख्य नियम-संहिताओं का अनुवाद किया गया है। अब संसद में पारित होने वाले हर अधिनियम का प्रकाशन द्विभाषिक रूप में किया जाता है। कई न्यायालयों में न्यायाधीश हिन्दी में निर्णय भी तैयार करते हैं। एल-एल.बी. परीक्षा में हिन्दी के माध्यम से लिखा जाता है, पढ़ाई भी होती है। उच्च न्यायालय विधि-पत्रिका एवं उच्चतम न्यायालय विधि-पत्रिका में निर्णय और सार हिन्दी में प्रस्तुत किये जाते हैं।

बैंक अब पूरे देश में कार्य करता है। ग्राहकों के खाते खोलकर उनमें जमा स्वीकार करना, उनके चैक को किसी भी बैंक से भुनवाने की व्यवस्था करना, विदेशी कंपनियों तथा बैंकों से लेन-देन की व्यवस्था करना, शेयर, उद्योग आदि लाभकारी कार्यों में अपने धन का निवेश करना आदि बहुत सारे काम बैंकों को करने पड़ते हैं। बैंकों का लेखापालन विलायती लेखापालन-सिद्धांतों पर पहले निर्भर रहा। बाद में वह विकसित जरूर हुआ है।

एक गांव या नगर का साहूकार निजी लेन-देन में स्थानीय भाषा से काम चला सकता है। पर यदि वह पंजीकृत बैंकर हो तो उसे सारे कागजात व रजिस्टर रखने पड़ते हैं। बैंकिंग के सारे फार्म, लेखापाल की विधियां तथा अन्य कई कागजात अब अंग्रेजी में ही होते हैं। हमारे देश की सबसे बड़ी बैंकिंग संस्था रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया है। भारतीय स्टेट बैंक व्यापारिक बैंक के कारोबार के अलावा सरकारी खजाने का काम भी करता है। कई राष्ट्रीयकृत बैंक हैं। अनुसूचित बैंक, निजी बैंक आदि अनेक हैं। धन का लेन-देन करने वाले बैंकों के अलावा भू-बंधक बैंक, सहकारी बैंक आदि अनेक प्रकार के बैंक हैं। इन सब की बुनियाद धन का लेन-देन ही है। फिर भी उनकी कार्यवाही में अंतर होता है। इन सबकी कार्यवाही इस समय अंग्रेजी में ही होती है।

अब सवाल उठता है कि बैंकिंग की कार्यवाही में अनुवाद कितना योग दे सकता है। आम लोग बैंकों में धन जमा करने, अपने खाते से धन लेने तथा सोना-चांदी गिरवी रखकर उधार लेने जाते हैं। व्यापार आदि में विशेष अग्रिम, कर्ज आदि लेने के लिये भी वे बैंक पहुंचते हें। ये अनिवार्यत: अंग्रेजी के जानकार नहीं होते। अतएव इनके लिये सारे फार्मों तथा लिखा-पढ़ी की भाषा सुलभ होनी चाहिए। आम लोगों की भाषा में अनुवाद इसका सबसे अच्छा उपाय है।

बैंकिंग में तकनीकी शब्दों तथा वाक्यांशों की बहुतायत है। ऐसे शब्दों और वाक्यांशों का उपयोग करते हुए कई पत्र तैयार किये जाते हैं। बैंकिंग पत्र-व्यवहार में इन छपे हुए प्रपत्रों को भरते हैं। बैंकों में प्रचलित तकनीकी शब्दों के नमूने और उनका हिन्दी अनुवाद-

Account-*खाता,* **Accounts-***लेखा,* **Deposit-***जमा,* **Withdrawal-***वापसी,* **Saving Bank-***बचत बैंक,* **Non-remittance-***प्रेषण न करना,* **Operators-***परिचालन,* **Non-resident external Bank Account-***गैर-रिहायशी बाह्य खाता,* **Reinvestment plan-***पुनर्निवेश योजना,* **Overdraft-***अधिविकर्ष,* **Subsidiary Bank-***राष्ट्रीयकृत बैंक,* **Loan facilities-***ऋण सुविधा,* **Mortgage Loan-***बंधक ऋण,* **Self employment-***स्वनियोजन।*

बैंक की भाषा में वाणिज्य की शब्दावली तथा मधुर मुहावरे अधिक प्रयुक्त होते हैं। यहां की कार्यवाही कई खास प्रविधियों से होती है। कार्य-विधाओं के विभिन्न शीर्षक भी होते हैं। इन्हें हम बैंकिंग की प्रयुक्तियां कह सकते हैं। उदाहरणार्थ चेक, ड्राफ्ट, डेबिट, क्रेडिट, एकाउंट, डीड, ओवर ड्राफ्ट की लोन, डिस्काउंटिंग, बैड डेट आदि। बैंक के साथ ग्राहक का करारनामा, ग्राहक को बैंक द्वारा जमा की रसीद, विभिन्न संस्थाओं के साथ बैंक का पत्र-व्यवहार आदि तकनीकी शब्दों का प्रयोग मांगते हैं। बैंकिंग के बही खाते की तैयारी अंग्रेजी में निश्चित तकनीकी क्रम से की जाती है। बेलेंस शीट (तुलनपत्र), लाइबिलिटी (देयतायें), एसेट्स (परिसंपत्ति) आदि बैंकिंग के चिर-प्रचलित शब्द हैं। अनुवाद की दृष्टि से बैंकिंग पत्र-व्यवहार के दो पहलू बनाये जा सकते हैं- 1. आंतरिक, 2. सार्वजनिक।

सार्वजनिक पत्र-व्यवहार में आम लोगों के साथ बैंक का पत्राचार आता है। इसमें अनुवाद ज्यादा आवश्यक होता है। प्राय: बैंक इसके लिये निश्चित फार्मों, प्रपत्रों का अनुवाद कराकर रख लेते हैं। आंतरिक पत्र-व्यवहार का कार्य अधिक तकनीकी होता है। फिर भी अब अर्थशास्त्र बैंकिंग आदि पर भारतीय भाषाओं में भी मौलिक ग्रंथ निकलते रहते हैं। इनमें तकनीकी शब्दों का सीधे प्रयोग और अनुवाद प्रसंगानुसार किया जाता है।

बैंकिंग के क्षेत्र में भी अनुवाद की वही नीति अपनाई जाती है जो विज्ञान के क्षेत्र में है। अर्थात् जो अंतर्राष्ट्रीय शब्द कहलाने योग्य हैं उनका प्रयोग ज्यों-का-त्यों किया जाता है। दूसरे शब्दों का अनुवाद होता है। इस क्षेत्र की भाषा की संरचना प्रशासन की भाषा की सी होती है। प्रथम पुरुष का प्रयोग कम रहता है, कर्मणि प्रयोग की अधिकता मिलती है। वाक्य विधि-भाषा की तरह लंबे तथा अनेक उपवाक्य-सहित होते हैं। कुछ खास तकनीकी शब्द बारंबार दुहराये जाते हैं। फिर भी क्षेत्रीय भू-व्यवस्था, अर्थ-व्यवस्था आदि के कारण बैंकिंग की भाषा में क्षेत्रीय रंग जरूर आ सकता है।

काव्य एवं साहित्य के अनुवाद

सहृदयता मानव मात्र को प्रभु से प्राप्त वरदान है। सभ्यता तथा शिक्षा के विकास के अनुसार उसका विकास होता आया है। दूसरों के सुख-दु:ख को पहचानना, उसकी कल्पना करना तथा उस कल्पना पर आधारित रचना का अभिनंदन करना सहृदयता की उच्चतर सीढ़ियों का चिन्ह है। भाषा-भेद एवं देश-भेद इसमें बाधा नहीं पहुंचाता। तभी तो हम दूसरी भाषा की कविता तथा गीत

सुनकर अभिभूत होते हैं। उस भाषा की फिल्म देखकर प्रभावित होते हैं। मानव की मूल संवेदना पूरे विश्व में समान होती है। इस संवेदना की अभिव्यक्ति का अन्यतम माध्यम साहित्य है। साहित्य की विधाओं में कविता ही सबसे लोकप्रिय तथा सशक्त रही है। इसलिए विविध भाषाओं के कवि दूसरी भाषाओं की कविता के अनुवाद में रुचि लेते आये हैं।

कविता के माध्यम की लोकप्रियता

भारत की प्राचीन ज्ञानराशि का संचय प्राय: छंदों में किया जाता था। ग्रंथ के आकार की चर्चा की संख्या के आधार पर होती थी। उन दिनों का गद्य का प्रयोग प्राय: व्यावहारिक वार्तालाप में किया जाता था। हालांकि नाटकों में गद्य प्रयुक्त था तथापि इसमें संदेह है कि आम लोग इसी शैली के परिनिष्ठित गद्य में बोलते रहे होंगे। चूंकि उपनिषद, पुराण आदि छंदोमय थे इसलिए छंदोबद्ध रचना को विशेष प्रतिष्ठा मिलती थी। दूसरे छंदोबद्ध कविता का स्मरण अधिक आसान था। विद्वान लोग रचनाएं प्रारंभ से अंत तक कंठस्थ कर लेते थे। अंत्याक्षरी सहृदय समाज का लोकप्रिय साहित्यिक मनोरंजन रही थी।

भारत में तकनीकी विषयों के कई ग्रंथ छंदों में लिखे गये। कुछ ग्रंथ सूत्र तथा व्याख्या के रूप में गद्य में भी जरूर लिखे जाते थे। तथापि छंद ज्यादा लोकप्रिय माध्यम था। ज्योतिष में आर्यभट्टीय, होराशास्त्र, आयुर्वेद में अष्टांग-हृदय, विधि में मनुस्मृति, पराशरस्मृति तथा शिल्प में तंत्रसमुच्चय, नाट्य में नाट्यशास्त्र आदि कितने ही विषयों के ग्रंथ छंदोमय रहे हैं। प्राचीन शास्त्रकारों के लिये छंद में लक्षण-रचना कोई कठिन बात नहीं थी। टीकाकार एवं शास्त्रकार गद्य में उनकी टीका करते थे।

संस्कृत काव्य का आधुनिक भाषाओं में अनुवाद

आधुनिक भारतीय भाषाओं में जब संस्कृत में लिखी हुई इन प्राचीन कृतियों का अनुवाद जरूरी हुआ तब अधिकांश अनुवादकों ने छंदोबद्ध ग्रंथों का अनुवाद छंद में किया। उन्हें कोई झिझक नहीं थी। शास्त्रादि के छंदोबद्ध ग्रंथों का अनुवाद छंदों में करते थे। साहित्यिक ग्रंथों का कहना ही क्या ! इस काव्यानुवाद का एक और पहलू था। संस्कृत के ग्रंथों की रचना व अध्ययन अभिजात वर्ग तक सीमित रहा। सामान्य लोग अपनी भाषा में संस्कृत ग्रंथों का काव्यमय अनुवाद करते थे। यों वाल्मीकि रामायण, महाभारत, भगवद्गीता तथा ऐसे ही कई ग्रंथ आधुनिक भाषाओं में अनूदित हुये। उदाहरणत: दक्षिण की चारों भाषाओं में, व्यास के महाभारत का अनुवाद हुआ। पंप ने कन्नड़ में, नन्नय्या ने तेलगू में, विल्लिपत्तूरार ने तमिल में और एषुत्तच्छन ने मलयालम में महाभारत का अनुवाद किया है। इन अनूदित काव्यों को भी लोगों ने उतना ही सम्मान दिया जितना कि मूल कृतियों को देते थे। संस्कृत रामायण के पाठ, आरती आदि का जैसा क्रम रहा वैसा क्रम आधुनिक भाषाओं के प्रमुख रामायण काव्य के विषय में भी होता आया है।

आधुनिक युग के साहित्य की एक प्रवृत्ति पद्य की अपेक्षा गद्य का विकास है। गद्य के अनेक रूपों का विकास होता आया है। इसकी प्रतिक्रिया यह भी रही कि कविता को कोमलता, छंदबद्धता आदि विशेष गुणों का क्षेत्र माना गया। कविता के अनुवाद को अधिक गहरा तथा कठिन मानने लगे। काव्यानुवाद पर तकनीकी दृष्टि से विचार होने लगा। यह विचार भारत में कम और पश्चिम में ज्यादा किया गया। इसलिये काव्यानुवाद संबंधी विचार पश्चिमी भाषाओं में ही अधिक मिलते हैं। फिर भी ये विचार भारतीय प्रसंग पर भी लागू किये जा सकते हैं।

काव्य साहित्य अनुवाद के सिद्धांत

स्वतंत्र पद्यानुवाद ही सबसे लोकप्रिय तथा आदर्श अनुवाद माना जाता है। इसमें अनुवादक कवि मूल भाषा का भाव ग्रहण करके उसे अपनी अनुवाद समीक्षा का अनुसृजन पुकारते हैं। अनुसृजन के दौरान अनुवादक कभी अपनी ओर से कुछ जोड़ता है तो कभी मूल भाव की व्याख्या अपनी तरफ से करता है या कुछ छोड़ता है। इसका समर्थन करते हुए फिट्जेराल्ड ने कहा है-"ए लाइव स्पैरो इज बेटर दैन ए स्टफ्ड ईगल" (एक जिंदा गौरैया स्टफ किये गोध से बेहतर है)। स्वतंत्र अनुवाद के कुछ उदाहरण हैं-उमर खैयाम के रुबाइयात का फिट्जेराल्ड कृत अनुवाद, लाइट आफ एशिया का रामचंद्र शुक्ल कृत अनुवाद, व्यास महाभारत का एषुत्तच्छन कृत मलयालम अनुवाद। अनुवाद की स्वतंत्रता की सीमा कभी-कभी यहां तक बढ़ती है कि मूल रचना का पता ही नहीं लगता। हिन्दी में बिहारीलाल के अनेक दोहे इस तरह के हैं।

मूल कवि अपनी कविता के प्रति अतिशय ममता रखते हैं। उस पर गर्व भी करते हैं। दूसरे कवियों द्वारा अपनी रचनाओं के अनुवाद पर वे कभी खुशी जाहिर नहीं करते। ऐसे कवियों में जो मूलभाषा व लक्ष्यभाषा दोनों जानते हैं, वे अपनी कविताओं का अनुवाद स्वयं करते हैं। ऐसे अनुवाद में दूसरे अनुवादक के द्वारा अर्थ के अनर्थ होने का अंदेशा नहीं रहता। महाकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर ने अपनी बंगला कविताओं का स्वयं अनुवाद करके गीतांजलि अंग्रेजी में प्रस्तुत की थी। उस पर उन्हें नोबेल पुरस्कार प्राप्त हुआ। आजकल भारतीय भाषाओं के कई कवि अपनी रचनाओं का अनुवाद अंग्रेजी में करते हैं। अज्ञेय इसके उदाहरण हैं।

यद्यपि काव्यानुवाद में कई त्रुटियां संभव हैं तथा वह साहित्य-जगत में बदनाम हैं तथापि काव्यानुवाद की परंपरा बहुत पुरानी रही है। अगर काव्यों का अनुवाद न हुआ होता तो हम अनेक महान ग्रंथों से वंचित होते। योरपीय काव्यों में होमर का 'ईलियड', दांते का 'डिवाइन कॉमेडी', चॉसर का 'कैन्टरबरी टेल्स', फिरदौसी का 'शाहनामा', मिल्टन का 'पैरेडाइज लोट्स' आदि अनुवाद के जरिये संसार की अन्य भाषाओं में पहुंच हुई है। भारतीय काव्यों में वेद, रामायण, महाभारत, शकुंतला आदि काव्यों का अनुवाद अन्य भारतीय भाषाओं तथा विदेशी भाषाओं में किया गया है। इसलिए कविता के अनुवाद की उपादेयता स्पष्ट है। सिर्फ यही शर्त है कि उचित रूप से अनुवाद किया जाये।

उसके सिद्धांत इस तरह हैं-

1. *कवि या लेखक के मूल भावों की रक्षा होनी चाहिए।*
2. *शब्दों का प्रयोग भावों के अनुकूल होना चाहिए।*
3. *अपनी ओर से दृष्टांत जोड़े जाने चाहिए।*
4. *व्याख्याता शैली का उपयोग वर्जित है।*
5. *यदि शब्द अनुवाद न हो सके तो भावानुवाद का समावेश होना चाहिए।*

नाटक के अनुवादों का वर्णन

नाटक के अनुवाद की समस्याओं पर विचार करते हुए समीक्षक एक तरफ अनुवादक के सामने कई कसौटियां रखते जाते हैं। लेकिन दूसरी तरफ विभिन्न भाषाओं में नाटकों का अनुवाद बराबर होता आया है। एक ही नाटक का अनुवाद अनेक लोगों ने किया है। इसका कारण है-नाटक का अनुवाद करने में लोगों की बढ़ती रुचि।

नाटक के दो तत्व होते हैं-कथा तत्व तथा शिल्प तत्व। कथा का सांस्कृतिक परिवेश अनुवाद के लिए बड़ा महत्व रखता है। सांस्कृतिक परिवेश के अंतर्गत रूढ़ियां, आचार-विचार, पारिवारिक संबंध, संबोधन आदि होते हैं।

उदाहरण- ग्रीक भाषा के नाटकों का अनुवाद अगर हिन्दी में कर रहे हैं तो ग्रीस की रूढ़ियां, आचार-विचार, संबोधन आदि का भी अनुवाद हिन्दी में करना है। हिन्दी प्रदेश हेतु ये विदेशी तत्व जब परिचित ही नहीं, तब हिन्दी में इनके पर्यायवाची शब्द नहीं मिल सकते। ग्रीक नाटकों की बात और कठिन है क्योंकि पुरानी ग्रीक संस्कृति को आधुनिक शब्दों में प्रस्तुत करना मुश्किल है। शेक्सपियर के कई ऐतिहासिक नाटकों में अनुवाद में भी यही समस्या है। ईसाई समाज की धार्मिक एवं सांप्रदायिक रूढ़ियों, राजनीतिक तथा सामाजिक व्यवस्था आदि का सही चित्रण अनुवाद में लाना बड़ी चुनौती का काम है। इसी तरह भाषा के व्यक्तियों के नाम आदि का लिप्यंतरण अपनी-अपनी भाषा के अनुकूल करना भी मुश्किल होता है।

नाटक का विचार दो दृष्टियों से किया जाता है-(1) पाठ्य वस्तु, (2) मंचन की वस्तु। प्राचीन संस्कृत नाटक भी मंच के लिये ही लिखे जाते थे। हर नाटक की प्रस्तावना में सूत्रधार व नटी या विदूषक के संवाद से यह प्रस्तुत होता था। नाटकीय कला के नियमों की लंबी सूची भरत के नाट्यशास्त्र आदि ग्रंथों में मिलती है। जब संस्कृत के प्राचीन नाटक आधुनिक भाषाओं में अनूदित करने का प्रसंग आया तब अनुवादक की दृष्टि में उनके पद्य तथा गद्य का स्वरूप ही रहा। मंचन की बात नहीं उठती थी। जैसे लोग संस्कृत नाटकों के मंचन का आनंद ले सकते थे वैसे कुछ लोग अनुवाद का भी आनंद ले सकते थे। संस्कृत के छंदों का अनुवाद अपनी भाषा के छंदों में और गद्य का अनुवाद गद्य में होता आया है। संस्कृत नाटकों के अनुवाद की धूम मची थी। मंचन की दृष्टि से उनकी कमी पर लोग चिंतित नहीं थे। लेकिन सहृदय पाठक अनुवाद की सरसता और मूल के प्रति न्याय की चर्चा करते थे, क्योंकि बहुधा वे संस्कृत व देशभाषा दोनों के जानकार थे।

नाटक के अनुवाद में भाषा का तत्व बड़ा महत्वपूर्ण है। नाटक में जो गद्यात्मक संवाद है वही नाटक की जान है। हर भाषा के गद्य की वाक्य-संरचना, उसमें शब्दों पर बलाघात, खास मुहावरे आदि होते हैं। अनुवाद की भाषा में स्रोतभाषा का क्रम, बलाघात, मुहावरे आदि को शत-प्रतिशत लाना जरूरी नहीं है। लेकिन इनका निर्वाह न करने पर प्रभाव कम हो सकता है। पात्रों के अनुसार भाषा का निर्वाह एक और समस्या है। यदि नाटक ऐतिहासिक है तो प्राचीन युग के सांस्कृतिक परिवेश की भाषा होती है। उसका उसी के अनुकूल भाषा में अनुवाद करना पड़ता है। कभी-कभी वह लक्ष्यभाषा में अटपटा सा लग सकता है।

काव्य की तरह नाटक में भी शब्दों का विशेष प्रभाव परिलक्षित है। लक्षणा व्यंजना का व्यापार तो है ही। तीव्र संवेदना के बोधक शब्द नाटक में विशेष महत्व के हैं। इनके लिये उतने ही सशक्त शब्द लक्ष्य भाषा में चुनने की क्षमता अनुवादक में होनी चाहिए। जगह-जगह पर लक्ष्यभाषा के उचित मुहावरों से काम लेना पड़ता है।

ऐसी समस्या का थोड़ा-बहुत समाधान प्रविधियों के जानकार नाटककार कर सकते हैं। नाटककार का अनुवाद जब मंच के लिये किया जाता है तब अनुवादक कभी-कभी मंचीयन के अनुकूल कुछ परिवर्तन-परिवर्धन करने पर बाध्य होता है। अनूदित नाटकों के पाठक मूल भाषा के अनुसार कुछ विशेष प्रयोगों की आशा जरूर रखते हैं।

नाटकों का अनुवाद गद्य के अनुवाद की तरह आसान नहीं है। जिस तरह कविता का अनुवाद कवि ही कर सकता है उसी तरह नाटक का अनुवाद वही सरलतापूर्वक करता है जो स्वयं नाटक व मंच का मर्म जानता हो।

नाटकों के अनुवाद में रूपांतरण का प्रयोग कई लोगों ने किया है। जब विदेशी भाषाओं के नाटकों का अनुवाद का सवाल उठता है तब लक्ष्यभाषा के सामान्य पाठकों के लिए मूल रचना बिल्कुल अपरिचित लगती है। कथावस्तु रोचक भी होती है। ऐसी हालत में अनुवादक मूल नाटक के पात्र, स्थान आदि के नाम बदलता है। जगह-जगह रूपांतरण करता है। भारतेन्दु हरिशचंद्र ने शेक्सपियर के 'मर्चेन्ट ऑफ वेनिस' का अनुवाद 'दुर्लभ वस्तु' के रूप में किया। द्विजेंद्रलाल राय ने बंगला में मोलियेर के नाटक का रूपांतरण 'सूम के घर घूम' के नाम से किया।

रूपांतरण अच्छा तो है लेकिन यह एक सांस्कृतिक क्षेत्र की रचना का अन्य सांस्कृतिक क्षेत्र में प्रतिरोपण है। अगर वह कुशलता से न किया जाये तो असफल रहेगा।

उपसंहार में कहेंगे कि साधारण गद्य का अनुवाद तथा नाटक का अनुवाद समान प्रक्रिया नहीं है। अनुवादक की भाषा, चिंतन आदि की जिस नाटककार की भाषा, चिंतन आदि से मिलता है उसी को अनुवाद का प्रयत्न करना चाहिए।

उपन्यास एवं कहानी के अनुवाद

उपन्यास तथा कहानी के अनुवाद में विशेष ध्यान एवं प्रयत्न किया जाना चाहिए-क्योंकि एक तो इनकी शैलियां भिन्न-भिन्न होती हैं-

इनकी शैली कविता तथा नाटक से भिन्न होती हैं-गद्य की विधाओं की शैली भिन्न-भिन्न होती है।

उपन्यास तथा कहानी में अनेक पात्र होते हैं। उपन्यास में तो इनकी बहुलता होती है। कई बार इन की संख्या सैकड़ों तक हो जाती है। इनका कथानक विस्तृत होता है। अनेक घटनाओं तथा उपकथाओं का समावेश होता है। उपन्यासों का घटना काल भी दीर्घ होता है। उनकी रचना में अनेक समस्याओं का उल्लेख एवं समायोजन होता है, उनकी रचना के कुछ उद्देश्य होते हैं तथा मनोरंजकता उनका मुख्य तत्व होता है कहानी एवं उपन्यास के तत्व लगभग समान होते हैं अंतर यह है कि कहानी लघु आकार की होती है एवं उपन्यास दीर्घ आकार के होते हैं।

हिन्दी में बंगला, मराठी, तमिल, तेलगु इत्यादि उपन्यास के अनुवाद तो हुए ही हैं साथ ही विश्व की अनेक (विदेशी) भाषाओं के अनुवाद हुये हैं-बंगला के शरद चंद-विमल मित्र, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, बंकिमचंद्र इत्यादि के उपन्यास तथा कहानियों के अनुवाद हुये हैं इसी भांति अन्य भाषाओं के उपन्यास एवं कहानियों के अनुवाद हुये हैं-

कहानी तथा उपन्यास में कई पात्र होते हैं। उनमें नागरिक व ग्रामीण होते हैं, स्त्री-पुरुष आते हैं-भिन्न-भिन्न प्रकृति के लोग आते हैं-अलग-अलग धर्म के स्त्री-पुरुष आते हैं। इनके अंतर को कथाकार संवाद के अंतर में स्पष्ट करते हैं। उसमें शैली का अंतर भी शामिल है। इसी तरह कथा-वर्णन के बीच नाटकीय संवाद आते हैं तो उनकी शैली नाटकीय रहती है।

साहित्य-विधाओं को शैलीगत अंतर के अतिरिक्त लेखकों की अपनी शैली का अंतर होता है। अंग्रेजी में एक प्रसिद्ध कथन है-Style is the man अर्थात् मानव की पहचान उसकी शैली में होती है। दो कवि या कथाकार एक ही भाषा लिखते हैं, जिसका व्याकरण भी एक ही रहता है।

परंतु हर की शैली भिन्न-भिन्न रहती है। अनुवाद विज्ञान के विद्वान डॉ. भोलानाथ तिवारी निम्न शब्दों में इसी बात को उदाहरण से स्पष्ट करते हैं-

उदाहरण के लिये, जयशंकर प्रसाद का अनुवाद, प्रेमचंद का अनुवाद तथा महात्मा गांधी का अनुवाद, चाहे किसी भी भाषा में क्यों न किया जाये, एक शैली में नहीं किया जाना चाहिए। सफल अनुवादक उसे माना जायेगा जो अनुवाद में भी उच्च सांस्कृतिक शब्दावली-युक्त काव्यात्मक शैली का पुट प्रसाद के अनुवाद में दे सके, महात्मा गांधी के अनुवाद में हिन्दुस्तानी शैली का सीधापन झलका सके तथा प्रेमचंद के अनुवाद को इन दोनों के बीच में इस तरह रख सके कि साहित्यिकता के पुट के साथ-साथ उसमें मुहावरेदार सरल शैली का प्रसादत्व भी हो।

शैली कई तत्वों का सामूहिक रूप है। इसलिये शैली के अनुवाद की समस्या का विश्लेषण कुछ शीर्षकों के अधीन करना सुविधाजनक होगा।

1. *चयन की समस्या-शब्दस्तर, ध्वनिस्तर, कथ्यस्तर तथा रूपस्तर पर।*
2. *विचलन की समस्या-शब्द-स्तर, पद-स्तर और वाक्य-स्तर पर।*
3. *अप्रस्तुत योजना के संदर्भ की समस्या आदि।*

मूल रचनाकार अपने परिवेश, मानसिकता, भाषा-प्रियता आदि से जुड़ा रहता है। उसी प्रभाव से वह शब्द, ध्वनि, कथ्य तथा रूप के चयन में अपनी रुचि या शैली गढ़ता है। यों चयन करने के खास कारण रहते हैं। उन्हें समझकर तदनुसार खास शब्दों, ध्वनियों आदि का प्रयोग करना अच्छे अनुवादक का कर्तव्य है। यदि उनके समांतर रूप लक्ष्यभाषा में अनुवादक ढूंढ़ नहीं पाता तो वह असफल होना है।

अलंकार-योजना में उपमान या अप्रस्तुत का विधान होता है। कभी भी बिम्बों का विधान किया जाता है। मूल लेखक की संस्कृति, अनुभव आदि से जिस अप्रस्तुत का विधान होता है वह अनुवादक की भाषा की संस्कृति के लिए अपरिचित रह सकता है। तब अनुवाद कठिन होता है। ऐसी हालत में मूल अप्रस्तुत का शब्दानुवाद लक्ष्यभाषा में निरर्थक लगता है।

मूल लेखक की शैली तथा अनुवादक की शैली की चर्चा करते हुये हमें भिन्न-भिन्न घरानों के गायकों की प्रणाली याद आ सकती है। जो बेला यानी वायलिन पर इन गायकों की संगति करता है उसे अपने मुख्य गायक कलाकार की पद्धति या शैली में ही उसका गाया हुआ अंश दुहराना पड़ता है। गायक अपने घराने की प्रणाली में गाने की आजादी रखता है। लेकिन वायलिन-वादक को भिन्न-भिन्न घरानों की शैली पर बारी-बारी से बजाना पड़ता है। यों अनुवादक को भी विभिन्न शैलियों के लेखकों की रचनाओं का अनुवाद उनके अनुकूल विभिन्न शैलियों में करने का अभ्यास पाना चाहिए।

विभिन्न विषयक सामग्री और विभिन्न लेखकों के लेखन की शैली की कुछ सामान्य प्रवृत्तियां ही बताई जा सकती हैं। एक हद के बाद शैली गूंगे के गुड़ जैसी है, सिर्फ अनुभव की जा सकती है। मोटे तौर पर हम कुछ बताने की कोशिश करेंगे।

(क) विज्ञान, तकनालॉजी

(अ) *उच्च स्तरीय व सैद्धांतिक तथ्य प्रधानता, व्यर्थ शब्दों से बचाव, तकनीकी और अतएव तत्सम शब्दों की भरमार तथा सपाट शैली।*

(आ) *लोकप्रिय तथ्य प्रधानता के साथ व अर्ध तकनीकी शब्दों का भी प्रयोग-कुछ रोचक शैली।*

प्रशासन- सूचना प्रधानता, निर्वैक्तिकता तकनीकी शब्दों का अतिरेक। खास वाक्यांशों की आवृत्ति, कर्मवाच्य की संरचना की अधिकता-नीरस शैली।

समाचार-पत्र- सूचना-प्रधानता, लोकप्रिय शब्दों तथा प्रयोगों की अधिकता, चमत्कार-रोचक शैली।

(ख) साहित्य-

(अ) *काव्य-कल्पना प्रधानता, अलंकारों-बिम्बों का प्रयोग, अनुप्रास या ताल-लय के अनुकूल रचना, (प्रत्येक कवि के बाद और व्यक्तित्व के अनुसार शैली बदलती है।)*

(आ) *कथा साहित्य व नाटक-कल्पना प्रधानता, नागरिकता, आंचलिकता, संवादों में नाटकीयता-रोचक शैली।*

(इ) *ललित निबंध-कल्पना प्रधानता, काव्यमय शब्दों की रोचक शैली।*

(ई) *हास साहित्य-व्यंग्य प्रधानता, संक्षिप्तता-रोचक शैली।*

यों अन्य साहित्य-विधाओं के लिये भी शैली का सामान्य स्वरूप बताया जा सकता है। हर साहित्यकार की शैली का निर्धारण अलग से किया जा सकता है। इसके लिये इसके प्रयुक्त शब्द वाक्यांश, विशेष प्रयोग, वाक्य की रचना शैली आदि सहायक हो सकते हैं।

सारानुवाद

एक भाषा से दूसरी भाषा में किसी विधा या साहित्य के अंश का रूपांतरण अनुवाद कहलाता है। उसके कई भेद हैं। कभी-कभी ऐसा अवसर आता है जब शब्दश: अनुवाद नहीं हो पाता या ऐसी अवस्था आती है जब किसी वक्ता का जीवित तुरंत अनुवाद करना होता है। आशुकवि अपनी कल्पना द्वारा तुरंत रचना करता है। उसी तरह आशु अनुवाद होता है वक्ता अपना भाषण देता रहता है तथा दुभाषिया उसका अनुवाद तुरंत श्रोताओं के सम्मुख करता रहता है। अगर कोई अन्य भाषा भाषी-मान लीजिये-बंगला भाषा भाषी जिसे हिन्दी नहीं आती या अंग्रेज, जर्मन, रूसी व्यक्ति भारत में अपना भाषण देता है तो अनुवादक जनता के सम्मुख उसका अनुवाद करता है। ऐसी अवस्था में शब्दश: अनुवाद नहीं हो पाता। कई बार वह उसका सार अनुवादित कर देता है। इसे सारानुवाद कहते हैं। एक अन्य अवस्था में व्यक्ति भावानुवाद या सारानुवाद करता है। अत: भावानुवाद भी सारानुवाद का एक दूसरा रूप है। इस सारानुवाद में मूल भावों की रक्षा होती है। यह एक कठिन कार्य है। कई बार कई ऐसे मुहावरे, लोकोक्ति एवं कहावतें सूत्र वाक्य इत्यादि होते हैं जिनका अनुवाद अत्यंत कठिन हो जाता है। उसका मूल भाव बदल जाता है। इन मुहावरों इत्यादि की प्रवृत्ति दूसरी भाषा में नहीं होती है। जैसे अंग्रेजी के मुहावरे गो टु हेल या थ्रो टु डायस एंड केट्स के अनुवाद करने में मूल भाव की रक्षा नहीं होती। हिन्दी में मुहावरा है दिलबाग बाग हो गया अब अगर यह अनुवाद अंग्रेजी में करें कि माई हार्ट बिकेन गार्डन एंड गार्डन तो यह एक विसंगतिपूर्ण स्थिति हो जायेगी। वैसे ही झगड़े की जड़ का अंग्रेजी अनुवाद है Apple of discord या फूलों की सेज-Bed of roses इत्यादि होते हैं। इस समय अनुवादक का ज्ञान एवं प्रत्युत्पन्न गति ही काम देती है। अत: सारानुवाद में इन तथ्यों का ज्ञान रखना पड़ता है। अनुवादक को अत्यंत सजक तथा सावधान रहना पड़ता है। उसके पास इतना अधिक समय नहीं रहता कि सोच समझकर या शब्दकोश देखकर अनुवाद कर सके अत: सारानुवाद में अनेक कठिनाइयां उपस्थित हो जाती हैं।

भावानुवाद सारानुवाद का दूसरा रूप है। ऐसी अवस्था में अनुवादक के पास पर्याप्त समय होता है। वह सोच विचारकर शब्दकोश देखकर इस तरह का भावानुवाद या सारानुवाद करने में

सक्षम होता है अतः उसमें इतनी ज्यादा कठिनाइयां नहीं उत्पन्न होती जितनी तुरंत अनुवाद में करने में होती है।

दुभाषिया

सामान्यतः दुभाषिया तथा अनुवादक एक ही होते हैं। दुभाषिये अनुवाद भी करते हैं पर कभी-कभी ऐसी स्थिति हो जाती है जब व्यक्ति को आशु अनुवाद या तुरंत अनुवाद करना होता है। ऐसा प्रायः तब होता है जब एक भाषा भाषी दूसरी भाषा भाषियों के सामने व्याख्यान देता है पर उसे दूसरे भाषा भाषियों या श्रोताओं की भाषा का ज्ञान नहीं होता। ऐसी स्थिति में वह अपना व्याख्यान देता है तथा एक दोनों भाषाओं का ज्ञाता उस भाषण या व्याख्यान का अनुवाद करता चलता है। ऐसे व्यक्ति को दुभाषिया कहते हैं।

एक अन्य दशा और होती है जब कोई विदेशी नेता या व्यक्ति दूसरे देश में जाकर वहां किसी कल कारखाने को देखता है वहां के लोगों से मिलता है तो दुभाषिया उन लोगों का माध्यम बन कर उसकी भाषा का अनुवाद करता रहता है तथा बातचीत का माध्यम बन जाता है या कोई व्यक्ति शोधार्थी होकर अन्य कार्य से अन्य भाषा भाषियों से वार्तालाप करना चाहता है पर दूसरी भाषा का ज्ञान न होने से वह असमर्थ होता है। उस समय दुभाषिया उनकी सहायता करता है तथा दोनों व्यक्तियों के वाक्य या कथनों को अनुवाद बोलता हुआ उनकी बातचीत को संपन्न करता है।

एक अच्छे अनुवादक एवं दुभाषिये में निम्न गुण होने चाहिये-

1. *एक अच्छे अनुवादक को स्रोत-भाषा तथा लक्ष्य-भाषा दोनों का अच्छा ज्ञान होना चाहिए। उसे स्रोत भाषा की प्रकृति तथा परिवेश एवं उनकी सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से पूर्णतः परिचित होना चाहिए।*

2. *एक अच्छे अनुवादक की अभिव्यक्ति, सुबोध, प्रांजल, भावपूर्ण तथा प्रवाहमयी होनी चाहिए।*

3. *उसमें स्रोत भाषा में कथित अभिव्यक्ति को त्यों की त्यों लक्ष्य भाषा में प्रस्तुत करने की योग्यता, दक्षता तथा प्रतिभा होनी चाहिए। उसे मूल भावों की रक्षा करने में सक्षम होना चाहिए।*

4. *अच्छे अनुवादक को यह प्रयास करना चाहिए कि मूल रचना की शैली सुरक्षित रहे। अनुवाद की भाषा या लक्ष्य भाषा यथासंभव स्रोत भाषा की प्रकृति के अनुरूप होनी चाहिए।*

5. *उसे स्रोत भाषा तथा लक्ष्य भाषा दोनों की संरचना का पूर्ण व्यावहारिक ज्ञान होना चाहिए।*

6. *चूंकि दुभाषिये के पास अधिक सोचने का समय नहीं होता इसलिये उसे प्रत्युत्पन्नमति का होना चाहिये जो अवसर के अनुकूल अनुवाद कर सके।*

7. *एक दुभाषिये को बहुत अधिक चौकन्ना तथा सजग होना चाहिए अन्यथा अर्थ का अनर्थ हो सकता है।*

8. *एक दुभाषिये को ज्ञान बहुत ज्यादा होना चाहिए ताकि वह कठिन मुहावरों इत्यादि को समझकर उनका अनुवाद कर सके।*

9. *एक दुभाषिये को स्थिर मति एवं दृढ़ विश्वासी होना चाहिए ताकि वह विकट अवस्था में धैर्य संयमित होकर अपना कार्य कर सके।*

इकाई-पाँच

वैचारिक अथवा ज्ञान-प्रधान साहित्य

आज का युग प्रधानतया वैज्ञानिक युग है, इसलिए आज वैज्ञानिक क्षेत्र में निरन्तर अध्ययन, अनुसन्धान, चिन्तन और लेखन हो रहा है । इसी के फलस्वरूप अंग्रेजी और विश्व की अन्य प्रगतिशील भाषाओं में प्रचुर मात्रा में ज्ञान-प्रधान साहित्य रचा जा रहा है । इस साहित्य को हिन्दी में अनूदित करते समय अनुवादक के समक्ष अनेक समस्याएं आती हैं, उनका संक्षेप में विवरण निम्न प्रकार है-

1. **ज्ञानात्मक साहित्य (मौलिक अथवा अनूदित) का अभाव-** ज्ञानात्मक साहित्य मानव सभ्यता के इतिवृत्त का अभिन्न अंग है और चूँकि ज्ञान-विज्ञान की अभिवृद्धि संचित अनुभवों की भूमिका पर होती है, अत: वह स्वयं विज्ञान के भी अध्ययन का मूलभूत तत्त्व है । इसी नाते ज्ञान-प्रधान साहित्य की विशेष महत्ता होती है ।

डॉ. दौलतसिंह कोठारी के शब्दों में 'इस समय प्राय: प्रति वर्ष लगभग दस लाख वैज्ञानिक एवं तकनीकी निबन्ध और पचास हजार पुस्तकें, उतने ही प्रतिवेदन प्रकाशित होते हैं और अनुसन्धान के परिणामों के सम्प्रेषण तथा वैज्ञानिक ज्ञान के आदान-प्रदान की दो सबसे अधिक व्यापक भाषाएं हैं-अंग्रेजी और रूसी । वैज्ञानिक साहित्य का पचास प्रतिशत भाग अंग्रेजी में प्रकाशित होता है । इस प्रचुर परिमाण की तुलना में अनूदित ज्ञानात्मक साहित्य का परिमाण नगण्य ही है । इसी अभाव के कारण हिन्दी में वैज्ञानिक चिन्तन तथा लेखन की परम्परा स्थापित नहीं हो सकी है और यह ज्ञान-प्रधान साहित्य के अनुवाद की प्रथम और प्रधान बाधा है ।'

2. **उचित परिप्रेक्ष्य का अभाव-** ज्ञान-प्रधान साहित्य के निर्माण का प्रश्न देश के राजनीतिक, सामाजिक तथा बौद्धिक उत्कर्ष के साथ जुड़ा है । इसे राष्ट्रीयता और भाषाओं के प्रश्न के साथ जोड़कर देखा जाना चाहिए । जब तक इस दृष्टि का उन्मेष नहीं होगा, उसकी वांछित श्रीवृद्धि नहीं होगी (खेद है कि हमारे देश में अभी सरकारी अथवा गैर-सरकारी किसी भी क्षेत्र में इस दृष्टिकोण का विकास नहीं हो पाया है) ।

3. **अनुवाद के लिए पुस्तकों का चयन-** स्वाधीनता के उपरान्त हिन्दी में अनूदित ज्ञानात्मक ग्रन्थों की सूची पर दृष्टि डालते ही यह स्पष्ट हो जाता है कि उनमें पाठ्य-पुस्तकों और छात्रोपयोगी ग्रन्थों की भरमार है । इस प्रकार की पुस्तकों का प्रकाशन व्यावसायिक दृष्टि से उपयोगी होता है क्योंकि उनकी बिक्री सुनिश्चित होती है । इन पुस्तकों के अनुवाद और प्रचार की उपयोगिता को तो अस्वीकार नहीं किया जा सकता, किन्तु हिन्दी में केवल उन्हीं की भरमार अवश्य शोचनीय है (यह भी इतना ही आवश्यक है कि ज्ञान-प्रधान गौरव-ग्रन्थों को अविलम्ब अधिक-से-अधिक संख्या में अनूदित किया जाए । इस प्रकार के ग्रन्थ प्राचीन होकर भी चिन्तन की प्रगति-यात्रा के प्रधान सीमा-सोपान होते हैं । इसलिए उनका सार्वकालिक महत्त्व होता है और इन रचनाओं के प्रामाणिक अनुवादों के अभाव में किसी भाषा को सचमुच सम्पन्न नहीं माना जा सकता है ।

4. **स्वत्वाधिकार अथवा अनुवाद-अधिकार की समस्या-** अंग्रेजी तथा अन्य भाषाओं में प्रकाशित गौरव-ग्रन्थों के प्रकाशन-अधिकार सुरक्षित हैं । वे नहीं चाहते कि अन्य प्रकाशक उन ग्रन्थों को यथावत अथवा भाषाभेद से प्रकाशित कर दें । इससे उनको व्यावसायिक क्षति होती है । इसलिए विशेष गौरव-ग्रन्थों के अनुवाद की आवश्यकता का अनुभव पूरी गम्भीरता से किये जाने पर भी सरकारी, गैर-सरकारी अभिकरण, अपनी इच्छा से उन ग्रन्थों का अनुवाद नहीं करा पाते हैं । अब सरकार द्वारा इस दिशा में कुछ ऐसे कदम उठाये गये हैं जिनसे अपेक्षित गौरव-ग्रन्थों का

प्रकाशनाधिकार प्राप्त किया जा सकेगा और उनके अनुवाद हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में किये जा सकेंगे।

5. **वैज्ञानिक लेखन-परम्परा का अभाव-** जब से हिन्दी वाङ्मय में व्यापक रूप से प्रयुक्त होने लगी है, तभी से देश की ऐतिहासिक, राजनीतिक, सामाजिक आदि परिस्थितियाँ ऐसी रही हैं कि विविध विज्ञानों तथा विधाओं को कभी प्रोत्साहन नहीं मिल सका। इस दुर्दैवग्रस्त भाषा के लिए परिस्थितियाँ किसी भी दिशा में और किसी भी स्तर पर अनुकूल नहीं रही हैं। ज्ञान के साहित्य के सन्दर्भ में तो यह स्थिति और भी चिन्तनीय है। इसलिए हिन्दी में वैज्ञानिक लेखन-परम्परा का अभाव बना रहा है।

6. **शास्त्रीय भाषा के निश्चित स्वरूप का अभाव-** ज्ञान-प्रधान साहित्य का विज्ञानविद् लेखक, अनुवाद की भाषा के स्तर पर एक हीनता-ग्रन्थ से ग्रस्त होता है और इस आशंका से कि कहीं कोई यह न सोचे कि उसे हिन्दी नहीं आती, जाने-अनजाने में संस्कृत शब्दावली की शरण में चला जाता है। वह संस्कृतनिष्ठ हिन्दी को अच्छी हिन्दी का पर्याय मान बैठता है। वह हिन्दी की प्रकृति को संस्कृत के बोझ से दबाकर उसे पंगु बना देता है। उसके द्वारा प्रयुक्त शब्द, शब्द-समुच्चय और अभिव्यंजनाएं जिस साँचे में ढलती हैं, वह निश्चय ही हिन्दी का साँचा नहीं होता है। वैज्ञानिक धरातल पर हमारा पिछड़ापन भी हमारी भाषा के शास्त्रीय रूप के विकास में बाधक रहा है।

7. **प्रतीकों और संकेतों के अनुवाद की समस्या-** वैज्ञानिक साहित्य में प्रतीकों और संकेतों का प्रयोग बहुत अधिक किया जाता है। वैज्ञानिक समीकरणों, सूत्रों आदि में अनेक प्रकार के प्रतीक काम में लाये जाते हैं। अंग्रेजी के अपने अथवा अंग्रेजी में प्रयुक्त अन्य भाषा-वैज्ञानिक प्रतीकों और संकेतों की संख्या बहुत अधिक है। इस साहित्य को हिन्दी में अनूदित करते समय ये प्रतीक बाधा बनकर सामने आते हैं। इनका अनुवाद न किये जाने पर भाषा अंग्रेजी के प्रभाव से आक्रान्त हो जाती है। यदि इनका हिन्दी में अनुवाद कर दिया जाता है तो हिन्दी का वह प्रति प्रतीक अप्रचलित और नया होने के कारण इस साहित्य के पठन-पाठन में बाधक हो जाता है। इस समस्या के विभिन्न पहलुओं पर विचार करके शिक्षा-मन्त्रालय ने यह निर्देश दिया है कि वैज्ञानिक प्रतीकों और संकेतों का हिन्दी में भी यथावत् प्रयोग किया जाना चाहिए।

8. **सन्दर्भ-ग्रन्थों का अभाव-** वैज्ञानिक ग्रन्थों के अनुवादक को किसी एक विषय के ग्रन्थ का अनुवाद करते समय ऐसे अनेक सन्दर्भों का भी सामना करना पड़ा है जिनका सम्बन्ध उसी विषय-विशेष के साथ न होकर अन्य सम्बद्ध विषयों के साथ होता है। इससे यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि वह उन सभी विषयों में पारंगत हो। ऐसी स्थिति में वह अपना कार्य सुगमतापूर्वक तभी कर सकता है जब कि उसे ऐसे सन्दर्भ-ग्रन्थ सुलभ हों जो उक्त प्रसंगों में सहायक हो सकते हैं। हिन्दी में अभी इस प्रकार के सन्दर्भ-ग्रन्थों का अभाव है। इसलिए हमारे अनुवाद प्रामाणिक नहीं हो पा रहे हैं।

9. **पारिभाषिक शब्दावली का अभाव और उसकी अनेकरूपता-** पारिभाषिक शब्दावली वैज्ञानिक साहित्य की आधारशिला होती है। वस्तुत: सम्पूर्ण वैज्ञानिक चिन्तन और लेखन उसी पर आधारित होता है। इसलिए सभी विकसित भाषाएं यह प्रयत्न करती हैं कि उनका पारिभाषिक शब्द-भण्डार अधिक-से-अधिक समृद्ध और अधुनातन (अप-टू-डेट) हो। इससे उन भाषाओं में वैज्ञानिक साहित्य के संवर्द्धन को बल मिलता है। भारत के स्वाधीन होने पर यह समस्या हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं के समक्ष भी उपस्थित हुई। प्रश्न यह था कि क्या अन्तर्राष्ट्रीय अथवा अंग्रेजी शब्दावली को-जो स्वाधीनता-प्राप्ति के समय भारत में प्रचलित थी-वैज्ञानिक कार्य-साधन के लिए ज्यों-का-त्यों ग्रहण कर लिया जाए या समस्त पारिभाषिक शब्दों के भारतीय पर्याय स्थिर किये जायें या यह प्रयत्न किया जाये कि आवश्यकतानुसार अधिक प्रचलित शब्दों को अंग्रेजी से

ज्यों-का-त्यों ले लिया जाए और शेष संकल्पनामूलक पारिभाषिक शब्दों के भारतीय पर्याय निर्धारित कर दिये जायें। भारत सरकार के शिक्षा-मन्त्रालय ने यह कार्य अपने हाथ में लिया। आरम्भ में यह निश्चय किया गया कि निश्चित किये जाने वाले भारतीय पारिभाषिक शब्द सभी भारतीय भाषाओं में यथावत् ग्रहण किये जायेंगे, किन्तु आगे चलकर विभिन्न भारतीय भाषाओं में अपने-अपने ढंग से पारिभाषिक शब्द निर्धारित किये जाने लगे। हिन्दी की जो पारिभाषिक शब्दावली तैयार की जा चुकी है उसका स्तर स्नातक-स्तर का है। इसका आशय यह हुआ कि अभी हमारे पास बहुत ही कम पारिभाषिक शब्द हैं। उच्चतर विचारों का भार वहन करने में समर्थ भारतीय शब्दावली के निर्धारण का कार्य अभी शेष है।

पारिभाषिक शब्दावली के क्षेत्र में एक चिन्ताजनक बात है : शब्दों की अनेकरूपता। पारिभाषिक शब्द-निर्धारण का कार्य विभिन्न राज्यों और केन्द्रीय सरकार द्वारा स्वतन्त्र रूप से किया जा रहा है। अनेक अवसरों पर यह कार्य गैर-सरकारी क्षेत्र के लेखक और प्रकाशक भी अपने-अपने ढंग से कर रहे हैं। इसी के परिणामस्वरूप प्राय: एक ही पारिभाषिक शब्द के एक से अधिक हिन्दी पर्याय सामने आते हैं। इस सम्पूर्ण कार्य में समन्वय न होने से वे सभी पर्याय प्रयुक्त हो रहे हैं। इससे वैज्ञानिक साहित्य के लेखन और अनुवाद का कार्य भी अपेक्षित गति से नहीं हो पा रहा है।

10. **अनुवादकों का अभाव-** वैज्ञानिक साहित्य के अनुवादकों का अभाव एक गम्भीर समस्या है। वैज्ञानिक साहित्य के अनुवादक से यह अपेक्षित है कि वह विषयविद् भी हो और भाषाविद् भी। आज हमारे देश में वैज्ञानिक चिन्तकों और लेखकों की जो वरिष्ठ पीढ़ी है, उनके अध्ययन तथा अनुसन्धान का माध्यम अंग्रेजी भाषा रही है। इसलिए वे अपने भावों को जितनी सुगमता और प्रभावी रीति से अंग्रेजी में व्यक्त कर सकते हैं उतनी सुविधा से हिन्दी में नहीं कर सकते। अनुवाद-कार्य में उनके सहयोग से वंचित रहा नहीं जा सकता। अत: वैज्ञानिक साहित्य के अनुवाद में अब प्राय: सहयोगपरक अनुवाद की पद्धति अपनाई जाती है। इस पद्धति में विषयवेत्ता और भाषावेत्ता मिलकर अनुवाद करते हैं। यहाँ भी दो प्रश्न उपस्थित होते हैं-(1) क्या विषयविद् अनुवाद करे और भाषाविद् उसका सुधार-परिष्कार करे ? (2) अनुवाद भाषाविद् द्वारा किया जाये और उसका संशोधन अथवा पुनरीक्षण विषयविद् द्वारा किया जाये। इस सम्बन्ध में अधिक वांछनीय मार्ग यह है कि पहला विकल्प अपनाया जाये। इस विकल्प के हल सन्तोषप्रद रहे हैं। इसलिए अब अधिकतर अनुवाद-अभिकरण इसी पद्धति से काम ले रहे हैं।

11. **लोकहित-भावना का अभाव-** वैसे तो सम्पूर्ण साहित्य-सृजन-भले ही वह कितना भी स्वान्त सुखाय क्यों न हो ? किसी-न-किसी अंश तक लोकहित भावना से अनुप्राणित होता है, किन्तु अनुवाद के सन्दर्भ में तो यह बात और भी अधिक सत्य है। अनुवादक अपने लिए नहीं, ऐसे लोगों के लिए अनुवाद करता है जो उन दो भाषाओं में से केवल एक जानते हैं जिन पर उसे अधिकार प्राप्त है। इसलिए उसका कार्य तब तक फलीभूत नहीं हो सकता जब तक कि वह लोकहित भावना से अपने इस दायित्व का निर्वाह न करे। खेद की बात है कि स्वाधीनता के उपरान्त साहित्य के क्षेत्र में लोकहित की भावना का स्थान व्यावसायिकता लेती जा रही है। साहित्य संवर्द्धन की दृष्टि से यह बहुत ही अशुभ लक्षण है। कटु होकर भी यह कथन असत्य नहीं है कि स्वाधीनता पूर्व का हिन्दी लेखक हिन्दी-सेवी था, आज का हिन्दी लेखक हिन्दी-जीवी हो गया है।

12. **संगठन और समन्वय का अभाव-** ज्ञान-प्रधान साहित्य वस्तुत: उपयोगी साहित्य होता है। उसका प्रणयन और प्रचार ऐसे संगठित और समन्वित ढंग से किया जाना चाहिए जिससे हिन्दी भाषा-भाषी समाज समग्रत: लाभान्वित हो सके। इस दृष्टि से हिन्दी के वैज्ञानिक साहित्य के क्षेत्र में निराशा ही अधिक पाई जाती है। इतना ही नहीं कि सरकार तथा गैर-सरकारी कार्य के बीच कोई

तालमेल नहीं है बल्कि स्वयं सरकारी कार्य में भी आयोजन, संगठन और समन्वय का अभाव है। इन्हीं कारणों से हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य का अनुवाद अपेक्षित गति से नहीं हो पा रहा है।

वाणिज्य एवं बैंक साहित्य के अनुवाद

गत बीस-पच्चीस वर्षों में अर्थशास्त्र, वाणिज्य और बैंकिंग के क्षेत्रों का भारी विस्तार हुआ है। अब व्यक्ति और समाज ही नहीं बल्कि प्रत्येक देश की सरकार के कार्यकलाप का भी एक बड़ा हिस्सा अर्थजगत से ताल्लुक रखता है। इसके अलावा, परिवहन के साधन जैसे-जैसे द्रुत तथा कुशल होते जाते हैं, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय वाणिज्य का वैविध्य और परिमाण बढ़ता जाता है। बैंकिंग तो वाणिज्य का अनुगामी है ही।

उपर्युक्त तीनों क्षेत्रों के विस्तार के साथ-साथ उनसे सम्बद्ध साहित्य में भी वृद्धि हुई है। केवल सामयिक साहित्य की ही बात लें तो पिछले कुछ ही वर्षों में हमारे यहाँ इन विषयों की अनेक मासिक और त्रैमासिक पत्रिकाएं तथा कई दैनिक-पत्र तक प्रकाशित होने लगे हैं। कुछ के तो बहुभाषी संस्करण निकालने के प्रयास भी कियें गये हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि इन विषयों का प्रचुर साहित्य प्रकाशित हो रहा है।

आगे के पृष्ठों में, अनुवाद की दृष्टि से अर्थशास्त्र, वाणिज्य और बैंकिंग विषयक सामग्री के अनुवाद की विशेषताओं, कठिनाइयों और उनके समाधान की चर्चा की जायेगी।

अर्थशास्त्र और वाणिज्य- अनुवाद के दो मुख्य पहलू हैं-पारिभाषिक शब्दावली और सुगठित तथा सहज वाक्य-रचना। जहाँ तक अर्थशास्त्रीय और वाणिज्य विषयक साहित्य के अनुवाद का प्रश्न है, पारिभाषिक शब्दावली की दृष्टि से हम काफी समृद्ध हैं। संस्कृत साहित्य में शुक्रनीति, मनुस्मृति, कौटिल्य के अर्थशास्त्र आदि ग्रन्थों में आर्थिक विषयों पर गहराई से विचार किया गया है। इन ग्रन्थों के अवगाहन से ज्ञात होता है कि संस्कृत में एक प्रामाणिक आर्थिक शब्दावली विद्यमान थी। कहा तो यह भी जाता है कि अथर्ववेद नाम से एक उपवेद भी था, पर खेद है कि यह उपलब्ध नहीं है। बहरहाल, उपलब्ध साहित्य में राजस्व, कृषि-कर्म, मुद्राओं के टंकण, अर्थदण्ड, राजकोष आदि के अनेक पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग मिलता है।

आपको जानकर आश्चर्य होगा कि हमारे प्राचीन अर्थशास्त्रियों को price, cost और value का अन्तर स्पष्ट था। इनके लिए वे क्रमशः 'मूल्य', 'व्यय' और 'अर्थ' का प्रयोग करते थे। इसी प्रकार, वे wealth के लिए 'धन', goods के लिए 'द्रव्य' earnings के लिए 'वित्त' और property के लिए 'स्वापतेय' शब्दों का इस्तेमाल करते थे। वृद्धि (ब्याज) के विविध प्रकारों के लिए चक्रवृद्धि, कालिक वृद्धि, कायिक वृद्धि, शिखावृद्धि आदि पारिभाषिक शब्द प्रचलन में थे।

इनमें से अनेक शब्द अब प्रयोग में नहीं हैं; जैसे-स्वापतेय, हिरण्य, शिखावृद्धि आदि, फिर भी, संस्कृत साहित्य से हमें सैकड़ों पारिभाषिक शब्द विरासत में मिले हैं।

आगे चलकर मुगल शासन और मारवाड़ी समाज ने बहुत-से शब्द अर्थशास्त्र और विशेषकर वाणिज्य को दिये। ज्यादातर महाजनी, बहीखाता, राजस्व और बाजार-विश्लेषण से सम्बन्धित ये शब्द लम्बे समय से वाणिज्य के क्षेत्र में प्रचलन में हैं और इनके अर्थ निश्चित हो चुके हैं। उदाहरण के लिए, खाता (ledger), जमा (deposit), नामे (debit), जोखिम (risk), उठाव (offtake), उछाला (spurt), जब्ती (forfeiture), महसूल (impost), देवाला (bankruptcy), सौदा (bargain), पत्ती (share in partnership) आदि। यही नहीं, परम्परागत किस्म के दैनन्दिन वाणिज्यिक व्यवहारों के लिए भाषा का मुहावरा भी रूढ़ हो गया है। उदाहरणार्थ, 'अपना पड़ता नहीं खाता' (not profitable to us), 'दिवाला पिट गया' (declared bankrupt), 'चाँदी लुढ़की' (silver prices crashed), 'दलाली खाना' (to earn brokerage), 'हुण्डी करना' (to

draw a hundi), साख गिरना (loss to credit), बट्टे खाते लिखना (to write off) आदि। ऐसी मुहावरेदार भाषा के प्रयोग से अनुवादक अपने अनुवाद को मूल जैसा प्राणवान बना सकता है।

स्वतन्त्रता के बाद से सभी विषयों में हिन्दी के अधिकाधिक प्रयोग के प्रयास किये गये हैं। इसके फलस्वरूप अर्थशास्त्र और वाणिज्य में भी अनेक पारिभाषिक शब्दों का मानकीकरण हो गया है और कुशल अनुवादक के लिए इनकी जानकारी और प्रयोग का अभ्यास होना आवश्यक है। ऐसे प्रामाणिक शब्दों के कुछ उदाहरण हैं, उपक्रम (undertaking), निगम (corporation), निवेश (investment), परिव्यय (outlay), निविदा (tender), परियोजना (project), प्रतिफल (return), सम्भाव्य (potential) आदि।

कुछ शब्द अंग्रेजी और अन्य विदेशी भाषाओं के भी हैं। वे इतने प्रचलन में आ गये हैं कि उनका लिप्यन्तरण करना ही उचित है; यथा-रायल्टी, पॉलिसी, टैरिफ, बोनस, शेयर, डिबेंचर, कमीशन, बजट आदि। इन शब्दों की सहायता से कुछ संकर शब्द भी बनाये गये हैं जो खूब चल पड़े हैं और अनुवाद में इनका प्रयोग किया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए गारण्टीशुदा, रजिस्ट्रीकृत, शेयर धारक, चेककर्त्ता आदि।

लेकिन शब्द-भण्डार उपलब्ध होने से ही अनुवादक की सभी समस्याएं दूर नहीं हो जातीं। उसकी मुख्य कठिनाइयाँ निम्न हैं-

1. *कई पर्यायों में से सबसे उपयुक्त पर्याय का चयन,*
2. *कोई पर्याय उपलब्ध न होने पर नये पर्याय का निर्माण,*
3. *संक्षिप्तियों का रूपान्तर या लिप्यन्तरण,*
4. *विषय के अनुकूल सहज भाषा का प्रयोग।*

आगे के अनुच्छेदों में उपर्युक्त चारों कठिनाइयों की क्रमश: संक्षेप में चर्चा की जा रही है।

1. **उपर्युक्त पर्याय का चयन-** उन शब्दों को छोड़कर जिनका मानकीकरण हो चुका है, अनुवादक को कोशों में एक अंग्रेजी शब्द के लिए प्राय: एकाधिक हिन्दी पर्याय मिलते हैं और इनके प्रयोग-भेद को सोदाहरण समझाया नहीं गया होता। ऐसी स्थिति में अनुवादक यह नहीं समझ पाता कि अनुवाद्य सामग्री के सन्दर्भ के अनुकूल पर्याय कौनसा है? उदाहरण के लिए clearance का एक अर्थ है : 'माल छुड़ाना' या 'माल निकासी', पर बैंकिंग के सन्दर्भ में इसका अर्थ है : 'समाशोधन'। इसी प्रकार security का एक अर्थ 'जमानत' है, दूसरा 'ऋणपत्र' और तीसरा 'सुरक्षा' (जैसे-social security)। exploitation का पर्याय एक अर्थ में 'शोषण' है, और दूसरे में 'दोहन' अथवा 'उपयोग' (जैसे-'exploitation' of mineral wealth)। economy के एक सन्दर्भ में 'अर्थव्यवस्था' है और दूसरे में 'मितव्ययिता' अथवा 'किफायतिशिआरी'। अत: जब तक पारिभाषिक शब्दों की अर्थछायाओं का बोध कराने वाले कोश प्रकाशित नहीं होते तब तक अनुवादक को बड़ी सावधानी के साथ सन्दर्भानुकूल पर्याय स्वयं चुनने होंगे। इसमें उसकी सामान्य बुद्धि, विषय का ज्ञान और अंग्रेजी के स्तरीय कोश को सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

कोश में ऐसे पर्याय भी दिये रहते हैं जो लगभग पूर्णत: समानार्थी होते हैं और अनुवादक उनमें से इच्छानुसार किसी पर्याय का प्रयोग कर सकते हैं। ऐसी स्थिति में अनुवादक को अपेक्षाकृत प्रचलित और सरल पर्याय ही चुनना चाहिए। उदाहरणार्थ, adulteration के लिए 'अपमिश्रण' और 'मिलावट' में से 'मिलावट', acquired के लिए 'अर्जित' और 'अधिगत' में से 'अर्जित' तथा fluctuation के लिए 'उच्चावचन' और 'उतार-चढ़ाव' में से 'उतार-चढ़ाव' का चयन करना चाहिए।

अंग्रेजी के कुछ शब्द लगभग समानार्थी प्रतीत होते हैं, पर उनमें संकल्पना की दृष्टि से भेद है। अत: अनुवाद की प्रामाणिकता को सुनिश्चित करने के लिए इन शब्दों के लिए अलग-अलग पर्यायों का ही प्रयोग करना चाहिए। इस प्रकार के कुछ उदाहरण नीचे दिये जा रहे हैं-

Growth	संवृद्धि	Development	विकास
Discount	बट्टा	Commission	कमीशन
Reduction	कमी	Rebate	छूट
Convertible	परिवर्तनीय	Exchangeable	विनिमेय
Mortgage	बंधक	Bailment	उपनिधान
Pledge	गिरवी	Embezzlement	गबन
Misappropriation	दुर्विनियोग	Deflacation	खयानत
Misuse	दुरुपयोग	Deflation	अवस्फीति
Disinflation	विस्फीति	Anti-inflation	प्रतिस्फीति
Risk	जोखिम	Hazard	खतरा
Peril	आपदा	Crisis	संकट
Catastrophe	महासंकट		

अनुवाद्य सामग्री में plan और scheme शब्द एक साथ आ जाएं तो plan के लिए 'योजना' और Scheme के लिए 'स्कीम' लिखना ही उचित है।

2. **नये पर्याय का निर्माण-** अनुवादक को नये शब्दों के निर्माण से यथासम्भव बचना चाहिए। पारिभाषिक शब्दों का निर्माण एक कठिन कार्य है और अनभ्यस्त व्यक्ति से 'अर्थ का अनर्थ' भी हो सकता है। फिर भी, यदि नया शब्द गढ़ना ही पड़े तो उसकी रचना सरल से सरल रखनी चाहिए और कठिन सन्धियों से बचना चाहिए। उदाहरण के लिए 'बहुउद्देश्य' के बजाय 'बहु-उद्देश्य' लिखना उचित है। व्यक्तियों, स्थानों और संस्थाओं के नामों पर बनी अभिव्यक्तियों का भाषान्तर करते समय उन नामों को ज्यों का त्यों रहने देना चाहिए। यथा-Marshall Aid का 'मार्शल सहायता', Colombo Plan का 'कोलम्बो योजना' आदि। इसी प्रकार Chancellor of the Exchequer चूँकि ब्रिटेन के वित्त मंत्री को ही कहते हैं इसलिए इसका अनुवाद न करके लिप्यन्तरण करना ही उचित होगा।

3. **संक्षिप्तियों का रूपान्तरण/लिप्यन्तरण-** अर्थशास्त्र और वाणिज्य विषयक साहित्य में संक्षिप्तियों का प्रयोग दिनोंदिन बढ़ रहा है। यह मुख्यत: इन विषयों में गणितीय सूत्रों, ग्राफों आदि के अधिकाधिक प्रयोग के कारण हुआ है। संक्षिप्तियों के प्रयोग से मौखिक विचार-विमर्श में भी बड़ी सुविधा होती है। जो भी हो, संक्षिप्तियों की समस्या का समाधान किये बगैर अनुवाद की गुणवत्ता सुनिश्चित नहीं की जा सकती। खेद का विषय है कि संक्षिप्तियों के पर्याय निश्चित करने की दिशा में अभी तक कोई व्यवस्थित प्रयास नहीं किये गये हैं। संचार माध्यमों ने इंका, द्रमुक, भाजपा, माकपा जैसी संक्षिप्तियाँ चलाई हैं जो खूब लोकप्रिय हो गई हैं। किन्तु अर्थशास्त्र और वाणिज्य की संक्षिप्तियों के प्रामाणिक पर्याय कहीं उपलब्ध नहीं है। ऐसी स्थिति में अनुवादक स्वयं पर्याय तैयार करके अनुवाद में पहली बार जहाँ उनका प्रयोग करे वहाँ कोष्ठक में अंग्रेजी की संक्षिप्ति भी लिख दे। संक्षिप्ति ऐसी बनाई जाए जो लिखने और बोलने में सरल हो। यदि ऐसा करना सम्भव न हो तो अंग्रेजी की संक्षिप्ति का लिप्यन्तरण ही कर देना चाहिए।

संक्षिप्तियों के हिन्दी रूप निम्न प्रकार बनाये जा सकते हैं-

IMF (International Monetary Fund)	अमुनि (अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा निधि)
VAT (Value Added Tax)	वमूक (वर्द्धित मूल्य कर)
GDP (Gross Domestic Product)	सराउ (सकल राष्ट्रीय उत्पाद)
LDC (Least Developed Countries)	अल्पविदे (अल्प विकसित देश)
EEC (European Economic Community)	यूआस (यूरोपीय आर्थिक समुदाय)
OPEC (Organisation of Petroleum Exporting Countries)	पेनिटेस (पेट्रोल निर्यातक देश संगठन)

4. **विषयानुकूल सहज भाषा का प्रयोग-** सहज भाषा का प्रयोग कुशल अनुवादक की कसौटी है। इसके लिए विषय की गहरी जानकारी और भाषा पर पूर्ण अधिकार आवश्यक है। इसमें ध्यान रखने वाली एक ही बात तो यह है कि अर्थशास्त्र और वाणिज्य सहित सामाजिक विज्ञानों के लगभग सभी विषयों में हाल के वर्षों में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्रों से काफी शब्द और अभिव्यक्तियाँ ली गई हैं और उन्हें विशेष अर्थ दे दिये गये हैं। इनका अनुवाद करते समय उनके मूल अर्थ के बजाय अनुवाद्य सामग्री में अभिप्रेत अर्थ का बोध कराने वाले शब्दों का प्रयोग करना चाहिए। उदाहरण के लिए, 'take off' अभिव्यक्ति उड्डयन से सम्बन्धित है, जिसका अर्थ है-'उड़ान शुरू करना' या 'उड़ान भरना'। अर्थशास्त्र और वाणिज्य में इसे आर्थिक विकास के एक चरण के लिए इस्तेमाल करते हुए 'take-off stage of the economy' अभिव्यक्ति का प्रयोग करते हैं। इस अर्थ में यह 'आर्थिक विकास की उत्कृष्ट अवस्था' है। इसी प्रकार, 'there is nothing wrong with the health of the economy' में health का अनुवाद 'स्वास्थ्य' न होकर 'स्थिति' होना चाहिए। The Company is the red since the last few years में in the red अभिव्यक्ति का शब्दानुवाद न करके 'घाटे' में लिखा जाना चाहिए। Fertilizer project is on the anvil में no the anvil का अनुवाद 'शुरू की जाने वाली है' उपयुक्त रहेगा।

हिन्दी की प्रकृति ऐसी है कि सभी संज्ञाओं के बहुवचन ठीक से नहीं बन पाते। उदाहरण के लिए, 'बचत' का बहुवचन 'बचतें' और 'जमा' का 'जमाएं' बड़ा अटपटा लगता है। इसी प्रकार refunds के लिए 'वापसियाँ' का प्रयोग भी अटपटा है। इनके स्थान पर 'बचत राशियाँ', 'जमा राशियाँ' और 'वापस रकमें' लिखना बेहतर होगा।

जहाँ भी सम्भव हो, अंग्रेजी के मुहावरे को हिन्दी में उतारने का प्रयास करना चाहिए। उदाहरण के लिए, reconstruction of post-war economy is a Herculean task का अच्छा अनुवाद होगा 'युद्धोत्तर अर्थव्यवस्था के पुनर्निर्माण के लिए भगीरथ प्रयत्न की आवश्यकता है'। इसी प्रकार, "The managing director left no stones unturned in improving the financial position of the Company" का अनुवाद 'प्रबन्ध निदेशक ने कम्पनी की वित्तीय स्थिति को सुधारने में कोई कसर बाकी नहीं रखी' करना उचित होगा।

अर्थशास्त्र और वाणिज्य के साहित्य में 'against', 'account', 'support', 'critical', 'viaable' जैसे अनेक शब्दों का विविध सन्दर्भों में प्रयोग होता है और उनका प्रायः भावानुवाद ही करना उचित रहता है, जैसे-'against' के प्रयोग के कुछ उदाहरण और उनके प्रस्तावित अनुवाद नीचे दिये जा रहे हैं-

The rupee value against pound has been stable for quite some time = रुपये और पाउण्ड की विनिमय दर काफी समय से स्थिर बनी हुई है।

The LIC has earned Rs. 750 crores this year against Rs. 600 crores earned last year = भारतीय जीवन बीमा निगम ने गत वर्ष के रु. 600 करोड़ की तुलना में इस वर्ष रु. 750 करोड़ रुपये कमाये हैं।

Gold is hoarded against rainy days = सोना बुरे वक्त में काम आने के लिए जमा किया जाता है।

Charge the bill against my account = इस बिल की रकम को मेरे खाते में डाल दें।

इसी प्रकार, support के प्रयोग के कुछ नमूने हैं-Budgetary support will not be extended for railway electrification = रेल विद्युतीकरण के लिए बजट से राशि उपलब्ध नहीं कराई जायेगी।

Prices showed upward trend on buyers support = खरीददारी की माँग से कीमतों में वृद्धि का रुख दिखाई दिया।

Interest income was his only support = ब्याज की आमदनी उसके गुजारे का एकमात्र साधन थी।

भाषा के स्वरूप को सहज रखने के लिए यह भी आवश्यक है कि पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग वहीं किया जाये जहाँ वह अर्थ की रक्षा के लिए जरूरी हो, जैसे-This book cost me Rs. 25 में cost का पर्याय 'लागत' देना कतई जरूरी नहीं है-इसका सीधा-सा अनुवाद होगा 'यह पुस्तक मुझे रु. 25 में पड़ी।' इसी तरह an amount of Rs. 5000 is needed to repair the machine का अनुवाद 'इस मशीन की मरम्मत के लिए रु. 5000 चाहिए' करना उचित है जिसमें amount का पर्याय देने की जरूरत नहीं है।

बैंकिंग- बैंकिंग विषयक सामग्री प्राय: तीन प्रकार की होती है-

1. *फार्म और रजिस्टर,*
2. *अनुदेशनात्मक सामग्री,*
3. *विज्ञापन और प्रचार सामग्री।*

फार्मों का अनुवाद करते समय यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि जिस क्रम में अंग्रेजी लिखी गई है, हिन्दी भी अनिवार्यत: उसी क्रम में नहीं लिखनी होगी। उदाहरण के लिए, चैक के फार्म में-

Pay .... or bearer .... a sum of Rupees

का अनुवाद इस प्रकार होगा-

..... या वाहक को रु. ...... अदा करें।

हमने देखा कि जहाँ अंग्रेजी में 'pay' सबसे आरम्भ में लिखा गया है, हिन्दी अनुवाद में 'अदा करें' अन्त में आयेगा।

अनुदेशात्मक सामग्री के बारे में कोई विशेष नियम नहीं है, वाणिज्य-विषयक सामग्री के अनुवाद के नियम ही यहाँ भी लागू होंगे।

बैंकिंग के क्षेत्र में विज्ञापन और प्रचार सामग्री का महत्त्व तेजी से बढ़ता जा रहा है। सभी बैंक अपने परम्परागत कार्यकलाप के अतिरिक्त कई नये तरह के काम करते हैं जिनमें निम्नलिखित उल्लेखनीय हैं-

1. Consumer services	ग्राहक सेवाएं
2. Institutional finance	संस्थानिक वित्त
3. Corporate banking	निगम बैंकिंग
4. Investment banking	निवेश बैंकिंग
5. Provision of venture capital	जोखिम पूँजी की व्यवस्था

इस प्रकार, बैंकों का कार्यक्षेत्र अब बड़ा विस्तृत हो गया है। जनता के विभिन्न वर्गों से अधिकाधिक जमाराशियाँ प्राप्त करने और उन्हें तरह-तरह के ऋण तथा अन्य सेवाएं प्रदान करने के लिए बैंकों में होड़ लगी रहती है और इसके लिए वे प्रायः बड़ी आकर्षक भाषा में विज्ञापन सामग्री और प्रचार-पर्चे प्रकाशित करते रहते हैं। इनका अनुवाद वास्तव में कठिन कार्य है क्योंकि आकर्षण का जो तत्त्व मूल अंग्रेजी में है, वही अनुवाद में भी आना चाहिए। उदाहरण के लिए, 'the bank you can bank upon' का अनुवाद 'आपके भरोसे का बैंक' करने पर भी उसमें मूल अंग्रेजी का चमत्कार नहीं आ पाता। एक बैंक ने ग्राहकों को व्यक्तिगत सेवा का आश्वासन देते हुए लिखा है, 'Come, we will give you a banker, not just a bank'. इसका अनुवाद करते हुए कह सकते हैं 'आइए, हम संस्था ही नहीं, व्यक्ति के रूप में आपकी सेवा करेंगे।'

कम्पनियों के शेयरों और डिबेंचरों के निर्गम की व्यवस्था अब प्रायः बैंकों द्वारा की जा रही है। ऐसे बैंकों को 'Managers to the issue' 'अर्थात् निर्गम प्रबन्धक' कहा जाता है। जब कई बैंक मिलकर किसी निर्गम का प्रबोध करते हैं तो इनमें से कोई बैंक Lead manager हो सकता है जिसे हम 'अग्रणी प्रबन्धक' कह सकते हैं। कम्पनी निर्गमों का विज्ञापन करते समय निवेशकर्त्ताओं को आकर्षित करने के लिए बैंक कई वाक्यांशों का प्रयोग करते हैं जो प्रस्तावित अनुवाद सहित नीचे दिये जा रहे हैं-

Low gestation period अल्प परिपक्वता अवधि/उत्पादन जल्दी आरम्भ होगा।

Preferential allotment assured तरजीही नियतन का आश्वासन।

Listing at major stock exchanges प्रमुख स्टॉक एक्सचेंजों पर क्रय-विक्रय।

Pioneer promotes with proven track उपलब्धियों के निर्विवाद कीर्तिमान वाले अग्रणी प्रवर्तक।

Easy Liquidity आसानी से बेचने की सुविधा/बेचने में आसानी/सरल विकेता।

Maiden Public issue पहला सार्वजनिक निर्गम।

निष्कर्ष के तौर पर कहा जा सकता है कि वाणिज्य और बैंकिंग के क्षेत्र में जो सामग्री आजकल आ रही हैं, उसके अच्छे रूपान्तरण के लिए अनुवादक को हिन्दी पर अच्छा अधिकार होने के साथ-साथ विश्व का प्रामाणिक ज्ञान भी होना चाहिए और थोड़ी कल्पनाशीलता भी।

वैज्ञानिक, तकनीकी तथा प्रौद्योगिकी साहित्य के अनुवाद

अंग्रेजी भाषा-साहित्य के जाने माने विद्वान आई.ए. रिचर्डस ने भाषा के दो मुख्य प्रयोग बताये हैं-भाषा का वैज्ञानिक प्रयोग और भाषा का भावात्मक प्रयोग। वैज्ञानिक, तथ्यात्मक या

सूचनापरक प्रयोग में हम भाषा का उपयोग किसी वस्तु की ओर संकेत करने या किसी तथ्य, सिद्धान्त आदि की जानकारी देने के लिए करते हैं। भावात्मक, रागात्मक या संवेगात्मक प्रयोग में हम भाषा का उपयोग मनोवेगों तथा मनोवृत्तियों को व्यक्त अथवा उत्तेजित करने के लिए करते हैं अर्थात् श्रोता-पाठक के मन में कोई भावना उत्पन्न करने के लिए।

इस तरह भाषा में दोनों प्रकार के प्रयोग भिन्न-भिन्न प्रयोजनों के लिए होते हैं। वैज्ञानिक भाषा केवल तथ्यात्मक जानकारी प्रदान करती है जबकि रागात्मक या संवेगात्मक भाषा का प्रयोजन आनन्द और उपदेश (शिक्षा) कहा जाता है। दोनों का उद्देश्य अलग-अलग होने के कारण दोनों प्रकार के साहित्य की अपनी-अपनी विशेषताएं हैं। तथ्यप्रधान वैज्ञानिक साहित्य में प्राय: पारिभाषिक अथवा अर्द्धपारिभाषिक शब्दों से युक्त सीधी-सपाट शैली होती है। इसके विपरीत कलाप्रधान या शैलीप्रधान साहित्यिक रचनाओं में व्याकरणिक रचना, शाब्दिक चमत्कार, छन्द, मात्रा, अलंकार आदि अनेक बातों का समावेश होता है।

प्रस्तुत लेख में साहित्यिक अनुवाद का प्रयोग कविता, कहानी, नाटक आदि रचनात्मक साहित्य के अनुवाद के लिए किया गया है और वैज्ञानिक अनुवाद का प्रयोग तथ्यात्मक या सूचनापरक ज्ञान-साहित्य के अनुवाद के लिए। जिस रचना में शैली का जितना अधिक महत्त्व होगा उतना ही अनुवाद कठिन होगा। साहित्यिक अनुवाद में सृजनात्मक प्रतिभा की अपेक्षा की जाती है जबकि वैज्ञानिक अनुवाद में इसकी कोई अनिवार्यता नहीं होती। शायद इसलिए कुछ विद्वान साहित्यिक अनुवाद की तुलना में वैज्ञानिक अनुवाद को सरल समझते हैं। लेकिन वैज्ञानिक साहित्य के अनुभवी अनुवादक इस बात को अच्छी तरह समझते हैं कि तकनीकी अनुवाद उतना ही सरल भी नहीं है।

दोनों प्रकार के अनुवाद कितने सरल या कठिन हैं, यह मुख्यत: अनुवादकों की क्षमता-अक्षमता पर निर्भर करता है। साहित्यिक अनुवाद में केवल दोनों भाषाओं की अच्छी जानकारी ही अनिवार्य होती है, विषय के ज्ञान का अधिक महत्त्व नहीं। किन्तु वैज्ञानिक अनुवाद में दोनों भाषाओं की अच्छी जानकारी होने के साथ-साथ विषय का भी समुचित ज्ञान होना जरूरी है। अगर इन तीनों बातों में से किसी में भी कमी हो तो उत्कृष्ट अनुवाद की आशा करना व्यर्थ है। यदि एक ओर अनुवादक से अपेक्षा की जाती है कि स्रोत-भाषा का उसका ज्ञान अच्छा होना चाहिए तो दूसरी ओर कई विद्वान लक्ष्य-भाषा के व्यावहारिक ज्ञान की बात को भी अनुवादक के लिए एक आवश्यक समझते हैं। दोनों ही बातें युक्तिसंगत प्रतीत होती हैं, क्योंकि स्रोत भाषा में मूल पाठ के अर्थ-ग्रहण के बाद दूसरा चरण तो लक्ष्य-भाषा में सम्प्रेषण का ही होता है। इसलिए यदि अनुवादक में मूल अर्थ समझ कर लक्ष्य भाषा में उसे व्यक्त करने की क्षमता नहीं है, तो उसके द्वारा किये गये अनुवाद की भाषा अटपटी, बनावटी या बोझिल हो सकती है।

अत: यदि एक ओर अनुवादक के लिए मूल के प्रति निष्ठावान होना आवश्यक है तो दूसरी ओर लक्ष्य-भाषा की प्रकृति की रक्षा करना और स्रोत-भाषा की पाठ्य सामग्री को लक्ष्य-भाषा के मुहावरे में ढालना भी उसका कर्त्तव्य है। ये अपेक्षाएं अनुवादक के काम को काफी मुश्किल बना देती हैं। इसलिए अच्छे अनुवादक से यह अपेक्षा की जाती है कि उसे दोनों भाषाओं की प्रकृति, उनकी वाक्य-रचना, शब्दावली, मुहावरे, अभिव्यक्ति-शैली आदि का अच्छा-खासा ज्ञान होना चाहिए। मूल को समझने के लिए विषय का ज्ञान बहुत जरूरी होता है। मूल अर्थ को समझे बिना शब्द के लिए प्रतिशब्द रख देने से अनुवाद न केवल भद्दा अथवा बनावटी हो जाता है बल्कि उसके मूल अर्थ का स्पष्टीकरण भी नहीं होता और कभी-कभी तो अर्थ का अनर्थ भी हो सकता है। निम्नलिखित उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि वैज्ञानिक साहित्य के अनुवादक में तीनों योग्यताओं का होना कितना जरूरी है।

"The earliest mammals like the earliest birds were creatures driven by competition and pursuit into a life of hardship and adaptation to cold. With them also the scale became quill like, and was developed into a beat-reatining covering, and they too underwent modifications, similar in kind though different in detail to become warm blooded and independent of basking."

"आदिम काल की चिड़ियों की भाँति पृथ्वी के सर्वप्रथम स्तनधारी प्राणियों को भी प्रतियोगिता और कठिनाइयों के कारण विवश होकर अपने शरीर को शीतकाल के उपयुक्त बताना पड़ा, और चिड़ियों की भाँति इनके शल्क भी विकसित होकर सेही के काँटों के सदृश शरीर की उष्णता बनाये रखने में वर्म का-सा काम करते थे। तदुपरान्त धूप से शरीर सेंकने की आवश्यकता को दूर करने तथा शरीरस्थ रुधिर को उष्ण बनाये रखने के लिए इन स्तनधारी प्राणियों में भी पक्षियों की भाँति परिवर्तन और संशोधन होने आरम्भ हो गये।"

इस अनुवाद को पढ़ने में ऐसा लगता है कि अनुवादक का दोनों भाषाओं पर अधिकार है। स्रोत-भाषा में कहे गये सामान्य तथ्यों को आम तौर पर अनुवादक ने ठीक-ठीक समझ लिया है। लक्ष्य-भाषा में भी सहजता है। किन्तु विषय का समुचित ज्ञान न होने के कारण अनुवादक तकनीकी अभिव्यक्तियों का सही ढंग से अनुवाद नहीं कर सका है। अंग्रेजी 'क्विल' के स्थान पर सेही के काँटे और 'वार्म ब्लडेड' के लिए शरीरस्थ रुधिर को उष्ण बनाये रखना यथार्थता की दृष्टि से ठीक नहीं है। यहाँ 'क्विल' शब्द का प्रयोग एक प्रकार के पिच्छ (पर) के लिए किया गया है। वार्म ब्लडेड ऐसे प्राणी के लिए प्रयुक्त होता है जिसके शरीर का तापमान वातावरण के अनुसार घटता-बढ़ता नहीं है। इसलिए इस अंग्रेजी शब्द के लिए हिन्दी में 'समतापी' प्राणी का प्रयोग कहीं अधिक उपयुक्त होगा।

एक दूसरा उदाहरण चिकित्सा-सम्बन्धी एक पुस्तक के अनुवाद का पुनरीक्षण करते समय मेरे सामने आया। यहाँ स्रोत-भाषा पर अधिकार न होने के कारण अनुवाद मूल अर्थ को समझने में असमर्थ रहा है।

The World Health Organization has defined drug dependence as "a state of psychic (mental) or physical (bodily) dependence or both, on a drug arising in a person following administration of that drug on a periodic or a continuous basis. Drug dependence can be substituted for addiction since it covers all the drugs which give rise to a desire or need for repeated administration.

"विश्व-स्वास्थ्य संगठन ने औषधि-निर्भरता को मानसिक अथवा शारीरिक अवस्था अथवा दोनों की निर्भरता के रूप में परिभाषित किया है। औषधि-निर्भरता व्यसन के लिए प्रतिस्थापित हो सकती है क्योंकि यह उन सभी औषधियों का आवरण करती है जो आवृत्तिजन्य आचरण (दोहराई गई व्यवस्था) की इच्छा अथवा आवश्यकता में व्याप्त है।"

मूल अंग्रेजी पाठ में कोई भी ऐसा तकनीकी शब्द नहीं है जिसका अर्थ समझने में कोई कठिनाई हो। किन्तु सामान्य अंग्रेजी के वाक्यों को भी अनुवादक नहीं समझ पाया है और उसने किसी तरह उल्टा-सीधा अनुवाद कर दिया है। यह अनुवाद तथ्यात्मक दृष्टि से इतना भ्रष्ट है कि इसे पढ़कर कुछ भी बात आपकी समझ में नहीं आती। मूल अंग्रेजी पाठ को ठीक से समझने के बाद किये गये अनुवाद का रूप कुछ निम्न प्रकार होगा-

"विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा औषधि-निर्भरता की व्याख्या इस प्रकार की गई है-समय-समय पर या लगातार औषधि देने के फलस्वरूप किसी व्यक्ति में उस औषधि के लिए उत्पन्न मानसिक या शारीरिक या फिर दोनों तरह की निर्भरता की स्थिति। औषधि-निर्भरता धीरे-धीरे व्यसन का रूप ले लेती है क्योंकि इसके अन्तर्गत वे सभी औषधियाँ आ जाती हैं जिनको बार-बार लेने की इच्छा या आवश्यकता होती है।"

वैज्ञानिक अनुवाद की विशिष्टताओं के बारे में अधिकांश विद्वानों का मत है कि इस प्रकार के अनुवाद में विषय-वस्तु ही सर्वोपरि है, भाषा-शैली का महत्त्व गौण है। डॉ. जॉनसन ने अनुवाद की बहुत ही संक्षिप्त और सटीक व्याख्या दी है-"एक भाषा से दूसरी भाषा में भावार्थ के अन्तरण को ही अनुवाद कहते हैं।" एक साहित्यकार द्वारा दी गई यह व्याख्या वैज्ञानिक, तकनीकी या शास्त्रीय अनुवाद के सन्दर्भ में तो बिल्कुल ही ठीक बैठती है। इस व्याख्या में केवल मूल भावों की सुरक्षा पर ही बल दिया गया है। यूनेस्को के अनुवाद-सम्बन्धी एक प्रकाशन में इसी बात को इस ढंग से व्यक्त किया गया है-"तकनीकी अनुवाद का मूलभूत सिद्धान्त यह है कि अनुवाद विचारों या भावों का किया जाये, शब्दों का नहीं।" इसी प्रकाशन में एक और जगह कहा गया है कि वैज्ञानिक साहित्य के अनुवाद में यथार्थता और स्पष्टता सबसे ज्यादा महत्त्व रखती है। साहित्य में भाषाई तद्रूपता महत्त्वपूर्ण है, विज्ञान में विषयगत यथातथ्यता। दूसरे शब्दों में वैज्ञानिक अनुवाद में प्रामाणिकता और स्पष्टता ये दोनों ही बातें महत्त्वपूर्ण होती हैं। एक अन्य अनुवाद-विशेषज्ञ नाइडा ने अनुवाद की व्याख्या करते हुए भावार्थ को प्रमुखता प्रदान करने के साथ-साथ शैली पर ध्यान देने की आवश्यकता का भी उल्लेख किया है। नाइडा के अनुसार यदि भावार्थ और शैली दोनों में समतुल्यता लाना सम्भव न हो तो भावार्थ को ही प्रमुखता दी जानी चाहिए।

आमतौर पर वैज्ञानिक साहित्य के अनुवाद में अभिव्यक्ति-शैली का कोई खास स्थान नहीं होता। अगर अनुवादक को स्रोत-भाषा और लक्ष्य-भाषा का ज्ञान है, लक्ष्य-भाषा के सही और सहज प्रयोगों की जानकारी है और विषय से सम्बद्ध पर्याप्त शब्दावली उपलब्ध है तो अनुवादक में रुचि रखने वाले कोई भी विषय-विशेषज्ञ अनुवाद कर सकते हैं किन्तु सामान्य पाठकों के लिए लिखे गये वैज्ञानिक साहित्य का अनुवाद करते समय शैलीगत विशेषताओं की तरफ भी थोड़ा बहुत ध्यान देना होता है। एच.जी. वेल्स की 'ए शॉर्ट हिस्ट्री ऑफ दि वर्ल्ड' नामक ग्रन्थ आम शिक्षित व्यक्ति के लिए लिखी गई एक प्रामाणिक पुस्तक मानी जाती है। इसमें कई विषयों से सम्बद्ध प्रामाणिक वैज्ञानिक जानकारी बहुत ही रोचक शैली में दी गई है। ऐसे साहित्य का अनुवाद करते समय जहाँ तक हो सके अनूदित भाषा की शैली भी रोचक होनी चाहिए। इस पुस्तक से अनुवाद का नमूना देखिए-

> In the days when the world was supposed to have endured for only a few thousand years, it was believed that the different species of plants and animals were fixed and final; they had all been created exactly as they are today each species by itself. But as men began to discover and study the Record of the Rocks this belief gave place to the suspicion that many species had changed and developed slowly through the course of ages, and this again expanded into a belief in what is called Organic Evolution, a belief that all species of life upon Earth, animal and vegetable alike, are descended by

slow continuous processes of change from some very simple ancestral form of life, some almost structureless living substance, for back in the so-called Azoic seas.

"जिस समय संसार की उत्पत्ति कुछ ही सहस्र वर्ष पुरानी थी, उस समय विभिन्न वनस्पतियों और प्राणियों के भेद निश्चित और अपरिवर्तनीय समझे जाते थे। यह मान लिया गया था कि प्रत्येक जाति के जीवों को हम आज जिस रूप में देख रहे हैं वे उसी रूप में उत्पन्न हुए थे। परन्तु चट्टानों के अध्ययन से मानव-ज्ञान में जैसे-जैसे वृद्धि होती गई वैसे-वैसे उपर्युक्त धारणा के स्थान पर यह धारणा बनने लगी कि बहुत-सी जीव-जातियाँ युग-युगान्तरों में धीरे-धीरे परिवर्तित होकर उन्नति करती गई हैं और फिर इसी धारणा ने कालान्तर में जैव-विकासवाद का रूप धारण कर लिया। इस सिद्धान्त के अनुसार भूमण्डल के समस्त पौधे तथा प्राणी तथाकथित निर्जीवयुगीय समुद्रों में रहने वाले किसी अत्यन्त सरल और प्राय: आकृतिहीन जीवधारी से युग-युगान्तरों में धीरे-धीरे परिवर्तित और विकसित हुए हैं।"

लोकप्रिय वैज्ञानिक साहित्य में ऐसे आलंकारिक प्रयोग भी मिलते हैं जिनसे काव्यात्मक प्रभाव उत्पन्न होता है। यहाँ पर वैज्ञानिक तथ्यों के भाषान्तरण के साथ-साथ शैलीगत विशेषताओं पर कुछ ध्यान देना वांछनीय है जिससे कि अनुवाद उतना ही सरस और प्रभावोत्पादक बन सके। स्वास्थ्य से सम्बन्धित पुस्तकों में अंग्रेजी का यह संक्षिप्त वाक्य "हेल्थ इज वेल्थ" अक्सर देखने में आता है। मैंने इसके कई अनुवाद सुने हैं-'स्वास्थ्य ही धन है', 'सेहत से बढ़कर कोई दौलत नहीं', 'अच्छा स्वास्थ्य सम्पदा है' आदि-आदि। भावार्थ की दृष्टि से सभी अनुवाद ठीक कहे जा सकते हैं किन्तु इनमें मूल अभिव्यक्ति का कलात्मक सौन्दर्य अर्थात् ध्वनिसाम्य या समध्वनि चमत्कार नहीं है। इस दृष्टि से यदि हम इसका अनुवाद 'जान है जहान है', 'स्वास्थ्य ही सम्पत्ति है' या 'स्वस्थ तन-मन ही धन है' करें तो भावार्थ के साथ-साथ हम मूल की शैलीगत विशेषताओं को कुछ हद तक अनुवाद में अभिव्यक्त कर सकते हैं।

ऐसे स्थलों पर विषयगत और शैलीगत दोनों प्रकार की समतुल्यता लाने का प्रयास अनुवादक को अवश्य करना चाहिए। किन्तु यह बात ध्यान में रखनी है कि शैलीगत विशेषताओं को लाने के चक्कर में तथ्यात्मक प्रामाणिकता पर आंच न आए। यदि भाषा-शैली के सौन्दर्य के लोभ में तथ्यों को तोड़-मरोड़ दिया गया तो पाठकों पर उसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा और मूल रचना का उद्देश्य भी पूरा नहीं हो सकेगा। ऐसे स्थलों पर तथ्य की सुरक्षा के साथ-साथ अनुवाद में साहित्यिक कलात्मकता लाने का प्रयास करना चाहिए। अनुवाद करते समय हमारा लक्ष्य यह होना चाहिए कि तथ्यों को सही-सही ढंग से व्यक्त करते हुए वर्णन-शैली का सौन्दर्य भी आ जाये।

वैज्ञानिक अनुवादक के कुछ खास सिद्धान्त तथा नियम होते हैं या यों कहें कि कुछ दिशा-निर्देश होते हैं। किसी वैज्ञानिक रचना का अनुवाद करते समय सबसे पहले यह ध्यान रखना होता है कि मूल लेखक ने जो कुछ कहा है वह सही रूप में अनुवाद में आ जाये। सबसे पहले ध्यान तथ्यात्मक प्रामाणिकता की तरफ जाना चाहिए। दूसरे, तकनीकी अर्थ को और अच्छे ढंग से स्पष्ट किया जाये जिससे कि अनुवाद पढ़ने वाले को विषय समझने में कम से कम परेशानी हो। उच्च-भाषा के स्तर पर अनुवाद-प्रक्रिया सम्बन्धी तीसरी बात है भाषा की सहजता अर्थात् भाषा का वह रूप जो जाने-माने लेखकों की रचनाओं में हम पढ़ते हैं। इस तरह सम्प्रेषण के स्तर पर अनुवाद-प्रक्रिया में प्राथमिकताएं निम्न प्रकार होती हैं-

(1) *तथ्यात्मक प्रामाणिकता,*

(2) *स्पष्टता,*

(3) *सहजता या सुपाठ्यता।*

अनुवाद तथा शब्दावली से सम्बन्धित संगोष्ठियों में प्राय: यह बात कही जाती है कि हिन्दी को अनुवाद की भाषा न बनायें। पिछले 15-20 वर्षों में अनेक वैज्ञानिक पुस्तकों के अनुवाद प्रकाशित हुए हैं। इनमें से कुछ अनूदित पुस्तकों की भाषा अटपटी, बोझिल और बनावटी लगती है। ऐसा अनुवाद विज्ञान के प्रचार-प्रसार में सहायक होने की बजाय बाधक सिद्ध होता है। सम्भवत: ऐसी पुस्तकों को ध्यान में रखकर ही उपर्युक्त बात कही गई है। अनूदित भाषा की सहजता पर अनुवाद-विशेषज्ञों तथा अनुवादकों दोनों ने ही विशेष बल दिया है। एक वैज्ञानिक तथा अनुवाद-विशेषज्ञ टी.एच. सेबरी ने अच्छे अनुवाद की विशेषताओं का उल्लेख करते हुए तीन बातों पर बल दिया है-

(1) *अनुवाद में मूल के सभी विचारों का समावेश होना चाहिए।*

(2) *अनूदित रचना में वैसी ही सहजता होनी चाहिए जैसी हम किसी मौलिक ग्रन्थ में देखते हैं। दूसरे शब्दों में दोनों को पढ़कर यह नहीं मालूम होना चाहिए कि कौनसी मूल रचना है और कौनसी अनूदित है?*

(3) *अनुवाद में मूल की शैली की झलक दिखाई देनी चाहिए।*

एक अन्य विद्वान एलेक्जेण्डर फेजर टाइटलर ने मूलत: साहित्यिक अनुवाद के सन्दर्भ में जो विचार व्यक्त किये हैं, वे वैज्ञानिक अनुवाद पर भी उतने ही लागू होते हैं-

"यदि सभी भाषाओं की प्रवृत्ति तथा सहज प्रकृति समान ही होती तो एक भाषा से दूसरी में भाषान्तर की प्रक्रिया बहुत ही आसान हो जाती क्योंकि उस स्थिति में अनुवादक को केवल थोड़ी सावधानी बरतने और यथातथ्यता की तरफ ध्यान देने की जरूरत होती है। किन्तु वस्तुस्थिति ऐसी नहीं है और विभिन्न भाषाओं की प्रवृत्ति तथा सहज प्रकृति में स्पष्टत: काफी अन्तर देखा जाता है। इस कारण सामान्य मत यही है कि अनुवादक को मूल के तात्पर्य तथा भावार्थ पर ही पर्याप्त ध्यान देते हुए लेखक के विचारों को आत्मसात करने के बाद उन्हें अपने शब्दों में यथोचित ढंग से अभिव्यक्त करना चाहिए।"

समर्थ अनुवादक मूल पाठ के भावार्थ को समझने के बाद अपने शब्दों में, अपनी भाषा की प्रकृति के अनुरूप, उस बात को व्यक्त करने का प्रयास करता है। इस पद्धति का अनुसरण करने से जो अनुवाद सामने आता है, उसको पढ़कर मौलिक ग्रन्थ जैसा आनन्द आता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल द्वारा हीगेल के एक सुप्रसिद्ध ग्रन्थ 'Riddles of the Universe' का अनुवाद 'विश्व-प्रपंच' अनूदित ग्रन्थ नहीं लगता बल्कि एक मौलिक रचना प्रतीत होती है। 'विश्व-प्रपंच' की भूमिका में शुक्ल जी लिखते हैं-"कौन-सा वाक्य किस अंग्रेजी वाक्य का अक्षरश: अनुवाद है, इसका पता लगाने की जरूरत नहीं होगी।"

इस तरह हम कह सकते हैं कि वैज्ञानिक अनुवाद मुख्यत: भावानुवाद होता है। शुक्ल जी के अनुवाद की भाषा-शैली विषयानुकूल है। उनकी अनुवाद-पद्धति विषय के अनुसार बदलती रही है। ऐतिहासिक रचनाओं में उन्होंने शब्द-अनुवाद पर बल दिया है, किन्तु काव्य के सौन्दर्य की रक्षा करते हुए उसमें अपनी ओर से भी कुछ जोड़ने का प्रयास वे करते रहे हैं। विज्ञानपरक अनुवाद में सारगर्भिता और सटीकता के साथ-साथ उन्होंने यथासमय सरल, बोधगम्य भाषा का प्रयोग किया है। 'विश्व-प्रपंच' उनकी ऐसी ही अनूदित पुस्तक है। इससे उद्धृत निम्नलिखित अंश देखिए-

"जीवधारियों के सम्बन्ध में पहले यह धारणा थी कि सब जीव एक ही साथ सृष्टि में उत्पन्न हुए और बिना किसी परिवर्तन के जीव के ढाँचे जो शुरू में थे वे अब तक चले आ

रहे हैं। डार्विन ने इस विश्वास का खण्डन किया और विकास-सिद्धान्त की स्थापना करके यह सिद्ध कर दिया कि अनेक प्रकार के ढाँचों के जो इतने जीव दिखाई पड़ते हैं, सब एक ही प्रकार के सादे ढाँचे के शुद्ध आदिम जीवों से क्रमशः करोड़ों वर्षों की वंश-परम्परा के बीच अनेक शाखाओं में विभक्त होते हुए उत्पन्न हुए हैं।"

इस प्रकार के अनुवाद भावानुवाद का अच्छा उदाहरण प्रतीत होते हैं। यहाँ मूल कृति के शब्द-चयन, वाक्य-रचना आदि पर ध्यान न देकर केवल उसके भावार्थ को समझने का प्रयास किया जाता है। भावानुवाद कभी पूरे वाक्य का, कभी पैराग्राफ का और कभी पूरे अध्याय का होता है। इसमें लक्ष्य-भाषा की अपनी शब्द-रचना, वाक्य-विन्यास, मुहावरों का प्रयोग आदि की योजना अधिक होती है जिसके फलस्वरूप भाषा में सहज प्रवाह आ जाता है। कहीं-कहीं शब्दानुवाद का भी सहारा लेना पड़ता है। किन्तु भावानुवाद के स्थान पर शब्दानुवाद को प्रधानता देने से सहजता के सिद्धान्त का पालन करना मुश्किल हो जाता है और अनुवाद की भाषा अटपटी और बोझिल बन जाती है।

वैज्ञानिक अनुवाद में सारानुवाद या अनुकूलन के लिए भी कोई स्थान नहीं है क्योंकि इस पद्धति में तथ्यात्मक प्रामाणिकता की सुरक्षा सम्भव नहीं हो पाती। वैज्ञानिक और तकनीकी अनुवाद में स्वच्छन्द अनुवाद को भी मान्यता देना सम्भव नहीं है। हाँ, इतना जरूर है कि जो वैज्ञानिक रचनाएं आमतौर पर सामान्य पाठकों के लिए हैं और जिनका उद्देश्य विज्ञान के स्थूल तथ्यों को जनसाधारण तक पहुँचाना है, उनमें स्वच्छन्दता की थोड़ी-बहुत छूट दी जा सकती है। किन्तु विज्ञान में स्वतन्त्र या मुक्त भाषान्तरण का यह मतलब नहीं है कि मूल में कोई परिवर्तन किया जाये। अनुवादक को केवल उतनी ही स्वतन्त्रता होनी चाहिए जितनी कि विषय को बोधगम्य बनाने या मूल तथ्यों के स्पष्टीकरण के लिए जरूरी है। अनुवादक को इसके लिए सदा प्रयत्नशील रहना चाहिए कि मूल विषय सामान्य पाठकों को यथासम्भव सरल और सुबोध भाषा के माध्यम से उपलब्ध हो जाये।

अनुवाद-विशेषज्ञ नाइडा ने अनुवाद-प्रक्रिया के तीन चरण बताये हैं-

1. **विश्लेषण-** पहले स्रोत भाषा के मूल पाठ का विश्लेषण करने के बाद भावार्थ को समझना।

2. **अन्तरण-** अर्थ-ग्रहण के बाद लक्ष्य-भाषा में भावार्थ-अन्तरण।

3. **पुनर्गठन-** अनूदित भाषा का बनावटीपन या कृत्रिमता दूर करने अथवा उसमें अधिक सहजता या प्रवाह लाने के उद्देश्य से भाषान्तर का पुनर्गठन।

कुछ अन्य विशेषज्ञ अनुवाद-प्रक्रिया में 4 या 5 चरण मानते हैं। शब्दावली और अनुवाद-क्षेत्र में अपने 30 वर्ष के अनुभव के आधार पर मेरी यह मान्यता है कि वैज्ञानिक अनुवाद में हमें मोटे तौर पर दो प्रक्रियाओं से गुजरना पड़ता है। पहले तो हम स्रोत-भाषा की विषय-वस्तु का अध्ययन कर मूल भावार्थ समझने की कोशिश करते हैं। फिर उसे अपने शब्दों में अपनी भाषा-शैली का प्रयोग करते हुए लक्ष्य-भाषा में अभिव्यक्त करते हैं। इस लेख में हम उन्हीं दो मुख्य प्रक्रियाओं-अर्थ-ग्रहण और अर्थ-अभिव्यक्ति के अन्तर्गत वैज्ञानिक अनुवाद से सम्बन्धित समस्याओं का विवेचन-विश्लेषण कर रहे हैं।

अर्थग्रहण की समस्याएं-समानार्थता (पर्याप्तता) - कोई भी अनुवादक मूल लेखक के भावार्थ को समझने के बाद ही लक्ष्य-भाषा में उसे सही-सही रूप में व्यक्त कर पायेगा। इसलिए अनुवादक को सबसे पहले अर्थ-ग्रहण के स्तर पर विषय से सम्बन्धित समस्याओं का सामना करना पड़ता है। स्रोत-भाषा की रचना को समझने में अनुवादक को दो प्रकार के शब्दों से उत्पन्न कठिनाइयों

का सामना करना पड़ता है। एक है-समानार्थक या पर्यायवाची शब्द और दूसरी है-अनेकार्थक शब्द। पर्यायवाची शब्दों से जो समस्याएं उत्पन्न होती हैं उनका मुख्य कारण यह है कि कुछ शब्द सामान्य प्रयोग में तो पर्यायवाची अर्थ में प्रयुक्त होते हैं, किन्तु विषय विशेष में वे भिन्न अर्थ रखते हैं अर्थात् उनमें अर्थ-भेद हो जाता है। दूसरा कारण यह है कि अधिकांश तथाकथित पर्यायवाची शब्द पूर्णत: पर्यायवाची न होकर केवल अंशत: पर्यायवाची होते हैं अर्थात् किसी विशेष परिस्थिति या सन्दर्भ में ही समानार्थक होते हैं।

अनुवादक को अर्थ-ग्रहण के स्तर पर सबसे ज्यादा परेशानी ऐसे शब्दों से होती है जिन्हें आम प्रयोग में तो समानार्थक समझा जाता है किन्तु किसी विशिष्ट क्षेत्र में वे अलग-अलग अर्थ के बोधक होते हैं। ऐसे शब्दों को हम अंशत: समानार्थक शब्द कह सकते हैं और अधिकांश तथाकथित समानार्थक शब्द इसी वर्ग में आते हैं। एक कोशकार के अनुसार समानार्थता या पर्याप्तता का मतलब है-दो या दो से अधिक शब्दों का बिल्कुल एक ही मूल अर्थ में प्रयोग। ऐसे शब्दों को पूर्णत: पर्यायवाची कह सकते हैं और सैद्धान्तिक दृष्टि से यहाँ एक के स्थान पर दूसरे शब्द का प्रयोग किया जा सकता है। किन्तु व्यवहार में यह हमेशा सम्भव नहीं होता। अक्सर देखा जाता है कि ऐसे दो समानार्थक शब्दों में एक संक्षिप्त होता है तो दूसरा व्याख्यात्मक या फिर एक शास्त्रीय विचार-विमर्श में इस्तेमाल होता है तो दूसरा लोकप्रिय साहित्य में। निम्नलिखित उदाहरण देखिए-

Vitamin C और Ascorbic acid।

Erythrocyte और Red blood cells।

कायिकी और शरीर क्रिया-विज्ञान।

कशेरुकी और रीढ़ की हड्डी वाले जानवर।

किसी विषय में दो तकनीकी शब्द समानार्थक हैं या नहीं इसका निर्णय कैसे किया जाए? आमतौर पर इसके लिए प्रतिस्थापन के सिद्धान्त पर जोर दिया जाता है। किन्तु वैज्ञानिक सन्दर्भ में इस कसौटी पर पर्यायता का मूल्यांकन करना तर्कसंगत नहीं ठहरेगा। वैज्ञानिक शब्दों की परिभाषा या व्याख्या सुनिश्चित होती है, इसलिए परिभाषित अर्थ को ही आधार मानना अधिक तर्कसंगत होता है। किन्तु तकनीकी अर्थ एक होने पर भी एक की जगह दूसरे शब्द का प्रयोग करना प्राय: सम्भव नहीं होता जैसा कि उपर्युक्त दृष्टान्तों से स्पष्ट हो जाता है।

पर्यायवाची शब्दों के सन्दर्भ में अनुवादक को सबसे ज्यादा परेशानी ऐसे शब्दों से होती है जो एक ही अध्याय या पुस्तक में कहीं तो समानार्थक और कहीं भिन्नार्थक हो जाते हैं। ऐसे दो शब्द हैं-'डेवलपमेंट' और 'इवोल्यूशन'। कुछ वर्ष पहले नेशनल बुक ट्रस्ट ने मुझे एक पुस्तक के अनुवाद का कार्य दिया। यूनेस्को द्वारा प्रकाशित इस पुस्तक का नाम है : 'दि इमरजेन्स ऑफ मैन'। इस पुस्तक में नौ अध्याय हैं। इनमें जीवविज्ञान के अतिरिक्त इतिहास, पुरातत्त्व, मानवविज्ञान, भू-विज्ञान, समाजशास्त्र आदि कई विषयों से सम्बन्धित सामग्री का समावेश है। इस ग्रन्थ का अनुवाद करते समय मेरे सामने कई बार ऐसी स्थितियाँ आईं जहाँ एक स्थल पर ये दोनों शब्द समान अर्थ में और दूसरी जगह अलग-अलग अर्थ में प्रयोग किये गये हैं। निम्नलिखित अंशों का अनुवाद करते समय मुझे इन शब्दों को भाषान्तरित करने में काफी सतर्क रहना पड़ा।

An early exponent of the doctrine of evolution was the German zooligist Ernst Haeckel. These drawings by Haeckel

himself, done in 1919, illustrate one example of his theory of recapitulation, i.e. if a land animal had ancestors which lived in water and used gills, each embryo of that animal continues to develop gills even though they may be lost during later embryonic development.

"विकासवाद का एक शुरू का प्राणिविज्ञानी (जैविकी विशारद) हेकेल (1849-1919) *था। उसके पुनरावर्तन के सिद्धान्त के सिद्धान्त के अनुसार यदि किसी स्थलप्राणी के पूर्वज पानी में रहते थे और गिलों का उपयोग करते थे, तो उस प्राणी के प्रत्येक भ्रूण में गिलों का बढ़ना जारी रहता है चाहे वे बाद के भ्रूण-विकास में नष्ट हो जायें।"*

इस प्रकार तो इस अनुवाद में कई दोष हैं लेकिन विषय की दृष्टि से सबसे बड़ा दोष यह है कि जीवविज्ञान की दो प्रमुख संकल्पनाओं-इवोल्यूशन और डेवलपमेंट-के लिए हिन्दी में विकास शब्द का ही प्रयोग किया गया है। आम बोलचाल या सामान्य प्रकरण में ऐसा प्रयोग चल सकता है किन्तु यहाँ यह आपत्तिजनक है। उपर्युक्त उदाहरण में 'भ्रूण विकास' की जगह सही पर्याय होगा 'भ्रूण परिवर्धन'।

दूसरे प्रकार की समानार्थता में वे शब्द आते हैं जो एक ही विषय या क्षेत्र में कहीं तो समानार्थक हैं और कहीं भिन्नार्थक हो जाते हैं। अंग्रेजी के 'पॉयजन', 'टॉक्सिन' और 'वेनम' ऐसे ही शब्द हैं। आम बोलचाल में इनको अवसर पर्यायवाची मान लिया जाता है और शायद इसलिए कुछ सामान्य 'अंग्रेजी-हिन्दी कोशों' में इन तीनों शब्दों के लिए केवल 'विष' पर्याय दिया गया है। किन्तु अनुवादक को वहाँ काफी कठिनाई का सामना करना पड़ता है जहाँ एक वाक्य या अनुच्छेद में इन तीनों शब्दों का प्रयोग होता है। निम्नलिखित उदाहरण देखें-

"Two types of toxins-haemotoxins and neurotoxins are present in the venom of posionous snakes".

स्पष्ट है कि यहाँ 'पॉयजन' और 'वेनम' समानार्थक नहीं कहे जा सकते। इनके सम्बन्ध को समानार्थता की बजाय न्यूनार्थता कहना अधिक उपयुक्त होगा। न्यूनार्थता में एक शब्द वर्ग का बोधक है और दूसरा शब्द उसके एक उपवर्ग का। यहाँ अंग्रेजी के पॉयजन शब्द का व्यापक अर्थ है और वेनम केवल उसका एक प्रकार है जैसा कि उसकी व्याख्या से स्पष्ट हो जाता है-"साँप, मछली, बिच्छू, बर्र, शहद की मक्खी आदि जीवधारियों द्वारा उत्पन्न विष"। इस तरह 'विष' शब्द का प्रयोग इस संकल्पना के लिए ठीक नहीं रहेगा। यही बात अंग्रेजी शब्द टॉक्सिन पर भी लागू होती है। इस वजह से 'वेनम' और 'टॉक्सिन' के लिए क्रमशः 'जीविष' और 'आविष' शब्द गढ़े गये हैं।

विधि साहित्य की हिन्दी

विधि की भाषा- विधि की भाषा का अपना वैशिष्ट्य होता है। इसमें शब्दों का प्रयोग विशेष अर्थ के प्रतीक के रूप में किया जाता है। अन्य क्षेत्रों में लेखक प्रचलित शब्दों और पदों का प्रयोग उसी अर्थ में करता है जिसमें सामान्यतया होता है। किन्तु विधि में अनेक स्थलों पर शब्दों का सामान्य अर्थ से भिन्न अर्थ दिया जाता है। जैसे प्रत्येक भारतीय यह जानता है कि 'भारत' क्या है? फिर भी कुछ अधिनियमों में आप इस प्रकार की परिभाषा पायेंगे-...'भारत' से जम्मू-कश्मीर राज्य के सिवाय भारत का राज्यक्षेत्र अभिप्रेत है। या एक और उदाहरण लें-'जीवन' शब्द मानव के जीवन का द्योतक है। इसके पीछे एक मात्र उद्देश्य यह है कि विधि की अभिव्यक्ति इस प्रकार हो

जिससे न्यायालय द्वारा मान्य निर्वाचन के सिद्धान्तों को लागू करके जब अर्थान्वयन किया जाए तो वही अर्थ प्रकट हो जो प्रारूपकार को अभीष्ट है।

प्रारूपकार का यह प्रयत्न होता है कि जो प्रारूप वह तैयार कर रहा है उसकी भाषा इस प्रकार सुबद्ध, स्पष्ट और परिसंहत हो कि उससे केवल एक ही अर्थ निकले। प्रयत्न करने पर भी दूसरा कोई अर्थ न निकल पाये। जो एक मात्र अर्थ निकले वह भी वही हो जो प्रारूपकार को अभीष्ट है। इसे 'एकार्थता का नियम' कहते हैं। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए विधि में शब्दों का अर्थ परिसीमित कर दिया जाता है और वाक्य रचना इस प्रकार की जाती है कि एक ही अर्थ का बोध हो। इसी उद्देश्य के कारण कभी-कभी वाक्य दुर्बोध हो जाते हैं, भाषा अटपटी हो जाती है तथा बोलचाल से दूर हो जाती है। किन्तु जब तक हम अंग्रेजी से आगत विधि के निर्वचन की प्रणाली को अपनाये रखते हैं, तब तक इन भाषागत दुर्गुणों से छुटकारा नहीं हो सकता।

विधि की भाषा की एक और विशेषता है जो विधि के उद्देश्य से जुड़ी हुई है। सरकार जब विधि की रचना करती है तो उससे अधिकारों का सृजन होता है या अधिकारों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है या मानव के आचरण पर किसी न किसी प्रकार का बन्धन लगाया जाता है।

इन अधिकारों या बन्धनों की सीमाओं का निर्धारण करना न्यायालय का कार्य है। न्यायालय का मार्ग-निर्देश विधि की भाषा से ही हो सकता है। न्यायालय किसी व्यक्ति विशेष के भाषण या उसके विचारों पर ध्यान नहीं दे सकते। किसी भी अन्य क्षेत्र में किसी वाक्य का क्या अर्थ है? यह पाठक स्वयं निर्णय करता है, किन्तु विधि की भाषा का अर्थ लगाने का कार्य न्यायालय को सौंपा गया है। अतएव उसमें अवश्य ही दो या अधिक पक्षकार होते हैं जो अपने हितों का संरक्षण करने की दृष्टि से अपने पक्ष में निर्णय पाने के लिए तर्क प्रस्तुत करते हैं। ऐसा विधि की भाषा के सम्बन्ध में ही होता है अन्य क्षेत्रों में नहीं। इसलिए प्रारूपकार सतर्क होकर विधि की रचना करता है।

विधि के अनुवाद के सम्बन्ध में एक बात और ध्यान देने योग्य है। अधिनियमों और अधीनस्थ विधान का अनुवाद विहित प्रक्रिया का अनुसरण करने पर मूल के समतुल्य हो जाता है। इसके बारे में संविधान के अनुच्छेद 348 में और राजभाषा अधिनियम, 1963 की धारा 5 में उपबन्ध है। धारा 5 के अनुसार जब किसी केन्द्रीय अधिनियम का हिन्दी में अनुवाद करके उसे राष्ट्रपति के प्राधिकार से भारत के राजपत्र में प्रकाशित किया जाता है तो वह उस अधिनियम का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ हो जाता है। न्यायालय हिन्दी पाठ के आधार पर निर्णय दे सकता है। हिन्दी में प्राधिकृत पाठ के निर्वचन के लिए भी वही सिद्धान्त लागू होंगे जो अंग्रेजी पाठ के अर्थान्वयन में लागू किये जाते हैं। इसलिए हिन्दी में अनुवाद तैयार करते समय अनुवादक को उन सभी नियमों और सिद्धान्तों को अपने समक्ष रखना चाहिए जो प्रारूपकार रखता है। अनुवादक वास्तव में प्रारूपकार ही होता है। उसका कार्य मूल अधिनियम में अधिकथित विधि को यथावत लक्ष्य भाषा में अभिव्यक्त करना होता है।

भाषा और संस्कृति- यह नहीं भुलाया जा सकता कि कोई भी दो भाषाएं शैली और वाक्य-रचना की दृष्टि से एक-सी नहीं होतीं। इन शैलीगत भिन्नताओं को ध्यान में रखकर अनुवाद किया जाना चाहिए। यदि लक्ष्य-भाषा में मूल भाषा की छाया आ गई तो वह अनुवाद दोषयुक्त माना जायेगा। अनुवादक का दायित्व है कि वह अनुवाद की भाषा को यथाशक्ति भाषा के स्वभाव और शैली के अनुरूप रखे।

भाषा और संस्कृति एक-दूसरे से जुड़ी होती हैं। दोनों में एक साथ परिवर्तन होते हैं। यदि कोई भाषा मृत हो जाती है तो उसके साथ संयुक्त संस्कृति भी सूख जाती है। विश्व के इतिहास में इसके अनेक उदाहरण मिलते हैं। मैक्सिको की मय संस्कृति और उसकी भाषा दोनों एक साथ ही विनष्ट हो गई। जब एक भाषा से हम दूसरी भाषा में भाषान्तर करते हैं तब मूल भाषा के कुछ शब्द ऐसे होते हैं जिनके लिए लक्ष्य-भाषा में पर्याप्त खोजना असम्भव हो जाता है। इसके पीछे भी मुख्य कारण यह है कि उन भाषाओं के बीच उतनी ही दूरी होती है जितनी उन दो संस्कृतियों के बीच जिससे वे दो भाषाएं जुड़ी हैं। हिन्दी के 'पूजा', 'अर्चना', 'आरती', 'धूप', 'दीप' आदि शब्दों के लिए उपयुक्त अंग्रेजी शब्द खोज पाना दुष्कर कार्य है। इसी प्रकार भारतीय संस्कृति के 'यज्ञ', 'तपस्या', 'आश्रम', 'जप', 'श्राद्ध' आदि के पर्यायवाची भारत से बाहर की अन्य भाषाओं में उपलब्ध नहीं हैं।

विधि में अनुवाद करते समय सांस्कृतिक अन्तर के कारण उत्पन्न इस प्रकार की कठिनाइयाँ साहित्य की अपेक्षा कम होती हैं। फिर भी कुछ ऐसे अंग्रेजी शब्द हैं जिनके हिन्दी में प्रति शब्द कठिनाई से मिलते हैं; जैसे-handle, dispose, case, cousin, brother-in-law, sister-in-law, grand parents.

इन शब्दों के लिए सन्दर्भ के अनुसार अलग-अलग पर्याय रखने होंगे। विधि में handle के लिए हाथ में 'हथालना' क्रिया बनाई गई है। इस नवीन शब्द का अधिनियमों और अधिसूचनाओं में प्रयोग किया गया है। यद्यपि यह शब्द अपरिचित है, किन्तु handle के साथ इसका अर्थसाम्य है और वह सही अर्थ का द्योतन करने में सक्षम है। यही एक दूसरी बात भी उल्लेखनीय है कि प्रत्येक भाषा में कुछ बातों को कहने का एक अपना ढंग होता है; जैसे-अंग्रेजी में हम कहेंगे what time is it? या what is the time? हिन्दी में हम कहते हैं 'क्या बज रहा है?' अथवा 'क्या बजा है?' यदि 'क्या बज रहा है?' का शाब्दिक अनुवाद किया जाए तो अंग्रेजी में होगा 'what is ringing' या 'how much is ringing?' अतएव विधि में भी अनुवाद करते समय भाषा के मुहावरे को पहचानते हुए तब वाक्य-रचना करनी चाहिए।

सामान्यजन का मिथक- अनुवादक को बिना माँगे सलाह देने वाले लोग अक्सर यह सलाह देते हैं कि भाषा इस प्रकार की हो कि वह सामान्य व्यक्ति की समझ में आ जाए। विधि जैसे विषय की गूढ़ता या विशिष्ट प्रयुक्तियों की परवाह किये बिना विधि से सम्बन्धित लेखन के बारे में भी इसी प्रकार की मन्त्रणा दी जाती है। यह ध्यान देने योग्य है कि विधि में शब्दों के अर्थ न्यायालयों द्वारा किये गये निर्वचन से निश्चित होते हैं। न्यायालय समय-समय पर अपने निर्वचन को परिवर्तित भी करते हैं। प्रारूपकार अपनी सुविधानुसार शब्दों को विशेष अर्थ देते हैं। संसद द्वारा बनाये गये अधिनियमों में बहुत-से शब्दों और अभिव्यक्तियों की परिभाषा देकर उनका अर्थ सुनिश्चित किया जाता है। जो व्यक्ति उपर्युक्त शर्तों से अनभिज्ञ हैं, वह विधि के अर्थ को सही तरह से या पूरी तरह से समझ नहीं सकता।

यही बातें विधि के अनुवाद पर भी लागू होंगी। वैसे भाषा-शास्त्र के अनुसार भाषा के प्रयोग में अनेक मानक होते हैं। एक तो अनौपचारिक स्तर, जिसमें लोग सामान्य दैनन्दिन जीवन के विषय पर एक-दूसरे से वार्तालाप करते हैं; जैसे-एक-दूसरे का स्वास्थ्य पूछना या मौसम के बारे में अथवा तात्कालिक किसी राजनीतिक विषय पर सूचना का आदान-प्रदान। दूसरा स्तर है-औपचारिक स्तर। जब किसी अपरिचित व्यक्ति से शिष्टता के नाते वार्तालाप होता है, तब उसमें शब्द-प्रयोग भिन्न होता है। ऐसे ही सामान्य पत्र-व्यवहार में या शासकीय पत्र-व्यवहार में औपचारिकता बरती जाती है।

भाषा का तीसरा स्तर है-विशेष जानकारी या ज्ञान का आदान-प्रदान। यहाँ पर जो व्यक्ति अभिव्यक्ति करता है वह भी विशेषज्ञ है और जिसे वह सम्बोधित करता है वह भी विशेषज्ञ है। दोनों ही विशेषज्ञ अपने विषय की भाषा से पूरी तरह परिचित हैं, इसलिए वे अपने विषय से सम्बन्धित प्रतीकों के माध्यम से चर्चा करते हैं। जब एक डॉक्टर दूसरे डॉक्टर को किसी मरीज के विषय में बताता है तब वह इसी प्रकार की विशिष्ट भाषा का प्रयोग करता है। इसी प्रकार जब एक इंजीनियर दूसरे इंजीनियर को अपने क्षेत्र की कुछ जानकारी देता है तब भी वह इसी प्रकार की भाषा का प्रयोग करता है जिससे वह कम-से-कम समय में अधिक-से-अधिक अर्थ-बोध करा सके और गलती की गुंजाइश न रहे। यह स्थिति विधि में भी है। अतएव यह कहना या निर्देश देना वर्तमान विधिक प्रणाली में सम्भव नहीं है कि विधि का प्रारूपण इस प्रकार हो कि वह सामान्य-जन के समझ में आ जाये।

सुगठित और परिसंहत भाषा- विधि में प्रयत्न यह किया जाता है कि भाषा सुगठित और परिसंहत हो। बिखरी हुई, अनावश्यक फैलाव लिये हुए शिथिल भाषा नहीं। अंग्रेजी परकीय भाषा है और उसका भारतीय लोगों को सीमित ज्ञान होता है। इस कारण अंग्रेजी में बनाये हुए प्रारूपों में लम्बे और भद्दे वाक्य देखने में आते हैं। जब उनका हिन्दी में अनुवाद करना पड़ता है तब यदि अनुवाद भी उसी प्रकार का हो गया हो तो उस पर बहुत अधिक आक्षेप होता है। कारण यह है कि अंग्रेजी के अज्ञान के कारण अंग्रेजी में की गई रचना के दोष हमें दिखाई नहीं पड़ते। सभी विधान-मण्डल अभी भी इंग्लैण्ड की प्रारूप प्रणाली को अपनाये हुए हैं जिसमें धाराओं को लम्बे, जटिल और घुमावदार वाक्यों के माध्यम से अभिव्यक्त किया जाता है।

दूसरी कठिनाई अनुवादक के सामने यह आती है कि हिन्दी और अंग्रेजी की वाक्य-रचना में मूलभूत अन्तर है। भारतीय साक्ष्य अधिनियम की विविध प्रमितता, साहित्यिक कलात्मकता और अभिव्यक्ति के सौन्दर्य का उदाहरण माना जाता है। उसमें अंग्रेजी भाषा का जिस प्रकार सक्षम और सार्थक प्रयोग किया गया है वैसा ही प्रयोग हिन्दी में अधिनियम बनाते समय किया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए साक्ष्य अधिनियम की धारा 75 देखें जो निम्न प्रकार है-

75. All other documents are private.

75. *अन्य सभी दस्तावेज प्राइवेट हैं।*

इसी प्रकार धारा 56 और 62 का प्रारम्भिक भाग इस सन्दर्भ में अवलोकनीय है-

56. No fact of which the Court will take judicial notice need be proved.

56. *जिस तथ्य की न्यायालय न्यायिक अवेक्षा करेगा, उसे साबित करना आवश्यक नहीं है।*

61. The contents of documents may be proved either by primary or by secondary evidence.

61. *दस्तावेजों की अन्तर्वस्तु या तो प्राथमिक या द्वितीयक साक्ष्य द्वारा साबित की जा सकेगी।*

62. Primary evidence means the documents itself produced for the inspection of the Court.

62. *प्राथमिक साक्ष्य से न्यायालय के निरीक्षण के लिए पेश की गई दस्तावेज स्वयं अभिप्रेत है।*

जो शब्द बड़े और कठिन जान पड़ते हैं, अर्थात् जिनका प्रयोग कम होता है उनसे सतर्क होकर अनुवादक शब्द कोश की सहायता से उनका सही अर्थ जानने का प्रयत्न करते हैं। किन्तु यह भी अनुभव से देखने में आता है कि जो शब्द सरल दिखाई पड़ते हैं वे बहुधा धोखे में डाल देते हैं। विधि में सामान्य बोलचाल के कुछ शब्दों के विशेष अर्थ होते हैं। यदि अनुवादक उस विशेष अर्थ को नहीं भाँप पाया तो वह उसका गलत अनुवाद कर देगा, जैसे-भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 के दृष्टान्त '(एच)' में प्रयुक्त protest। इसी अधिनियम की धारा 21 में दृष्टान्त (सी) में date शब्द, और धारा 32 में प्रयुक्त verbal शब्द। भारत के संविधान के अनुच्छेद 299 में आने वाला शब्द assurance। संविधान के ही अनुच्छेद 310 में प्रयुक्त शब्द posting। इसी प्रकार सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम की धारा 6(1) में प्रयुक्त farmer शब्द।

संविधान के अनुच्छेद 299 में assurance का अर्थ 'बीमा' नहीं है। वहाँ उसका अर्थ 'हस्तान्तरण पत्र' है जब भूमि, भवन का विक्रय, बन्धक आदि द्वारा किसी दूसरे व्यक्ति को अन्तरण किया जाता है तब उस दस्तावेज की अंग्रेजी में 'assurance' कहते हैं।

सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम की धारा 6 में जहाँ farmer का प्रयोग किया गया है वहाँ उसका अर्थ 'कृषक' नहीं है। उसका अर्थ है वह व्यक्ति जो लगान वसूल करके सरकार को जमा करता है। इसी प्रकार भारतीय साक्ष्य अधिनियम में प्रयोग किये गये शब्द protest का अर्थ 'विरोध करना' या 'असहमति प्रकट करना नहीं है'। वहाँ इसका अर्थ है-विशेष प्रकार का साक्ष्य। Protest का यही अर्थ Negotiable Instrument Act में भी है।

अतएव, अनुवादक को निरन्तर जागरुक रहते हुए सन्दर्भ से यह अनुमान कर लेना चाहिए कि किसी सामान्य शब्द का उस सन्दर्भ में कोई विशेष अर्थ तो नहीं।

संकल्पना का अनुवाद अनिवार्यतः- जब अंग्रेजी का कोई शब्द किसी संकल्पना का द्योतन करने वाला हो तब अनिवार्य रूप से उसका अनुवाद किया जाना चाहिए। जो शब्द संकल्पना की ओर संकेत करते हैं उनसे अन्य शब्द उपजने की सम्भावना बहुत अधिक होती है। साथ ही उनसे मिलती-जुलती संकल्पनाओं के लिए भी शब्द खोज कर उनका प्रयोग करना पड़ता है। इसलिए संकल्पना के प्रतीक परकीय भाषा के मूल शब्द को ग्रहण नहीं किया जा सकता। किन्तु ऐसे शब्द जो संकल्पना नहीं हैं किन्तु किसी वस्तु आदि का नाम है या इसी प्रकार का कोई अन्य शब्द है, वह आवश्यकतानुसार हिन्दी में ग्रहण किया जा सकता है। इस प्रकार के अनेक शब्द हिन्दी में प्रचलित हैं। विधि के क्षेत्र में भी ऐसे ढेरों शब्द हैं, जैसे-बैंक, चैक, चार्टर, पॉलिसी, ड्राफ्ट, रेल, ट्राम, प्लेटफॉर्म, जमानत, अर्जी, असल, नकली आदि।

जब प्रायोगिक रूप से अंग्रेजी के शब्द के प्रतितुल्य कोई शब्द रखा जाता है तब उसी समय उस संकल्पना के संस्पर्शी, अर्थात् मिलते-जुलते अर्थ देने वाले सभी शब्दों पर विचार कर लेना चाहिए, अर्थात् उसके निकट अर्थ वाले सभी शब्दों पर एक साथ विचार करके उन्हें रूढ़ कर देना चाहिए; जैसे-evidence के लिए 'साक्ष्य' शब्द है। इससे मिलते-जुलते शब्द deposition के लिए 'अभिसाक्ष्य' शब्द रखा गया है। इसी के निकट अर्थ वाले testimony के लिए 'परिसाक्ष्य' है और परक्राम्य लिखने के प्रयोग में आने वाले शब्द protest के लिए 'प्रसाक्ष्य' है। Admission और confession संस्पर्शी शब्द हैं। इनके लिए 'स्वीकृति' और 'संस्वीकृति' शब्द रखे गये हैं।

Legislation और Constitution भी संस्पर्शी हैं और इनके लिए हिन्दी के शब्द हैं-'विधान', 'संविधान'। अतएव जब भी पूर्व निश्चित शब्दावली का अभाव हो तब उपर्युक्त सिद्धान्तों को दृष्टि में रखते हुए शब्द चयन करना चाहिए।

अर्थ सर्वोपरि किन्तु शैली पर भी ध्यान- विधि में एक भाषा से दूसरी भाषा में पाठ तैयार करते समय यह ध्यान में रखना चाहिए कि अर्थ सर्वोपरि है। यदि सही अर्थ अभिव्यक्त करने में शैली का स्तर गिर जाता है तो भी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। वैसे प्रयत्न तो यह होना चाहिए कि अर्थ की सही अभिव्यक्ति के साथ-साथ शैली भी उत्तम हो। किन्तु यदि दोनों में से एक का निर्वाचन करना हो तो शैली में ही समझौता किया जा सकता है, अर्थ में नहीं। हिन्दी में गर्भ वाक्यों का प्रयोग नहीं किया जाता। किन्तु विधि में जब हमें एक ही वाक्य में बहुत-सी बातें कहनी हैं तब विराम चिन्ह के बीच इस प्रकार के उप-वाक्यों को इसका अर्थ स्पष्ट करना होता है। इसका उदाहरण संविधान के अनुच्छेद 395 में है।

"395. The Indian Independence Act, 1947, and the Government of India Act, 1935, together with all enactments amending or supplementing the latter Act, but noty including the Abolition of Privy Council Jurisdiction Act, 1949, are hereby repeated."

"395. *भारत स्वतन्त्रता अधिनियम,* 1947 *और भारत शासन अधिनियम,* 1935 *के पश्चात् कथित अधिनियम की संशोधक या अनुपूरक सभी अधिनियमों के साथ, जिनके अन्तर्गत प्रिवी कौंसिल अधिकारिता उत्पादन अधिनियम,* 1949 *नहीं है, इसके द्वारा निरसन किया जाता है।"*

शैली के प्रयोजन के लिए, वाक्य रचना में परिवर्तन किये जा सकते हैं; जैसे-विशेषण और क्रिया-विशेषण उपवाक्य को शैली की दृष्टि को ध्यान में रखते हुए, अर्थ परिवर्तन किये बिना, हिन्दी के स्वभाव के अनुरूप विशेष्य या क्रिया के निकट रखा जा सकता है।

कुछ अभिव्यक्तियाँ अनुवाद की भाषा में अप्रिय प्रतीत होती हैं। ऐसी अभिव्यक्तियों के स्थान पर उसी अर्थ का द्योतन करने वाली प्रियकर अभिव्यक्तियों या शब्दों का प्रयोग किया जा सकता है; जैसे-Persons of either sex का यह अनुवाद हो सकता है-"चाहे वह किसी भी लिंग का हो।" किन्तु यह हिन्दी में सुरुचिपूर्ण प्रतीत नहीं होता। इसलिए इसे बदल कर यह कहना उचित होगा-"चाहे वह स्त्री हो या पुरुष"।

इसी प्रकार you का पर्यायवाची हिन्दी में 'तुम' है। किन्तु यथासम्भव सुसंस्कृत हिन्दी-भाषी व्यक्ति 'तुम' के स्थान पर 'आप' का प्रयोग करते हैं। इसलिए समान या वारण्ट आदि में सम्बोधित व्यक्ति के प्रति you के स्थान पर 'आप' का प्रयोग किया गया है।

उदाहरणार्थ-

WHEREAS Your attendance is necessary to answer to a charge of (state shortly the offence charged), you are hereby required to appear in person (or by pleader, the case may be) before the (Magistrate) of .... on the ..... day of .... Herein fail not.

....(आरोपित अपराध संक्षेप में लिखिए) के आरोप का उत्तर देने के लिए आपका हाजिर होना। आवश्यक है, इसलिए आपसे अपेक्षा की जाती है कि आप स्वयं (या, यथास्थिति

प्लीडर द्वारा)... के ... (मजिस्ट्रेट) के समक्ष तारीख .... को हाजिर हों। इसमें चूक नहीं होनी चाहिए।

प्रश्न 5. प्रौद्योगिकी क्षेत्र के अनुवाद के विषय में आप क्या जानते हैं?

अथवा प्रौद्योगिकी क्षेत्र एवं अनुवाद की व्याख्या कीजिए।

उत्तर- वर्तमान संसार में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में जिस पैमाने पर अंतर्राष्ट्रीय संपर्क और सहयोग हो रहा है वह इस क्षेत्र में अनुवाद की विशेष प्रासंगिकता एवं अनिवार्यता प्रमाणित कर रहा है। सहयोग के समान प्रतिद्वंद्विता भी अनुवाद की प्रेरणा देती है। इस क्षेत्र में कुछ देश बहुत विकसित हैं। वे अपने विकास की गति और तेज बना लेना चाहते हैं। कम विकसित देश विकास करना चाहते हैं। कोई भी देश आज विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के मोह से नहीं छूटा है। चाहने पर भी वह छूट नहीं सकता क्योंकि इस विकास के बगैर वह पिछड़ जायेगा, शायद दूसरों से निगल लिया जायेगा।

जैसा कि विज्ञान तथा तकनालाजी का संक्षिप्त इतिहास बताता है-"पिछले सौ वर्षों की अवधि में विज्ञान ने सभ्यता पर जितना प्रभाव और परिवर्तन पेश किया है उतना रोम के हजार वर्षों में तो क्या, पुराने शिला युग के लाखों वर्षों में भी नहीं हो पाया है। इलैक्ट्रॉनिकी बीसवीं शताब्दी की देन है। प्रथम सार्वजनिक कंप्यूटर ENIAC (इलेक्ट्रॉनिक न्यूमेरिकल इंटरप्रेटर एण्ड कैलकुलेटर) अमेरिका के पेंसिलवेनिया विश्वविद्यालय में सन् 1946 में पेश किया गया था। मतलब यह कि कंप्यूटर ने 60 वर्ष भी मुश्किल से ही पूरे किये हैं।

गत सौ वर्षों में अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में इंग्लैंड तथा अमेरिका के सितारे बुलंद थे। उनकी भाषा अंग्रेजी विज्ञान और तकनालाजी के माध्यम से बड़ी सशक्त हो सकी। उपनिवेशवाद ने भारत, बर्मा जैसे देशों में अंग्रेजी का रोब जमा दिया।

वस्तुत: विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के विकास में सारे देशों का योग रहा है। इसका प्रारंभिक विकास पूर्व में हुआ था। अरबों ने इसे यूरोप पहुँचाया। यूरोप में तेरहवीं सदी से ही शिक्षा-प्रसार का गंभीर प्रयत्न चला था। उसी सदी में पेरिस, आक्सफोर्ड, पादुबा, नेपिल्स आदि के विश्वविद्यालयों का श्रीगणेश किया गया। पंद्रहवीं सदी से यूरोपीय वैज्ञानिकों की उज्ज्वल परंपरा जारी हुई।

चीन ने कागज-निर्माण, मुद्रण तथा बारूद-निर्माण की तकनालाजी संसार को दी थी। आतिशबाजी उसी देश की देन मानी जाती है। अरबों ने वैज्ञानिक आविष्कारों में अत्यधिक क्षमता पाई। कहते हैं, जब कोई अरब राजा दूसरे देश पर विजय पाता तब संधि की पहली शर्त यह होती कि हारे हुए देश के सारे वैज्ञानिक ग्रंथों को विजेता की सेवा में पेश करना चाहिए। नौवीं शती में अरब के जबीर इबन हय्यां ने अल्केमी का आविष्कार किया था। गणित, खगोल विज्ञान, आवुर्विज्ञान तथा भौतिकी में अरबों का योगदान महत्वपूर्ण था।

यूरोप के विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के विकास में विभिन्न देशों का योगदान है। इटली, फ्रांस, जर्मनी, पोलैण्ड आदि देशों में विभिन्न युगों में महान आविष्कारक हुए। इन देशों के वैज्ञानिकों ने अपने ग्रंथों में तकनीकी भाषा हेतु ग्रीक तथा लैटिन शब्द ही बुनियादी तौर पर स्वीकार किए थे। आधुनिक आयुर्विज्ञान धारा 'एलोपैथी' की शब्द-व्युत्पत्ति ग्रीक के अलोस (अन्य) तथा पायोस (पीड़ा) के संयोग से मानी गई है। 'मेडिकल एटिमालाजी' नामक कोश की भूमिका में सोदाहरण दिखाया गया है कि अंग्रेजी के मेडिकल संकेतित शब्दों में ज्यादातर ग्रीक से व्युत्पन्न हैं। लैटिन से भी कई शब्द व्युत्पन्न हैं। अरबों से औषधि-विज्ञान के बहुत से शब्द लिये गये हैं। फ्रेंच से सीधे अथवा परिवर्तित रूप में शब्द ग्रहण किए गए हैं। इटली, डच, फारसी तथा चीनी के भी शब्द इन शब्दों में प्राप्त होते हैं।

यह निष्कर्ष इस बात को प्रमाणित करता है कि अंग्रेजी की तकनीकी शब्दावली शुद्ध अंग्रेजी शब्दावली नहीं है। कई भाषाओं के शब्द मूल रूप में अथवा परिवर्तित रूप में उनमें सम्मिलित हुए हैं।

लोकप्रिय अनुवाद एवं तकनीकी अनुवाद के बीच में स्वतंत्र अनुवाद अथवा रूपांतरण कहलाने लायक प्रणाली भी होती है। कठिन वैज्ञानिक ग्रंथों के अच्छे अनुवाद में ज्यादातर लोगों को सफल होते देखकर विद्वानों ने यह प्रस्ताव किया है कि मूल भाषा के महत्वपूर्ण ग्रंथों को पढ़ने के बाद अपनी तरफ से उन ग्रंथों को नये सिरे से लक्ष्यभाषा में रचना चाहिए। पाठ्यग्रंथ-निर्माण के क्षेत्र में इस प्रणाली की विशेष सिफारिश की जाती है। एक हद तक यह उचित लगता तो है, लेकिन सार-लेखन मूल ग्रंथ का प्रतिनिधि बन नहीं सकता। बड़े आचार्यों के वैज्ञानिक ग्रंथों का अनुवाद भाषा की वैज्ञानिक संपदा की वृद्धि हेतु अनिवार्य भी है।

अंग्रेजी के वैज्ञानिक तथा तकनीकी ग्रंथों के यथातथ्य अनुवाद में सबसे बड़ी बाधा उस भाषा की विशिष्ट शैली है। इस विषय पर केरल के एक वैज्ञानिक लेखक के विचारों का सार यहाँ दे रहा हूँ। वे कहते हैं कि वैज्ञानिक अंग्रेजी भाषा तथ्य-प्रधान होती है। उसके शब्दों की सूक्ष्मर्थिता तथा किफायत अन्य दो विशेषतायें हैं। किसी-किसी वैज्ञानिक ग्रंथ की वाक्य-संरचना बड़ी संकीर्ण होती है। वाक्यों का जटिल गठन विधि की भाषा में भी होता है। विज्ञान में प्राय: बड़े वाक्यों को तोड़कर छोटे वाक्यों की शैली स्वीकार की जा सकती है। पर वाक्यों का संबंध दृढ़ बना रहे एवं अर्थ की भ्रांति न हो।

अनुवाद में प्रमुख समस्या वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली के अनुवाद की है। इसमें क्रियारूप तथा छोटे-छोटे पदबंध भी सम्मिलित हैं। अनुवाद के विषय में आम लोगों के पक्षधर यही बात दुहराते हैं कि सरल से सरल शब्द स्वीकार कीजिए। वे वैज्ञानिक शब्दों की बारीकियों पर सोचने का कष्ट नहीं उठाते।

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दों का अनुवाद करते समय हमें सबसे पहले यह देखना है कि मूल ग्रंथ में जिस संज्ञा अथवा संकल्पना का परिचय दिया जा रहा है वह हमारे देश या राज्य हेतु पूर्वपरिचित है कि नहीं। भारत में गणित, खगोल विज्ञान, आयुर्विज्ञान, कूटनीति आदि विषय काफी प्रौढ़ दशा में रहे थे। इसलिए उनकी संकेतित शब्दावली तथा संकल्पनायें हमें संस्कृत ग्रंथों में मिलती हैं। जहाँ वे सुलभ हैं वहाँ उन्हें स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। यूरोप की आधुनिक भाषाओं ने लैटिन एवं ग्रीक से बड़ी संख्या में तकनीकी शब्दावली ग्रहण की है। जैसे यूरोप के देशों हेतु लैटिन तथा ग्रीक मूल भाषायें रही हैं वैसे ही आधुनिक भारतीय भाषाओं हेतु संस्कृत मूल भाषा रही है। इस वजह से संस्कृत सारी भारतीय भाषाओं को तकनीकी शब्दावली दे सकती है।

विदेशी वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दों के हिन्दी अनुवाद के प्रसंग पर संस्कृत से बचकर व्यावहारिक शब्दों का व्यवहार करने का सुझाव भी नया नहीं है। इसका प्रयोग भी वहाँ किया गया था। वह प्रयोग हैदराबाद की कार्यशाला नाम से प्रसिद्ध है। स्वतंत्रतापूर्व आयोजित प्रस्तुत कार्यशाला में हजारों शब्द लोकप्रियता की दृष्टि से गढ़े गए। अफसोस है कि उस्मानिया विश्वविद्यालय में अंग्रेजी के माध्यम बनने के पश्चात वह पूरी उर्दू शब्दावली नष्ट्रभ्रष्ट हो गई। सुबोधता एवं लोकप्रियता दोनों गुण उसमें थे। उसमें कई त्रुटियाँ भी थीं। उसके आयोजकों में इस्लामी सांप्रदायिकता की भावना थी। वे हिन्दी एवं संस्कृत से जानबूझकर बचते थे। वह प्रवृत्ति भारतीय भाषाओं के सामान्य धर्म के अनुकूल नही रही। दूसरे, इन गढ़े हुए शब्दों में वैज्ञानिक शब्द हेतु अनिवार्य नियतार्थता

तथा परस्पर अपवर्जन के तत्व नहीं रहते थे। फिर भी अर्धतकनीकी शब्दों और तकनीकी शब्दों के रूप में उनका उपयोग अब हो सकता है।

तीसरा विकल्प यह है कि विभिन्न भारतीय भाषाओं में प्राप्त तकनीकी शब्दों का संकलन व्याख्या सहित किया जाये। उसके बाद उनमें तीन अथवा अधिक भारतीय भाषा के (इनमें भारतीय आर्य तथा द्रविड़ दोनों की प्रतिनिधि भाषायें हों) प्रयुक्त शब्दों के अनुदित शब्द के रूप में हिन्दी में स्वीकार करें। इस सुझाव पर कुछ आपत्तियाँ उठ सकती हैं। पहली यह है कि वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग ने जो शब्दावली अभी गढ़ी है उसे छोड़कर नये शब्द स्वीकार करना गलत है। लेकिन विकासशील भाषा में शब्दों पर पुनश्चिन्तन एवं बेहतर शब्दों का गठन जरूरी प्रक्रिया है। इसके अतिरिक्त नये शब्द गढ़ लेने पर अर्थ की विभिन्न छवियों के निर्णय हेतु ज्यादा सुविधा रहेगी। अभी आयोग के शब्दों के विषय में संस्कृत में बोझिल रहने की जो शिकायत है वह भी एक हद तक दूर होगी। अन्य भारतीय भाषाओं हेतु वे शब्द ज्यादा सहज भी लगेंगे।

भारतीय भाषा के अनुवाद में अंतर्राष्ट्रीय शब्दों, प्रतीकों के प्रयोग का महत्व दुहरा है। हमारी शिक्षा प्रणाली में दो तरह के माध्यम होते हैं। अर्थात् प्रारंभिक तथा माध्यमिक विद्यालयों में भारतीय भाषा के माध्यम से विषय सिखाए जाते हैं। कालिज पहुँचने पर वही विषय अंग्रेजी के माध्यम से सिखाये जाते हैं। इसके प्रत्युत्तर में सुझाव हो सकता है कि कालेज एवं स्कूल में दोनों जगह भारतीय भाषा में सीखें। तब भी विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के उच्च अध्ययन की जरूरत पड़ेगी।

अंतर्राष्ट्रीय तकनीकी शब्दों का पूर्णत: भारतीयकरण वांछनीय नहीं है। देखा गया है कि संसार की मुख्य भाषायें अब नये-नये आविष्कार एवं सिद्धांत निर्धारण के पश्चात् उनमें उद्भावित तथा गठित नये तकनीकी शब्दों को भी स्वीकार कर लेती हैं। यदि वे आविष्कार आदि अन्य भाषा भाषी प्रदेश के हों तो अन्य भाषा में प्रयुक्त नवीन तकनीकी शब्दों को भी अपना लेती हैं। पर अनुकूलन के क्रम में उन शब्दों की वर्तनी तथा उच्चारण अपनी भाषा के अनुकूल बना लेती हैं। इससे यह सुविधा प्राप्त होती है कि कोई भी वैज्ञानिक तथ्य अथवा सिद्धांत बड़ी आसानी से चर्चित हो सकता है। यही नहीं, अन्य भाषा वाले जब इस भाषा के वैज्ञानिक ग्रंथ पढ़ें तब उनकी समझ में भी आयेंगे। एलसेवियर कंपनी के बहुभाषी विज्ञान-कोशों की माला इस क्षेत्र की बड़ी उपलब्धि है। भारत में केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय ने कई वर्षों के प्रयास से भारतीय भाषा कोश निकाला है। वह प्राय: सामान्य शब्दों का है, लेकिन अत्यंत उपादेय है। अफसोस है कि इसका जितना प्रचार एवं उपयोग होना चाहिए, हो नहीं पाया है।

भारतीय भाषा में वैज्ञानिक एवं तकनीकी साहित्य के अनुवाद के विषय में संकोच तथा टीका-टिप्पणी करने वाले शायद इस बात पर ध्यान नहीं देते कि संसार के विकसित और विकासशील देश अन्य देशों में होने वाली हर अच्छी वैज्ञानिक व तकनीकी रचना का अनुवाद अपनी भाषा में कराते हैं। शोध-पत्रों का भी जरूर अनुवाद कराया जाता है। इस कार्य हेतु अनुवादक-वैज्ञानिकों का पूरा दल लगा रहता है। हमारा भारत स्वतंत्र राष्ट्र है। हमारी हिन्दी भाषा स्वतंत्र राष्ट्र की मुख्य भाषा है। इसमें संसार की नयी वैज्ञानिक उपलब्धियों का विवरण बराबर दिया जाना चाहिए।

अनुवाद-प्रणाली पर विचार करते हुए हमें दल द्वारा अनुवाद या टीम-अनुवाद की उपयोगिता समझनी चाहिए। आजकल वैज्ञानिक क्षेत्र में अनुसंधान तक टीम द्वारा ही किया जाता है। अनुवादकों का एक छोटा दल अथवा छोटी समिति अनुवाद कर सकती है।

डॉ. लोकेशचंद्र ने 'अनुवाद' पत्रिका में 'विज्ञानोदय तथा अनुवाद' शीर्षक के लेख में चीन की प्राचीन अनुवाद-प्रणाली पर प्रकाश डाला है। दसवीं शताब्दी में चीन के बौद्ध विज्ञानों ने अनुवाद की जिस प्रक्रिया को अपनाया था उसमें नौ विशेषज्ञ होते थे एवं हर प्रसंग उसमें प्रत्येक के द्वारा निरीक्षण-परीक्षण के पश्चात् ही आगे बढ़ता था। इन नौ विशेषज्ञों का क्रम इस तरह था-

1. *ई-चु (प्रधान अनुवादक) केन्द्र में स्थान ग्रहण करता था। वह संस्कृत की व्याख्या करता था।*
2. *चइ-ई (अर्थ परीक्षक) प्रधान अनुवाद के सहित निहित अर्थ पर विचार-विमर्श करता था।*
3. *चइ-वन् (पाठ परीक्षक) प्रधान अनुवादक के पाठ को ध्यानपूर्वक सुनता था तथा उसकी शुद्धता का ध्यान रखता था।*
4. *शु-त्जु-संस्कृत का विद्वान होता था। वह भी पाठ को ध्यानपूर्वक सुनता तथा संस्कृत का चीनी भाषा में लिप्यन्तरण करता था।*
5. *पि-शीइ-लिप्यन्तरित शब्दों का अनुवाद चीनी भाषा में करता था।*
6. *चो-वन् - (पाठ रचयिता) चीनी शब्दों को वाक्यों में व्यवस्थित करता था तथा उपयुक्त वाक्यों की रचना करता था।*
7. *त्सान-ई-पाठों की तुलना तथा अनुवाद की शुद्धता सुनिश्चित करता था।*
8. *खान-तिठ (संवीक्षक) फालतू अभिव्यक्तियों को निकाल देता तथा शैली को अर्थगर्भित बनाता था।*
9. *जुन् -वन् (पुनरीक्षक) सभा के सारे निर्णयों को अंतिम रूप देता था।*

यह सूचना चीन में अनुवाद-प्रविधि को दिये गये महत्व तथा गंभीरता का प्रमाण है। वैज्ञानिक एवं तकनीकी ग्रंथ के अनुवाद के क्षेत्र में पंतनगर कृषि वि.वि. का पाठ्य-पुस्तक वाला प्रयोग भी स्वीकार करने योग्य है। जैसा कि सभी जानते हैं, उस कृषि विश्वविद्यालय में कृषि तथा पशुपालन से संबंधित उपाधि-स्तरीय पाठ्यक्रम हिन्दी के माध्यम से चलता है। इसके लिए उन्हें हिन्दी में पाठ्यपुस्तकें तैयार करनी पड़ी हैं। अब भी ये तैयार की जा रही हैं। छपाई की सुविधा मिलने के पहले ही उन्हें किसी-किसी पाठ्य-पुस्तक का उपयोग करना पड़ता है। अतएव वें पुस्तक की कुछ साइक्लोस्टाइल प्रतियाँ तैयार कर लेते थे। नये गंभीर विषय की पांडुलिपियों की कुछ साइक्लोस्टाइल प्रतियाँ तैयार करके उनका परीक्षण विभिन्न तरह से कराया जाये एवं उन पर विस्तृत समीक्षा और टिप्पणी प्राप्त की जाये तो उसके बाद सम्यक् संपादन करते हुए उसी ग्रंथ का मुद्रण हो सकता है। इसमें त्रुटियाँ बहुत कम रहेंगी। इसके लिए विद्वान वैज्ञानिकों तथा भाषाविदों को ईमानदारी से परिश्रम करना पड़ेगा।

वैज्ञानिक तथा तकनीकी ग्रंथों के अनुवाद की प्रणाली पर विचार करने के पश्चात् एक ज्वलंत समस्या पर विचार करना जरूरी है। भाषा की तकनीकी पुस्तकों का स्तर बढ़ाया जा सकता है। इसके लिए पहले बनने वाली तकनीकी पुस्तकों की बिक्री झटपट होनी चाहिए। यदि बिक्री न हो, लोग न खरीदें तो फिर सुधारा हुआ संस्करण संभव नहीं होगा। केरल-भाषा-संस्थान के ग्रंथों के विषय में बिक्री का अनुभव यह रहा है कि दो तरह के ग्रंथ ज्यादा बिके हैं-1. लोकप्रिय रुचि के ग्रंथ-फिल्म, संगीत तथा खेती से संबंधित। 2. परीक्षाओं के लिए नियत। पोलिटेकनिक की परीक्षाओं में संस्थान की पाठ्य-पुस्तकें निर्धारित हैं तथा मलयालम में उत्तर लिखने की अनुमति है।

आजकल अनौपचारिक शिक्षा एवं खुले विश्वविद्यालय की शिक्षा हर जगह चल रही है। इनके कार्यक्रम में हिन्दी अथवा अन्य भारतीय भाषा के माध्यम से वैज्ञानिक तथा तकनीकी पाठ्यक्रम की योजना बनाई गई जिसका हजारों युवक-युवतियों ने स्वागत किया है। इससे भारतीय भाषा में नये वैज्ञानिक ग्रंथों के प्रकाशन की सुविधाएं बढ़ेंगी।

हमारे देश में उच्च कोटि के ऐसे वैज्ञानिकों तथा प्रौद्योगिकी के विशेषज्ञों की जरूरत है जो भारतीय भाषाओं पर गर्व करते हैं एवं भारतीय भाषा के माध्यम से भाषण देते तथा लिखते हैं। अंतर्राष्ट्रीय स्तर के भारतीय वैज्ञानिक जब विज्ञान पर हिन्दी में भाषण देंगे तभी हिन्दी की गरिमा बढ़ेगी।

साहित्य अथवा काव्य अनुवाद के भेद

काव्यानुवाद का विभाजन दो दृष्टियों से किया जा सकता है-

(1) भाषा की दृष्टि से,

(2) रूप अथवा माध्यम की दृष्टि से।

भाषा की दृष्टि से (अ) एक भारतीय भाषा की कविता का अन्य भारतीय भाषा में, (ब) प्राचीन भाषा की कविता का आधुनिक भाषा में, (स) विदेशी भाषा की कविता का देशी भाषा में।

रूप की दृष्टि में- (1) गद्य का गद्य में अनुवाद, (2) पद्य का पद्य में अनुवाद। इसके भी विभिन्न रूप हैं-(अ) मूल पद्य का मूल छंद में अनुवाद, (ब) मूल पद्य का लक्ष्य भाषा के छंद में अनुवाद, (स) मूल पद्य का मुक्त छंद में अनुवाद।

रूसी विद्वान लोटमैन के अनुसार काव्यानुवाद की चार दृष्टियाँ होती हैं-

(1) **विषय प्रधान दृष्टि-** इसमें अनुवादक की दृष्टि कविता की विषयवस्तु पर प्रमुख रूप से केन्द्रित रहती है। प्रमुख लक्ष्य है-स्रोत भाषा के काव्य की विषय वस्तु को लक्ष्य भाषा की रचना में संप्रेषित करना।

(2) **संरचनात्मक दृष्टि-** इसमें अनुवाद की दृष्टि काव्य की संरचना पर केन्द्रित रहती है। इसमें अनुवादक कविता की इकाइयों के परस्पर संबंध पर बल देते हुए उनका विश्लेषण-संश्लेषण करना तथा संघटनात्मक बनावट के आधार पर काव्यानुवाद पेश करना अपना लक्ष्य मानता है।

(3) **भाषिक प्रधान दृष्टि-** इसमें अनुवादक की दृष्टि कविता की भाषिक विशेषताओं पर केन्द्रित रहती है, जैसे-छंदयोजना, शब्द-चमत्कार, अलंकार-योजना आदि। इसी प्रकार वह भाषा-व्यवस्था के किसी एक स्तर पर सापेक्षतया ज्यादा ध्यान देता है-यथा ध्वनि-स्तर, शब्द-स्तर, वाक्य-संरचना-स्तर आदि।

(4) **साहित्येत्तर-प्रधान दृष्टि-** इसमें अनुवादक की दृष्टि काव्य-संदर्भ की बजाय साहित्येतर संदेश पर केन्द्रित रहती है। वह मूल कविता के धार्मिक, मनोवैज्ञानिक, समाज-वैज्ञानिक आदि तत्वों को अनूदित कविता में संप्रेषित करने पर ज्यादा बल देता है।

लेऐवेरे ने काव्यानुवाद के कुछ और प्रकार बताए हैं-

(क) **स्वनिमिक अनुवाद-** इसमें स्त्रोतभाषा की कविता की ध्वनि को लक्ष्य भाषा की कविता में संप्रेषित किया जाता है। इसमें ध्वनिव्यवस्था की प्रधानता रहती है।

(ख) **शाब्दिक अनुवाद-** इसमें अनुवादक स्त्रोत-भाषा की कविता में प्रयुक्त शब्दों की प्रतिस्थापना लक्ष्य भाषा के शब्दों से करता है। इस शब्द-प्रतिशब्द अनुवाद से मूल कविता का भाव-सौंदर्य, अर्थ-व्यंजना तथा वाक्य-विन्यास खंडित हो सकते हैं।

(ग) **छंदोबद्ध अनुवाद-** इसमें अनुवादक स्रोतभाषा की कविता में प्रयुक्त छंदयोजना को अनूदित रचना में रूपांतरित करता है। कभी-कभी यह खिलवाड़ सा हो जाता है।

(घ) **अनुप्रासपरक अनुवाद-** इसमें अनुवादक स्रोतभाषा की छंदयोजना के साथ अनुप्रास को भी लक्ष्यकृति में स्थान देता है।

(ड.) **मुक्त छंदपरक अनुवाद-** इसमें अनुवादक मूल कविता की संरचना, लय, यदि आदि का बंधन स्वीकार करता है। लेकिन छंद-योजना का अविकल अनुकरण नहीं करता।

(च) **गद्यानुवाद-** इसमें अनुवादक की दृष्टि मूल कविता के अर्थपक्ष पर केन्द्रित रहती है।

काव्यानुवाद पर और एक दृष्टि भी हो सकती है-

(1) *मूल भाषा की कविता का लक्ष्यभाषा में अनुवाद।*

(2) *एक भाषा की कविता के भाषांतर से दूसरी भाषा में अनुवाद।*

अनुवाद तथा भाव-संप्रेषण की दृष्टि से अब काव्य के एक घटक (एकक) पर विचार करेंगे। पहला अंग वर्ण-संघटना एवं उसकी ध्वनि है। मूल के ध्वनिमय प्रभाव को अनुवाद में लाने की बात विचारणीय है। भारतीय भाषाओं के परस्पर अनुवाद में तत्सम शब्दों की समानता ध्वनिसाम्य लाने में मदद देती है लेकिन देशी शब्दों का ध्वनिसाम्य अनुवाद में लाना कठिन है। उदाहरणार्थ तमिल कविता में द्रविड़ शब्दों की भरमार होती है। उनका ध्वनि प्रभाव तत्सम प्रधान हिन्दी शब्दों में लाना कठिन है। जहाँ भारतीय कविता के वर्णों एवं मात्राओं पर जोर है वहाँ अंग्रेजी में एकाधिक वर्ण मिलकर सिलाबिल बनते हैं और सिलाबिल पर जोर होता है।

वर्ण-संघटना के बाद शब्द का घटक आता है। मूल कविता के शब्दों का अर्थ बताने वाले लक्ष्य भाषा के शब्दों का प्रयोग अनुवाद में किया जाता है। सरसरी दृष्टि से देखने पर यह सरल लग सकता है क्योंकि शब्दकोष में अर्थ मिल सकता है। पर अर्थ की सांस्कृतिक एवं रागात्मक भूमिकाएं होती हैं। हालांकि मानवीय दृष्टि से सभी भाषाएं समान हैं तथापि भौगोलिक तथा ऐतिहासिक कारणों से सांस्कृतिक अंतर होता है। रागात्मक भावों को अभिव्यंजित करने की शब्दावली भाषा-भाषा में बदल सकती है। इसी प्रकार कोशगत शब्दों में प्रसंगानुसार शब्द का चयन करना पड़ता है। औचित्य इसकी सर्वप्रथम कसौटी है।

उदाहरण-

अंग्रेजी		**हिन्दी**
World	:	*जगत, विश्व, संसार, दुनिया, जहाँ*
Love	:	*प्रेम, प्यार, स्नेह, ममता, मुहब्बत, इश्क*
Lord	:	*प्रभु, स्वामी, मालिक, खुदा, आश्रयदाता।*

काव्य में शब्दों के सिर्फ अभिधार्थ से काम नहीं चलता। उसमें लक्षणा तथा व्यंजना का प्रयोग किया जाता है। इनके ही विकसित रूप प्रतीक तथा मिथक में दिए जाते हैं। प्रतीक तथा मिथक प्रत्येक देश के प्राचीन इतिहास, धर्म आदि से जुड़े रहते हैं। जैसे पश्चिमी काव्य में 'वीनस' सौंदर्य का, 'एचिलस' शक्ति का, 'जूडास' धोखेबाज नमकहराम का एवं 'वाटरलू' पराजय का प्रतीक है। भारतीय परिप्रेक्ष्य में इन प्रतीकों की संगति नहीं बैठती। यहाँ तो 'मन्मथ', 'भीम', 'शकुनि',

कुरुक्षेत्र आदि प्रतीक का काम देते हैं। भारतीय आचार-परंपरा से संबद्ध श्राद्ध, सप्तसदी, आरती, सिंदूर, हवन आदि शब्दों के समकक्ष शब्द पश्चिमी भाषाओं में नहीं मिल सकते।

अलंकार भी शब्दार्थ से जुड़े हैं। स्पष्ट है कि मूल के शब्दालंकार अनूदित काव्य में नहीं आ सकते। उसमें पर्याय ही आते हैं। अर्थालंकार तो आ सकते हैं। लेकिन हर भाषा के कवि-समय, सांस्कृतिक रूढ़ियाँ आदि अलंकार की चारुता की कसौटी होते हैं। उदाहरण गज की गति, चंद्रमा का कलंक, गंगा की स्वर्गति आदि भारतीय वातावरण की रूढ़ियाँ हैं। इनका इसी रूप में अनुवाद विदेशी भाषा में चारुता थोड़े ही ला सकता है।

छंद की बात बड़ी महत्वपूर्ण है। छंद शब्द संस्कृति के 'छद्रि' धातु से व्युत्पन्न माना गया है। यह धातु दो अर्थों में प्रयुक्त है-आवरण तथा आव्हाद। आवरण के अर्थ में छंद शब्दों को सुसज्जित तथा सुरक्षित रखता है। आव्हादन का धर्म छंद के ताल-लय व संगीत तत्व से निबाहा जाता है। अत: छंदोबद्ध मूल कविता को लक्ष्यभाषा में भी छंदोबद्ध रूप में पेश करना ही वांछनीय माना जाता है। जहाँ मूल भाषा के छंद से लक्ष्यभाषा के छंद मेल नहीं खाते वहाँ यह कठिन रहता है। विदेशी भाषाओं से भारतीय भाषा में अनुवाद एवं भारतीय भाषा से विदेशी भाषा में अनुवाद इस समस्या के कारण कठिन होता है। भारतीय भाषाओं के विषय में भी यह लागू है। उदाहरणार्थ संस्कृति के भृजंगप्रयात, वसंततिलका आदि छंद आधुनिक हिन्दी काव्य के प्रारंभिक युग के कवियों हेतु अनुवाद के अनुकूल रहे। लेकिन छायावाद तथा अगले वादों के युग में हिन्दी हेतु मात्रिक छंद, पश्चिमी छंद तथा मुक्त छंद ही अनुकूल निकले। इसी तरह संस्कृत छंद में लिखी हिन्दी रचनाएं मलयालम में उसी छंद में अनूदित हो सकती हैं। लेकिन कवित्त, सवैया, दोहा आदि मात्रिक छंद मलयालम के अनुकूल नहीं पड़ते।

काव्यानुवाद की विभिन्न सीमाओं को ध्यान में रखकर जेम्स होल्म्स ने बताया है कि काव्य का अनुवाद मूलत: व्याख्या है। उनके अनुसार कविता के अनुवाद के विभिन्न स्तर काव्यानुवाद से लेकर कविता की आलोचना तक विभिन्न रूप धारण करते हैं-

(क) गद्यानुवाद	**(ख)** पद्यानुवाद
(अ) लयात्मक	*(अ) स्वतंत्र पद्यानुवाद*
(आ) व्याख्या/टीका	*(आ) अनुकरण*
(इ) आलोचना	*(इ) कविता से प्रभावित कविता*
	(ई) प्रतिध्वनि कविता

अतिलघु-उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न अनुवाद के भेद बताइये।

उत्तर- अनुवाद के चार भेद हैं-

(1) शाब्दिक अनुवाद,

(2) शब्द प्रति शब्द अनुवाद,

(3) भावानुवाद,

(4) छायानुवाद ।

प्रश्न अनुवाद का क्षेत्र बताइये।

उत्तर- अनुवाद का क्षेत्र बहुत व्यापक है, जो इस तरह है-

(1) वार्तालाप का क्षेत्र,

(2) पत्राचार,

(3) धार्मिक क्षेत्र,

(4) न्यायालय,

(5) कार्यालय क्षेत्र,

(6) शिक्षा का क्षेत्र,

(7) सांस्कृतिक संबंध,

(8) अन्तर्राष्ट्रीय विज्ञान,

(9) विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी,

(10) संचार माध्यम ।

प्रश्न अनुवाद के तीन स्वरूपों के नाम लिखिए।

उत्तर- (1) शाब्दिक अनुवाद,

(2) भाषानुवाद,

(3) पर्याय के आधार पर अनुवाद ।

प्रश्न अनुवाद-प्रक्रिया के तीन सोपान के नाम लिखिए।

उत्तर- (1) विश्लेषण,

(2) अन्तरण तथा,

(3) पुनर्गठन ।

प्रश्न अनुवादक के लिए किन तीन चीजों का ज्ञान आवश्यक है?

उत्तर- (1) स्त्रोत भाषा का,

(2) लक्ष्य भाषा का,

(3) विषय का ।

प्रश्न अनुवाद क्या है?

उत्तर- एक भाषा से दूसरी भाषा में किसी भाषा के रूप का रूपांतरण अनुवाद है ।

प्रश्न अनुवाद के प्रकार लिखिए।

उत्तर- शाब्दिक अनुवाद, शब्द प्रति शब्द अनुवाद, भावानुवाद, छायानुवाद ।

प्रश्न अनुवाद कला है या विज्ञान।

उत्तर- अनुवाद कला है ।

महत्त्वपूर्ण वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्र. भाषाविद् नायडा के अनुसार, अनुवाद के स्वरूप हैं-

(अ) दो (ब) तीन (स) चार (द) पाँच। **उत्तर-** *(ब)।*

प्र. 'ब्लैक' का शाब्दिक अनुवाद है-

(अ) सफेद (ब) लाल (स) काला (द) पीला। **उत्तर-** *(स)।*

प्र. "अनुवाद प्रायः उतना ही प्राचीन है जितना मूल लेखन और उसका इतिहास भी उतना ही भव्य और जटिल है जितना साहित्य की किसी दूसरी शाखा का है।" यह परिभाषा दी है-

(अ) डास्टर्स ने (ब) थ्योडोर एच. सेवरी ने

(स) सेपिर ने (द) डॉ. भोलानाथ तिवारी ने। **उत्तर-** *(ब)।*

प्र. मूलकृति के 'सार' का अनुवाद मात्र होता है?

(अ) टीकानुवाद में (ब) सारानुवाद में

(स) भाषिक संरचना में (द) अनुक्रिया में। **उत्तर-** *(ब)।*

प्र. 'अनुव्याख्या' शब्द का प्रयोग किया है?

(अ) डॉ. सतीश कुमार रोहरा ने (ब) ब्रील ने

(स) डास्टर्स ने (द) सेपिर ने। **उत्तर-** *(अ)।*

प्र. "अच्छा अनुवाद एक पुनर्जनन ही है।" यह कथन है-

(अ) विलियमोविल का (ब) आज्ञेय का

(स) सेपिर का (द) नायडा का। **उत्तर-***(अ)।*

प्र. कला, शिल्प और विज्ञान तीनों की मिली-जुली प्रक्रिया है-

(अ) अनुवाद (ब) प्रसंग (स) शब्द (द) अभिधा। **उत्तर-***(अ)।*

प्र. अनुवाद के लिए निम्न दो भाषाओं की आवश्यकता होती है-

(अ) अंग्रेजी एवं हिन्दी (ब) संस्कृत एवं हिन्दी

(स) स्रोत एवं लक्ष्य भाषा (द) इनमें से कोई नहीं **उत्तर-** *(स)*